लेखक
विमल मित्र

रूपान्तर
योगेन्द्र चौधरी

आखिरी पन्ने पर देखिए

प्रियवर मणिशंकर मुखोपाध्याय 'शंकर' को

प्राक्कथन

1945 ईसवी के पाँच अगस्त को हिरोशिमा शहर में अणुबम का विस्फोट हुआ। यह आज से अट्ठाईस वर्ष पहले की घटना है, और ठीक उसी दिन इस कलकत्ता शहर में इस कहानी के नायक लोकनाथ ने एक संपन्न परिवार मे जन्म-ग्रहण किया।

लोकनाथ के जन्म और अट्ठाईस वर्ष पहले के उस अणुबम-विस्फोट के बीच कोई जोड़नेवाली कड़ी थी या नहीं, मालूम नहीं। तब हाँ, लोकनाथ जब बड़ा हुआ तो दुनिया के इस घनघोर पाप का ब्यौरा पढ़कर उसके मन में भी एक अजीब प्रतिक्रिया जगी। उसे लगा कि अट्ठाईस वर्ष पूर्व मनुष्य ने जो पाप किया है उसके लिए किसी-न-किसी को अनिवार्यत: अशौच का पालन करना होगा। समस्त मानव-जाति की ओर से उसने एक दिन एक महान् अशौच की शुरुआत की। ढाई हजार वर्ष पूर्व इस देश का एक राजकुमार वैभव, विलास, सिंहासन—सब-कुछ त्यागकर जिस प्रकार रास्ते पर निकल आया था, लोकनाथ भी उसी प्रकार इस युग मे वैभव और विलास त्यागकर रास्ते पर निकल आया। दोनों व्यक्तियों का उद्देश्य एक ही था—मानव-जाति का कल्याण।

उस युग में कपिलवस्तु नगर के राजकुमार को अथक तपस्या के पश्चात् निर्वाण की प्राप्ति हुई थी। सिद्धार्थ एक दिन तथागत बुद्धदेव हो गये थे।

लेकिन लोकनाथ ? इस कहानी का लोकनाथ क्या अंतत: लोकनाथ हो पाया था ? इस युग मे कोई हो सकता है क्या ? इस विज्ञान-प्रधान भौतिकवादी आणविक युग में क्या यह संभव है ?

लोकनाथ के अशौच-पालन की कठिन साधना की ही कहानी है

'आखिरी पन्ने पर देखिए' की कहानी। बड़ी बात यह नहीं है कि उस लड़ाई में उसे सफलता हासिल हुई थी या उसका अंत व्यर्थता में हुआ था, बड़ी बात है लोकनाथ का संग्राम। जो व्यक्ति नारायण को सारथि बनाता है वह अक्षौहिणी सेना से भयभीत नहीं होता है। संग्राम भी कभी एक दिन अथवा एक ग्रन्थ में समाप्त नहीं होता है। और, उस संग्राम का फलाफल अंत में जय या पराजय होगा—वर्तमान काल इसके बारे में भविष्यवाणी नहीं कर सकता, क्योंकि न्यायधीश का अंतिम मत कभी प्रथम पृष्ठ पर लिखा हुआ नहीं रहता है, रहता है अंतिम पृष्ठ की अंतिम पंक्ति में।

इसलिए यह जानने के लिए कि लोकनाथ वास्तव में लोकनाथ हो पाया था या नहीं, महाकाल के महान् इतिहास के अंतिम पृष्ठ को देखना पड़ेगा। वह महाकाल का भी अंतिम पृष्ठ है और इतिहास का भी।

उसी अंतिम पृष्ठ में लिखा हुआ है कि जीत किसकी हुई : नारायण की अथवा अक्षौहिणी सेना की ?

विमल मित्र

एक विख्यात समालोचक का कहना है : कहानी के माध्यम से कहानी लिखना बड़ा ही आसान है लेकिन अ-कहानी से कहानी कितने व्यक्ति लिख सकते हैं ?

यह तो बहुत-कुछ बालों को बिना भिगोये स्नान करना जैसा है। बालों को भिगोकर स्नान तो हर कोई कर सकता है, लेकिन बिना बाल भिगोये स्नान करना ? जिन्दगी-भर सिर्फ़ कहानी-उपन्यास ही लिखता आ रहा हूँ, लेकिन तब क्या पाठकों को सिर्फ़ कहानी ही सुनायी है ? बचपन में 'कथा-सरित्सागर' पढ़ा है, उसके बाद 'दादी अम्मा की भोली', फिर बंकिमचंद्र, उसके बाद रवीन्द्रनाथ और फिर शरतचंद्र। उन्हें पढ़ते वक्त ऐसा महसूस नहीं हुआ कि कहानी पढ़ रहा हूँ। पढ़ते वक़्त हमेशा यही अहसास हुआ है कि सारी बातें मेरी ही बातें हैं, अंतर केवल इतना ही है कि इसकी रचना यद्यपि दूसरे व्यक्ति की क़लम से हुई है, लेकिन इसका नायक वास्तव में मैं ही हूँ। मेरे अलावा और कोई नहीं।

लेकिन इस बार, इस उपन्यास के लिखने के वक़्त सिर्फ़ यही अहसास हो रहा है कि जिसकी कहानी मैं लिख रहा हूँ, जिसका नाम श्री लोकनाथ राय था, जो अभी उस दिन तक 'ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स' का मैनेजिंग डाइरेक्टर था, जिससे साथ एक ही स्कूल में बहुत सालों तक पढ़ा था, जो एम० ए० में फ़र्स्टक्लास-फर्स्ट आया था और जो क्योंकि बड़े आदमी का लड़का था इसलिए अहंकार से चूर रहता था—उसकी कहानी पढ़ते समय क्या कोई गलती करेगा कि मैं सिर्फ़ कहानी ही कह रहा हूँ ?

सच-सच कहूँ, यह मेरे भाग्य की विडंबना है। मैंने आज तक जो कुछ लिखा है, उसके बारे में पाठक हमेशा यही पूछताछ करते हैं—क्या यह सच्ची घटना है ?

हर बार यह सवाल मुझे बड़ा बुरा लगता है। हर बार डर होता है कि शायद मैंने वास्तव में कहानी ही लिख डाली है, वरना यह प्रश्न पाठकों के मन मे पैदा ही क्यों होता ? इस बार भी इस उपन्यास को पढ़कर कोई कहीं यही सवाल न कर बैठे—क्या यह सच्ची घटना है ? मैं अभी से भयभीत हूँ, हो सकता है कि इस बार भी उसी प्रश्न के आमने-सामने खड़ा होना पड़े। लेखक काल्पनिक उपन्यासों को महत्त्वपूर्ण बनाने के खयाल से उस जमाने में कोष्ठ में लिखकर सूचित कर दिया करते थे कि 'यह कहानी सच्ची घटना पर आधारित है', पर इस युग मे वह नियम लागू नहीं है। इस युग में गढ़ी हुई कहानी सच्ची घटना पर आधारित है या नही, इस सवाल का जवाब देते-देते लेखक परेशान हो उठता है।

नहीं; यह उपन्यास किस्सा-कहानी नही है। क्योंकि लोकनाथ राय के जीवन मे ही किसी प्रचलित कहानी का उपादान नही है, इसलिए लोकनाथ पर कोई कहानी गढ़ी ही नहीं जा सकती। फिर भी लोकनाथ के बारे मे जो यह उपन्यास लिख रहा हूँ, इसके पीछे एक घटना का हाथ है। लोकनाथ वास्तव में हमारे बीच एक व्यतिक्रम था। इस परम्परित दुनिया में पहले भी बहुतों ने व्यतिक्रम होने की कोशिश की है—किसी ने दाढ़ी रखकर और किसी ने दाढ़ी मुँड़वाकर, किसी ने मूँछे रखकर, किसी ने मूँछें कटाकर, किसी ने नाभिदर्शना साडी पहनकर, किसी ने स्लीवलेस ब्लाउज पहनकर, और किसी ने नंगे रहकर, व्यतिक्रम बनने की कोशिश में उस जमाने में बहुतों ने मेमों से शादी की थी, किसी-किसी ने ईसाई धर्म को स्वीकार लिया था। आज जिस तरह अनेकों कम्युनिस्ट हो जाते हैं, उन दिनों ब्रह्मानंद-केशवसेन की जमात में नाम लिखाकर ब्राह्म हो जाते थे। कोई अंग्रेजी-कट बाल रखता था और कोई बाल मुँड़वा लेता था तो कोई-कोई लम्बी जुल्फें रखा करता था।

लेकिन हम लोगों के इस लोकनाथ ने उस पथ का अवलंबन नही किया था। वह 'ऑटो इंजिनीयरिंग वर्क्स' का मैनेजिंग डाइरेक्टर होकर बड़े ही आराम से जीवन जी रहा था। लेकिन अचानक एक दिन सब उलट-फेर हो गया। 1945 ईस्वी के पाँच अगस्त की सुबह आठ बजकर सोलह मिनट की एक घटना ने उसके जीवन को दूसरी दिशा में मोड़ दिया, उसके-

जीवन को बरबाद कर डाला।

इतने दिनों के बाद लोकनाथ को लेकर कहानी लिखने क्यों बैठा हूँ, उसका भी निश्चय ही कोई कारण है। वर्धमान से ट्रेन से आ रहा था। दफ़्तर के काम से गया था और ब्रांच ऑफ़िस में दिन-भर दम लेने की फ़ुरसत नहीं मिली थी। तीसरे पहर ट्रेन पर इसलिए सवार हुआ था कि शाम होते-न-होते कलकत्ता पहुँच जाऊँगा। जब मैं चढ़ रहा था तो गाड़ी भरी हुई थी। ज्यों ही डिब्बे में घुसा, बहुत-से लोग वर्धमान स्टेशन पर उतर गये। हम लोग तीन-चार मुसाफ़िर रह गये। हम लोग परस्पर बात-चीत नहीं कर रहे थे। कुछ देर तक मैं खिड़की से आसमान की ओर ताकता रहा। उससे भी ऊब महसूस होने लगी। उसके बाद अपने साथ जो किताब लाया था, उस पर आँखें टिका दीं। कुछ क्षण बीतने के बाद वह अच्छी नहीं लगी।

बगल की बेंच पर एक अजनबी चुपचाप बैठा था। उसके हाथ के पास एक मुड़ा हुआ अखबार पड़ा था।

"आपका अखबार देख सकता हूँ?" मैंने पूछा।

भले आदमी ने तुरंत ही विनम्रता के साथ मेरी ओर अखबार बढ़ा दिया और कहा, "लीजिए।"

दिन-भर अखबार पढ़ने का वक़्त नहीं मिला था। अवश्य ही यह पता था कि पढ़ने लायक जैसा कोई समाचार अखबारों में नहीं रहता है। समाचार रहेगा ही क्या! वही बंगला देश शरणार्थियों की भीड़, हत्याएँ, चीज़ों की कीमतों में वृद्धि, राजनीतिक नेताओं के परस्पर-विरोधी भाषण और दो तीन मजेदार तसवीरें। इन्हीं समाचारों को हमें छब्बीस पैसे की लागत में खरीदना पड़ता है—वे समाचार ही हमारी आधुनिक सभ्यता की एक अनिवार्य और अवश्यंभावी क्षतिपूर्ति बनकर खड़े हो गये हैं। इसी क्षतिपूर्ति से हम अपने आधुनिक जीवन के सुख-दुःख, हँसी-रोदन, चिंता भावना, शिक्षा-अशिक्षा, पाप-पुण्य—सब खरीदते हैं।

लेकिन सहसा एक समाचार मेरे सामने ठिठककर खड़ा हो गया।

यह कौन-सा लोकनाथ है? यह लोकनाथ किस समाज का है? यह हम लोगों का परिचित लोकनाथ है या दूसरा ही?

बड़े ही ध्यान से मैं समाचार पढ़ने लगा—

"कल शाम पष्ठीतल्ला रोड के चौराहे पर एक संघर्ष के फलस्वरूप एक अजनबी युवक घायल हो गया। निकटवर्ती थाने मे सूचना भेजने के बाद घटना-स्थल पर पुलिस आयी और उस घायल युवक को अस्पताल भेज दिया गया। जानकार सूत्रों से पता चला है कि उस युवक का नाम लोकनाथ राय है।"

इसके बाद लिखा हुआ था—'टर्न टु बैक पेज' यानी 'आखिरी पन्ने पर देखिए।'

मैं जल्दी-जल्दी आखिरी पन्ने की तलाश करने लगा। लेकिन दनादन पन्ने उलटने के बाद भी आखिरी पन्ना नही मिला। एक से आठ पृष्ठ तक तो थे, पर नौ और दस पृष्ठ गायब थे, जैसे किसी ने फाड़ लिये हों।

जिस आदमी का अखबार था, उससे मैंने पूछा, "भाई साहब, आपके अखबार का आखिरी पन्ना कहाँ गया?"

उस भलेमानस ने स्वयं भी खोज-पड़ताल की। आखिरी पन्ना कहाँ गया? आसपास खोजकर देखा। बैंच के नीचे, सूटकेस के नीचे, कही नहीं मिला। हो सकता है कि आने के समय घर मे ही किसी ने फाड़ डाला हो।

"औरतों का काड तो...,' उसने कहा।

भले आदमी ने एक किस्म के तिरस्कार की मुद्रा ओढ़कर उस घटना को उड़ा देने की कोशिश की। लेकिन मैं उस घटना के प्रति अवज्ञा का भाव नही ला सका, क्योंकि किसी ज़माने मे लोकनाथ हम लोगों का अंतरंग मित्र था। 'ऑटो इंजिनीयरिंग' का जो मैनेजिंग डाइरेक्टर था, एम० ए० में फ़र्स्टक्लास-फर्स्ट होने के बावजूद जो सड़कों की धूल छानता रहा है, गाड़ी रहने के बावजूद जो पैदल कलकत्ता शहर में घूमता-फिरता रहा है, यह क्या वही लोकनाथ है? और 'लोकनाथ' नाम पर किसी का कॉपीराइट तो है नही। हज़ारों-लाखों लोकनाथ हो सकते है, हज़ारों-लाखों लोकनाथ राय भी हो सकते हैं। अखबार का आखिरी पन्ना जब तक नही मिल जाता है, इस रहस्य का पता नही चलेगा। अब इसका आखिरी पन्ना कहाँ मिलेगा? कलकत्ता के हावड़ा स्टेशन जब तक नही पहुँच जाता हूँ, मिलने का कोई चारा नही है।

"मैं आपकी कौन-सी भलाई कर सकता हूँ, बाबू ? मेरी औकात ही क्या है ! भीड़ में बहुत-से लोग पैसा दिये बग़ैर चल देते हैं, अकेला त्रैलोक्य चारों तरफ सभाल नहीं पाता है।"

लोकनाथ ने कहा, "वाह, दालमोठ खाने में बड़ी मजेदार है !"

जादूगोपाल ने उस बात का जवाब नहीं दिया और लौटकर कहा, "उस दिन बाबू, एक कांड हो गया...।"

"कांड ? क्या कांड ?"

जादूगोपाल बोला, "उस दिन एक लड़की मेरे पास आयी थी।"

लोकनाथ ने आश्चर्य से पूछा, "लड़की ? तुम्हारे पास लड़कियाँ क्यों आती हैं ? पकौड़ी खाने के लिए ?"

"नहीं ! पकौड़ियाँ खाने तो बहुत-सी लड़कियाँ आती हैं। फिर आप से कहता ही क्यों ? वैसी बात नहीं है। वह मेरे पास नौकरी के लिए आयी थी।"

इतना कहकर घटना की अस्वाभाविकता पर जादूगोपाल ने कहकहा लगाया।

हँसी रोककर वह बोला, "वह आज फिर आयेगी।"

"तुम्हारे यहाँ जगह है क्या ?" लोकनाथ ने पूछा।

जादूगोपाल हँसने लगा। "क्या कह रहे हैं आप ! वह लड़की लेकिन बहुत अभाव में है, कहीं कोई चांस नहीं मिला है, यही वजह है कि अंत में मेरे पास आयी है।"

जादूगोपाल ने बातें अवश्य ही बतायीं, मगर वह अब भी हँस रहा था। मजेदार बातें कहने के वक़्त लोग जिस तरह से हँसा करते हैं, उसी किस्म की वह हँसी थी।

जादूगोपाल ने कहना जारी रखा, "इसी से समझ सकते हैं कि हमारे देश की हालत कैसी है।"

लोकनाथ ने कहा, "तुम हँस रहे हो, जादूगोपाल ! मेरा मन खराब हो गया।"

फिर उसने जेब से चार आना पैसा निकाला और जादूगोपाल को ओर बढ़ा दिया।

जादूगोपाल ने दोनों हाथ जोड़कर लज्जा से अपनी जीभ काटी। "छि-छि:, लज्जित मत करें ! आप यह क्या कर रहे हैं !"

"पैसा नही लोगे ? क्या कह रहे हो, जादूगोपाल ? तुम काम-धंधे के लिए बैठे हो या तुमने लंगर खोला है ? मेरे चार आने पैसे बचाकर तुम क्या मेरा दुःख दूर कर सकते हो ? लो !" और लोकनाथ ने उसे डांटा।

जादूगोपाल अब विरोध करने का साहस न कर सका। पैसा ले लिया। लेकिन वह मन-ही-मन बुडबुडाने लगा, "आपने जो मेरी भलाई की है बाबू, उसका कर्ज मैं जिन्दगी-भर नही चुका सकूंगा।"

लोकनाथ तब खड़ा हो चुका था। "चलूं !" उसने कहा।

और वह सामने की गतिशील भीड़ मे सम्मिलित हो गया। तब शहर मे शाम की खासी चहल-पहल मची हुई थी। उधर डलहौजी स्क्वायर के दफ्तरो में छुट्टी हो चुकी थी। हरिद्वार की गंगा के पत्थर के ढोंके की तरह आदमी का रेला लुड़कता-सा सड़क पर चल रहा है। लोकनाथ के चेहरे जैसे सभी के चेहरे है। सभी लोकनाथ के ही टुकड़े है। यानी एक ही लोकनाथ हजारों लोकनाथ बनकर कलकत्ता मे बिखर गया है।

जादूगोपाल की दुकान के काउंटर पर तब भीड़ बहुत-कुछ कम हो गयी थी। लेकिन भीड़ का यह कम होना सामयिक है। थोड़ी देर बाद ही सिनेमा खत्म होगा। सिनेमा के सामने तब आदमी सरी-सृप जैसे रेंगने लगेंगे। सरी-सृप जब आँखों से ओझल हो जायेंगे, सिनेमा के दरवाजे नये सिरे से खुलेंगे और तब जादूगोपाल माल सप्लाई करते-करते परेशान हो जायेगा।

'बाबू साहब !"

'नही-नहीं', कहने के बावजूद खरीद-फरोख्त मे व्यस्त त्रैलोक्य ने तब कढाई मे नया माल डाल दिया था। गरम तेल मे पड़ते ही आलू के बरे विशाल फफोले की तरह फूल जाते थे और देखते-न-देखते हल्दी रंग गुलाबी रंग में परिवर्तित हो जाता था।

"बाबू साहब !"

बाहर के ग्राहकों को संभालते हुए जादूगोपाल ने सामने की ओर देखा और अचम्भे मे आ गया। वही ड्राइवर है। थोड़ी दूरी पर वही गाड़ी

खड़ी है। गाड़ी जितनी लंबी है उतनी ही खूबसूरत। और गाड़ी के अन्दर वह बूढ़ी औरत बैठी है।

"यहाँ भैयाजी आये थे, बाबू ?"

बात सुनते ही याद हो आया। "हाँ-हाँ, लोकनाथ बाबू के बारे मे पूछ रहे हो न ?"

'हाँ; माँजी आयी हैं, गाड़ी में बैठी हैं। माँजी ने मुझे भैयाजी को खोजने भेजा है।"

जादूगोपाल बोला, "भैयाजी थे तो यहीं, मगर थोड़ी देर पहले चले गये है।"

'अभी कहाँ होंगे, बता सकते हैं बाबू ?"

"कह नहीं सकता ड्राइवर जी, तुम्हारे बाबू का कोई अता-पता नहीं रहता न।"

ड्राइवर अब रुका नहीं। जिधर से आया था, फिर उधर ही चला गया। चौरंगी के आस-पास की सड़क। उस पर दफ्तरों मे छुट्टी होने की भीड़।

भीड़ न केवल आदमियों की है बल्कि गाड़ियों की भी है। कितनी ही तरह की गाड़ियों का ठाठ-बाट ! ड्राइवर को गली के अन्दर की पकौड़ी की दुकान मे भेजकर वसुमती देवी गाड़ी की पिछली सीट पर खामोश बैठी थीं और आदमियों और गाड़ियों की विशाल भीड़ की ओर निहार रही थी।

खोजा जाये तो उन्नीसवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इस कहानी का सूत्र मिल सकता है। लोकनाथ को इस युग का युवक कहकर ही रेखांकित करना बेहतर होगा। कहा जा सकता है कि वह बगीचे की जड़हीन अमरबेल है।

यानी घर में जब प्रथम नाती ने जन्म-ग्रहण किया, वसुमती देवी बोलीं, "मुन्नी, तेरी किस्मत अच्छी है, मुझसे तेरी किस्मत अच्छी है। मेरे पहले लड़की हुई थी और तेरे लड़का हुआ है। देखना, यह लड़का

तेरी तकदीर बदल देगा, तेरे अच्छे दिन आयेंगे...।"

हालाँकि वसुमती देवी के भाग्य में क्या कमी थी, उस वक्त यह कोई नहीं जानता था। उतना बड़ा मकान, इतनी सारी गाड़ियाँ, नौकर-चाकर, दाई और दरबान जिसके घर में हों, उसका भाग्य खोटा है, इस बात पर कौन विश्वास करेगा ?

लोकनाथ जब छोटा था, उसकी उम्र दो साल की थी, उसी समय से उसके लालन-पालन की समस्या के कारण नौकर-नौकरानी बेहद परेशान रहते थे। एक नौकरानी बच्चे को अपने पाँवों पर लिटाकर सरसों के तेल की मालिश किया करती थी। एक दिन घरेलू डॉक्टर ने यह देख लिया।

"अयँ-अयँ, यह क्या कर रही हो ? तुम्हें सरसों के तेल की मालिश करने को किसने कहा है ?"

नौकरानी अपने सर पर घूँघट खींचती हुई धीमे स्वर में बोली, "हुजूर, गौराग दीदी ने...।"

"गौराग दीदी ने ! वह कौन है ?"

डॉक्टर को राय बाबू से बहुत पैसे मिलते थे। वह आसानी से छोड़ने वाला जीव नहीं था।

"गौरांग दीदी कौन है ?" उसने पूछा।

मुनीम की बुलाहट हुई। बुढ़िया मुनीम की। बुढ़िया मुनीम ज्योंही आयी, डॉक्टर साहब ने कहा, "मुन्ने को सरसों का तेल क्यों मालिश किया जाता है ? सरसों के तेल से मालिश करने को किसने कहा है ?"

बुढ़िया मुनीम ने उसी प्रश्न को दुहराया, "अजी ऐ सिद्धेश्वरी, तेरा नाम सिद्धेश्वरी है न !"

सिद्धेश्वरी की तब इस घर में नयी-नयी नियुक्ति हुई थी। बुढ़िया मुनीम को सिद्धेश्वरी ने वही उत्तर दिया—"गौरांग दीदी ने कहा है।"

फिर गौरांग दीदी की बुलाहट हुई। बुढ़िया मुनीम हर किसी को पहचानती है। बुढ़िया मुनीम के पास आकर हरेक को महीने के आखिर में तनख्वाह लेनी पड़ती है।

अन्त में गौरांग दीदी के पास खबर पहुँचायी गयी।

असली नाम है गौरांगमणि। गृह-स्वामिनी के कानों में भी खबर

पहुँची।

"क्या हुआ री, पूंटी? गौरांग को कौन बुला रहा है?"

"मुनीम जी।"

तब गृहस्वामिनी की पुत्री स्नानघर में नहा रही थी। उसके कानों में शोर-गुल नहीं पहुँचा था।

वह ज्योंही स्नान-घर से बाहर निकली, वसुमती देवी बोली, "अरी वीणा, तेरे बच्चे पर कितनी बड़ी मुसीबत आयी!"

"क्या हुआ?"

"सिद्धेश्वरी तेरे लड़के की सरसों के तेल से मालिश कर रही थी।"

"सरसों के तेल से तुमने ही तो मालिश करने को कहा था, माँ! इसीलिए तो रोज़ लगाती है।"

गौरांगमणि अब तक अपराध का बोझा सर पर लादे एक किनारे सज़ा की प्रतीक्षा में खड़ी थी। वीणा की बात सुनकर उसके प्राण लौटे।

"हम लोगों ने कितने ही बच्चों को जन्म दिया है। हमेशा सरसों के तेल से ही मालिश की है, मालकिन जी।"

वसुमती देवी बोली, "चुप रह, बक-बक मत कर, कहाँ तेरा बच्चा और कहाँ वीणा का!"

बात सही है। गौरांगमणि किससे किसकी तुलना कर रही है! वसुमती देवी ने डाँटते हुए कहा, "अब डॉक्टर साहब के पास जाकर सफ़ाई दे।"

डॉक्टर साहब इस घर के पुराने चिकित्सक हैं। गृहस्वामी से लेकर उनके घर के हरेक व्यक्ति की चिकित्सा करते आ रहे हैं।

"नहीं," वह बोले, "पहले जो हो चुका, वह हो चुका, अब से ऑलिव ऑयल से मालिश करना पड़ेगा।"

बुद्धिमान मुनीम खासी चतुर थी। कमरे से कागज और कलम लाकर बोली, "डॉक्टर साहब, इसमें लिख दीजिए, वरना भूल जाऊँगी।"

उसी क्षण निश्चित हो गया कि ऑलिव ऑयल से मालिश करना पड़ेगा। खानदानी घर का नाती है। उसके लिए विशुद्ध ऑलिव ऑयल लाया गया। न केवल विशुद्ध ऑलिव ऑयल, बल्कि सब-कुछ विशुद्ध। विशुद्ध दूध, विशुद्ध दूध का छेना, विशुद्ध चावल, दाल, नमक; इतने

अलावा विशुद्ध जल और हवा।

विशुद्ध ऑलिव ऑयल की मालिश कराकर, विशुद्ध दूध, विशुद्ध जल और विशुद्ध हवा का सेवन कर जब राय-घर के वंशधर ने कुछ-कुछ देखना, सुनना और समझना सीखा तब एकाएक नानी अम्मा से पूछ बैठा, "नानी अम्मा, वह किसकी तसवीर है ? चश्मा पहने हुए वह बूढ़ा कौन है ?"

वसुमती देवी बोली, "वह महात्मा गांधी हैं, प्रणाम करो।"

दीवार में पंक्तिबद्ध तसवीरें टँगी हैं। समूचा ड्राइंगरूम तसवीरों से सजा है। इस घर का एकमात्र दुलारा नाती है। जब तसवीरें ली गयी थी, इस नाती का जन्म नहीं हुआ था। तब जिन महापुरुषों ने इस घर में कदम रखा था, गृहस्वामी ने बुद्धिमत्तापूर्वक उन लोगों की तसवीरें खिचवायी थीं। इसके अलावा भी बहुत-से महापुरुषों की तसवीरें थी। ईसामसीह, बुद्धदेव, शंकराचार्य, चैतन्य महाप्रभु—ऐसे ही अनेक महापुरुषों की तसवीरें।

गृहस्वामी एक सदाचारी व्यक्ति थे। उन्हें मालूम था कि एक दिन उनकी गौरव-गाथा के कारण उनके वंशज कलकत्ता शहर में स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करेंगे। उन्होंने विशाल व्यवसाय की नींव डाली थी। इच्छा थी कि पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह व्यवसाय चलता रहे। और न केवल चलता रहे, बल्कि उस व्यवसाय के कारण गृहस्वामी का नाम हमेशा के लिए अमिट रहे।

लोग अखबारों में बड़े-बड़े विज्ञापन देखकर पूछेंगे, "यह ऑटो इंजीनीयरिंग कम्पनी किन लोगों की है ?"

हर कोई उत्तर देगा, "अरे, ऑटो इंजीनियरिंग कम्पनी किसकी है, यह भी नहीं जानते ? कान्तिकराय का नाम सुना है ?"

"कान्तिकराय कौन ?"

"कान्तिकराय का नाम आपने नहीं सुना ? आपकी बात पर हँसी आती है, जनाब। नड़ाई के राय-परिवार की संतान। देश के लिए लाखों रुपये चंदा दिया है। गांधीजी, जवाहरलाल, शरत् बोस, सुभाष बोस—इन लोगों के हाथों में कान्तिकराय ने दान-रूप में कम पैसे नहीं थमाये हैं। दरअसल दानवीर और कर्मवीर जिसे कहा जाता है, कान्तिकराय उसी

कोटि के थे। आखिरी वक्त मेयर भी हुए थे...।"

उस 'मेयर' की तसवीर के एक ओर गांधीजी और दूसरी ओर जे० एम० सेनगुप्त हैं! किसी तसवीर में सुभाष बोस के साथ यह चाय पीते हुए दिख रहे हैं। जवाहरलाल नेहरू जब लखनऊ में कांग्रेस के प्रेसिडेंट हुए थे, कान्तिकराय विशेष प्रतिनिधि की हैसियत से कलकत्ता से वहाँ गये थे। साथ में वसुमती देवी गयी थीं। एक तसवीर में गृहस्वामी और गृहस्वामिनी जवाहरलाल नेहरू के साथ हैं। कान्तिकराय जब जेल गये थे और वहाँ से छूटकर निकले थे, उस वक्त की एक तसवीर है। गले में फूलों के ढेर सारे हार डाले जेल के गेट के सामने खड़े हैं। वह तसवीर सबसे ऊपर टँगी है।

नाती पूछता, "उन लोगों के साथ नानाजी फ़ोटो क्यों खिचवाते थे, नानी अम्मा?"

नानी अम्मा हँसती थी। छोटा बच्चा था न! तब नाती की उम्र क्या थी। उन तसवीरों का मूल्य वह समझ नहीं पाता था। जानता नहीं था कि उन्हीं तसवीरों को देखकर लोग एक दिन उसके प्रति सम्मान प्रदर्शित करेंगे। समझेंगे कि लोकनाथ कितने बड़े वंश की सन्तान है।

लेकिन लोकनाथ की उम्र ज्यों-ज्यों बढ़ने लगी, त्यों-त्यों वह अजीब ही किस्म का होता गया।

वीणा कहती, "माँ, तुम्हीं उसे ज्यादा लाड-प्यार कर सिर पर चढ़ाती जाती हो।"

वास्तव में वसुमती देवी अपनी नाती को अत्यधिक लाड़-प्यार करती थीं। गाड़ी में वसुमती देवी को यह बातें याद आने लगी। इतने बड़े ऑटो इंजीनियरिंग कम्पनी के सब-कुछ की देख-रेख दामाद ही करते थे।

दामाद की याद आते ही वसुमती देवी का मन बोझिल हो गया। वे दिन कहाँ चले गये! गृहस्वामी ने लिमिटेड कम्पनी बना दी थी। सोचा था, काम पक्का कर दिया। गृहस्वामी को जो कुछ मान-सम्मान मिला था, सब-कुछ उन्हीं लोगों के कारण मिला था, जिनकी तसवीरें बाहर के कमरे की दीवारों पर टँगी थीं—शरत् बाबू, जवाहरलाल नेहरू, मोतीलाल, राजेन्द्रप्रसाद, श्रीनिवास अयंगर, गांधीजी। उन्हीं लोगों की कृपा से घर, गाड़ी, कारोबार, बैंक में पैसा—सब-कुछ प्राप्त हुआ था।

जब कान्तिकराय ने ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स बनाया था तब मकान के अतिरिक्त उसके पास था ही क्या ? रुपया कौन देता ? तब बैंक का ही एकमात्र भरोसा था। उन्हीं लोगों ने बैंक से ओवरड्राफ्ट का भरोसा दिया था।

एक दिन घर आते ही गृहस्वामी सोफ़े पर उठंगकर बैठ गये। वसुमती देवी ने सोचा, शायद किसी मुसीबत में फँस गये हैं।

"क्या हुआ ? तबीयत खराब है क्या?" उन्होंने पूछा।

गृहस्वामी ने कहा, "नहीं, एक समाचार है।"

"क्या ?"

"कम्पनी का रजिस्ट्रेशन करा आया हूँ।"

"मगर पैसा ?" वसुमती देवी ने कहा, "तुमने बताया था कि शुरू में ही में एक लाख रुपया लगेगा। इतने रुपये कहाँ मिले ?"

कान्तिकराय बोले, "बोस साहब ने सारा इन्तजाम कर दिया।"

"बोस साहब का मतलब ? बोस साहब कौन ?"

"शरत् बोस।"

"बैरिस्टर शरत् बोस ?"

वसुमती देवी ने दीवार पर टँगी तसवीर की ओर देखा। तत्काल उस घटना का स्मरण हो आया। वीणा के विवाह के समय इस घर में कैसा तड़क-भड़क का मेला लग गया था ! अखबारों में जिन लोगों की तसवीरें छपती हैं वे सभी उस दिन घर में आये थे। उन्हें देखने के लिए मुहल्ले के लोग घर में उमड़ आये थे। दुल्हा और दुल्हन को देखने के लिए नहीं, बल्कि उन प्रातःस्मरणीय महापुरुषों को देखने के लिए। अखबारों के कर्मचारी उन लोगों की फ़ोटो खींचकर ले गये थे।

वह सब एक दिन समाप्त हो गया...!

एकाएक बैजू आया।

वसुमती देवी ने पूछा, "क्यों जी, मुन्ना का पता चला ?"

"नहीं, माँजी !" बैजू ने कहा।

"पकौड़ी वाले ने क्या कहा ? आज मुन्ना दुकान पर आया था ?"

बैजू तब तक गाड़ी के अन्दर अपनी जगह पर बैठ चुका था। उसने कहा, "आये थे, उसके बाद कहाँ गये, उस आदमी को मालूम नहीं है।"

वसुमती देवी ने कहा, "फिर वह कहाँ जा सकता है?"

मुन्ना और कहाँ जा सकता है, बैज यह कैसे बताये? लोकनाथ सवेरे घर से निकलता है और उसके बाद सारे कलकत्ता में चहल-कदमी करता रहता है। यों ही बेवजह चक्कर काटता रहता है। उस पकौड़ी की दुकान की बात कैसे तो अन्यमनस्कता के कारण उसने नानी अम्मा को बता दी थी। उसके बाद वसुमती देवी बहुत बार मुन्ना की तलाश में चक्कर काटती हुई आयी हैं और वहाँ उसे पाया है।

एक दिन नानी अम्मा ने पूछा था, "मुन्ना, तू वहाँ क्यों जाता है?... उस धुंधलके से भरी दुकान में? वहाँ क्या भले आदमी जाते हैं?"

लोकनाथ ने हँसकर कहा था, "मैं भी तो भला आदमी नहीं हूँ, नानी अम्मा!"

"छि-छि:!" नानी अम्मा ने कहा था, "तेरे नानाजी कभी भी उन जगहों में पाँव तक नहीं रखते थे। जानता है, बड़े आदमियों के मकान और बड़े-बड़े होटलों के सिवा गृहस्वामी कहीं नहीं जाते थे। उसी वंश का नाती होकर तू निचले तबके के लोगों से मिला-जुला करता है। जाना-पहचाना कोई व्यक्ति देख लेगा तो क्या सोचेगा? हो सकता है, सोचे कि राय खानदान की हालत बदतर हो गयी है।"

लोकनाथ ने कहा था, "सो सोचे, उससे मेरा क्या आता-जाता है?"

"तेरा तो कुछ भी नहीं बिगड़ सकता लेकिन मेरे खानदान पर तो धब्बा लगेगा।"

"लगने दो धब्बा, नानी अम्मा! अगर खानदान पर धब्बा लगता है तो लगना ही बेहतर है।"

इन बातों से वसुमती देवी के कलेजे में चोट पहुँचती थी। यह लडका क्या कहता है! इस वंश में यह काला पहाड होकर पैदा हुआ है! गृहस्वामी कार्त्तिकराय ने व्यवसाय करके विशाल कारोबार की स्थापना की थी। उनके साथ थे उनके दामाद संतोष राय।

ससुर की उपाधि राय थी और दामाद की भी उपाधि राय ही।

गृहस्वामी ने कहा था, "ऐसे व्यक्ति को दामाद बनाया है जो मेरे व्यवसाय की देख-रेख करेगा। मेरे मरने के बाद भी कारोबार चालू रहेगा।"

लेकिन अन्त तक गृहस्वामी की कोई भी उम्मीद पूरी नहीं हुई। वही कम्पनी, वही ऑटो इंजीनियरिंग कम्पनी, जब फूल-फूल कर विराट रूप में उदित हो गयी और उसमें कर्मचारियों की तादाद पाँच सौ हो गयी, ठीक उसी वक्त राय-वंश के इतिहास में बहुत बड़ा उलट-फेर हुआ।

कुल मिलाकर तब लोकनाथ का जन्म हुआ था।

एक दिन विलायत से केबुल आया—'सन इन ला एस० राय एक्स-पायर्ड।' अर्थात् दामाद संतोष राय स्वर्गवासी हो गया।

वीणा के निकट जाकर यह समाचार पहुँचाती हुई वसुमती देवी फफक-फफक कर रो पड़ी थीं।

उस वीणा के लड़के, वसुमती देवी के एकमात्र अवलंबन के लिए उन्हें इधर-उधर चक्कर काटना पड़ता है!

"फिर अब किधर चलोगे, बैजू?"

बैजू ने पूछा, "घर चलूँ?"

वसुमती देवी बोली, "हाँ, वहीं चलो।"

बैजू ने चौरंगी से गाड़ी को विपरीत दिशा की ओर मोड़ा और घर के रास्ते की ओर दौड़ाने लगा।

याद है, इसके बाद एक दिन मैं दफ्तर में बैठा काम कर रहा था कि अचानक चपरासी ने मुझे सूचना दी कि क़िले के पार की रोड के एक मकान का ड्राइवर मुझसे मेरे कमरे में मिलना चाहता है।

मेरे राजी होते ही जो व्यक्ति कमरे के अन्दर आया उसे देखते ही मैं पहचान गया। वह लोकनाथ का ड्राइवर बैजू था।

बैजू बोला, "नीचे गृहस्वामिनी गाड़ी में बैठी हैं। आपसे एक बार मिलना चाहती हैं।"

मैं तत्काल कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। याद है, लोकनाथ की इसी नानी अम्मा के रहते छुटपन में हम लोकनाथ के घर मे घुसने से डरते थे। लोकनाथ के पिता संतोष राय को हम ज्यादातर देख नहीं पाते थे। इसका कारण था, अपने 'ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स' के चलते उन्हें सारी दुनिया की परिक्रमा करनी पड़ती थी। लोकनाथ के नानाजी तब बूढ़े हो गये थे। अपने से बड़ों से हमने सुना था, सड़क से ही दीख पड़ता था कि वह सिर पर पके बाल लिये बगीचे मे चहल-कदमी किया करते थे। जाड़े के दिनों मे उनके शरीर पर एक कश्मीरी शाल लिपटी रहती थी और गरमी के दिनों में ढीला-ढाला कुरता, धोती और पैरों में चप्पल। कात्तिकराय ने अपने जीवन-काल मे एक बार जेल की सज़ा काटी थी। शायद इसी वजह से उस ज़माने में जिन लोगों ने अंग्रेज़ों के जेल में कुछ दिन गुज़ारे थे, उनमें से ज्यादातर लोगों को लोकनाथ के घर में क़ाफी स्वागत-सम्मान मिलता था, जैसे शरत् बोस, महात्मा गांधी, बिहार के राजेन्द्रप्रसाद, मद्रास के श्रीनिवास अयगर को। और भी कितने ही विख्यात व्यक्ति किसी ज़माने में इस घर मे आतिथ्य-सत्कार पाते थे। अखबारों के रिपोर्टर और फ़ोटोग्राफर लोकनाथ के घर के सामने आकर इकट्ठे होते थे। लोकनाथ के नानाजी कात्तिकराय उन लोगों के ठहरने और खाने का इन्तज़ाम करते थे। इतना ही नहीं, अपने 'ऑटो इंजीनियरिंग' के लाभ की राशि का ढेरों पैसा उन्होंने कांग्रेस के फंड में दिया था। शायद कांग्रेस कार्यालय के खाते में उसका कोई हिसाब-किताब नहीं है।

देशबन्धु कांग्रेस के प्रादेशिक सम्मेलन में फ़रीदपुर जाने वाले थे। जाने के पहले अचानक कुछ रुपयों की जरूरत पड़ गयी। उन्होंने कात्तिकराय को टेलिफोन किया, "कात्तिक, मुझे कुछ रुपयों की ज़रूरत है।"

कात्तिकराय ने सिर्फ़ इतना ही पूछा, "कितने रुपयों की ?"

यानी देशबन्धु रुपया माँग रहे थे, यही बहुत बड़ी बात थी। क्यों, बात क्या है, रुपया लेकर क्या करेंगे, किस मद में खर्च करेंगे, यह सब जानने की जिम्मेदारी न थी कात्तिकराय की और न ही देशबंधु की।

दूसरी तरफ़ से देशबंधु ने इतना ही कहा, 'मान लो आठ-दस हज़ार रुपये। दे सकोगे ?"

कार्त्तिकराय ने जवाब दिया, "मेरा आदमी रुपया लेकर आपके मकान में दोपहर बारह बजे तक पहुँच जायेगा।"

बस, इतना ही!

यह न केवल देशबन्धु की ही बात थी, शरत् बोस, जे० एम० सेनगुप्त के साथ भी यही बात थी। आसाम में जब चाय के बग़ीचे में हड़ताल हुई, जे० एम० सेनगुप्त साहब ने अपना सर्वस्व विसर्जित कर दिया। कार्त्तिकराय के सामने भी आकर उन्होंने हाथ फैलाया—"मुझे कुछ दो, कार्त्तिक।"

कार्त्तिकराय ने कहा, "कितना दूँ ?"

"तुम जितना दे सको," सेनगुप्त साहब ने कहा।

उस दिन 'ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स' के एकाउंटेंट को फ़ोन करने के बाद जितना कुछ मिला, सबका-सब सेनगुप्त साहब के 'स्ट्राइक फंड' में दे डाला। उस ज़माने में लेबर-लीडर दूसरे के धन पर मौज नहीं मनाया करते थे। एक ओर कम्पनी से रुपया लेकर दूसरी ओर मजदूरों का सर्वनाश नहीं किया करते थे। देशप्रिय जे० एम० सेनगुप्त जैसे लोग मज़दूरों के लिए अपना सर्वस्व त्यागकर फकीर हो गये थे।

हम लोग ये सब कहानियाँ बड़े-बुज़ुर्गों से सुना करते थे।

"इसके बाद ?" हम लोग पूछते।

लेकिन जब हम जीवन की लड़ाई के मैदान में उतर कर दुनियादारी के चक्कर के कारण काम-धाम में बिलकुल मशगूल हो गये, लोकनाथ के परिवार के अतीत के वैभव की रंगीन किंवदंतियाँ तब हमारे लिए कोई आकर्षण नहीं रखने लगी। तब बाहर-ही-बाहर हम प्रोलेटेरियेट का चाहे कितना ही गुण-गान क्यों न करें, मन-ही-मन हममें से हरेक कार्तिकराय होना चाहता था। हमलोग भी प्रयत्न कर रहे थे कि हमारे ज़माने के जो वी० आई० पी० हैं, उनसे एकाकार होकर किसी अलिखित कौशल से हम लोगों में से हर व्यक्ति किसी तरह वी० आई० पी० बन जाये। उन दिनों लोकनाथ से दैवात् रास्ते में एकाध दिन मुलाकात हो जाती थी। धोती-कुरता या कमीज़ पहने और पाँवों में चप्पल डाले वह सड़क पर लम्बे पग बढ़ाता हुआ मिल जाता था, एकाध दिन हमारी गाड़ी में भी बैठ जाता था। जिस व्यक्ति ने एक दिन मोटरगाड़ी के कारोबार करने वाले वंश में जन्म

लिया था उसके पैदल चलने की क्रिया का हम लोग किसी भी 'इज़म' के द्वारा व्याख्या करने में अपने को असमर्थ पाते थे। हम सोचते, हो सकता है कि लोकनाथ पागल हो गया है या यही उसका 'पन' है। किसी जमाने में वैभव से रहना ही आदमी का पन था, हाव-भाव, चाल-चलन से वैभव का प्रदर्शन करना ही अभिप्राय था। बाद मे, हमलोगों के बचपन मे ही, उसमे एक बदलाव आ गया। तब से लोगों की धारणा बन गयी कि जायदाद का अर्थ है—चोरी का माल। यानी दुनिया मे जो-जो बड़े आदमी हुए है वे सब-के-सब चोर हैं। चोरी किये बगैर कोई धनवान् नही हो सकता है, अतः चेहरे पर सर्वहारा की छाप ओढ़नी पड़ेगी। वह किस तरह सम्भव हो सकता है ? सिर के बालों मे तेल मत लगाओ, साफ धुले कपड़े मत पहनो। रोज़-रोज़ दाढ़ी न बनाना ही बेहतर रहेगा। और अगर दाढ़ी रखी जाये तो बात ही क्या है ! इतने दिनों से जिनका नाम प्रातःस्मरणीय के रूप मे विख्यात हैं, दरअसल उनमें से कोई प्रातःस्मरणीय नही हैं। वे बुर्जुवा है। इतने दिनों से गलती के कारण हम उनका स्मरण करते आ रहे है, पूजा करते आ रहे हैं, उनका अनुसरण करते आ रहे हैं। अब हम लोगों का युग ही अलग है, हमारा आदर्श अलग है, हमलोगों का देवता अलग है।

वह अलग देवता कौन है ?

उन अलग देवताओं की छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ बाहर से आयातित होकर कलकत्ता में आती थी। हम उत्कंठा के साथ उन्हे पढ़ते थे और सोचते थे कि हमारे पितरों ने भयंकर भूलें की है। वे व्यर्थ ही कठिन साधना करते थे, ब्रह्मचर्य-पालन करते थे। व्यर्थ ही सत्य बोलते रहे हैं, सत्य आचरण करते रहे हैं, सत्य का अनुसरण करते रहे हैं। उन्होंने आकाश की ओर निहारकर एक दिन अदृश्य देवता के प्रति प्रश्न उछाला था—कस्मै देवाय !

हालांकि उन्हें यह मालूम नहीं था कि देवता इस पृथ्वी के सर्वहारा, वंचित व्यक्तियों के बीच छिपकर खड़े है।

लोकनाथ की गाड़ी के ड्राइवर ने जब आकर मुझे पुकारा, तब वास्तव में मुझे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। आश्चर्य न होने का कारण यह है कि तब

"ए भाई साहब, भाई साहब !" एक भले आदमी ने पीछे से पुकारा।

लोकनाथ ज्यों ही पीछे की ओर मुड़ा, भले आदमी ने कहा, "तैंतीस बटे बी मकान कौन-सा है, बता सकते है ?"

बात कहते-कहते उस भलेमानस के मुंह मे आधा वाक्य जैसे अटक कर रह गया।

"मिस्टर राय ? आप यहाँ ? इस मोहल्ले मे ? इस वक्त ?"

लोकनाथ आश्चर्य मे डूबने-उतरने लगा।

इस अजनबी मोहल्ले में उसे किसने पहचान लिया ?

लोकनाथ ने पूछा, "आप कौन है ?"

"मुझे पहचान नही पा रहे हैं, मिस्टर राय ? मैं केदार सरकार हूं। ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स का एकाउटेंट—केदार सरकार।"

केदार सरकार ! लोकनाथ उस भले आदमी को विस्मयपूर्वक देखने लगा। अब केदार सरकार की नौकरी नही रही। रहे तो क्यो रहे ? लोकनाथ ने जब ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स छोड़ा था तब अपना इक्यावन-भाग शेयर कर्मचारियों को दे दिया था। तब जिन्होंने रहना चाहा, वे रहे। बाकी लोगो ने क्षति-पूर्त्ति के रूप मे मोटी रकम लेकर नौकरी छोड़ दी थी। तब जिन लोगों ने नौकरी छोड़ दी थी, केदार सरकार उनमें से एक है। सभी को जिस तरह हरजाना देने की बात थी, केदार सरकार को भी दिया गया था। केदार सरकार को कुल पचास हज़ार रुपये मिले थे। और मोटी तनख्वाह पाने वाले जो कर्मचारी थे वे भी मोटी रकम का हरजाना लेकर एक दिन घर चले गये थे। उसी रुपये से किसी-किसी ने कलकत्ता के निकटवर्त्ती स्थानों में एक-दो कट्ठा जमीन खरीदकर मकान बनवा लिये है। किसी-किसी ने अपने उसी मकान के एक हिस्से को किराये पर लगाकर स्थायी आय का इन्तजाम कर लिया है।

परन्तु केदार सरकार ने ऐसा नही किया है।

केदार सरकार ने जैसौर की कंघी का व्यवसाय करके मोटी आमदनी का रास्ता निकाल लिया है। वह बड़ा ही हँसमुख व्यक्ति है। गोल, भरा-भरा-सा उसका चेहरा है।

दो-चार बातों के बाद लोकनाथ ने एकाएक पूछा, 'साल,

ओसतन कितना कमा लेते हैं ?"

"अभी दस से बारह तक, बाद में और ज्यादा होगा।"

लोकनाथ ने केदार सरकार के चेहरे की ओर देखा। चेहरे पर दस-बारह हजार की पुलक का लेप है। बाद में और ज्यादा होगा, यह उम्मीद भी झलक रही है। लोकनाथ को लगा, नौकरी जाने की वजह से केदार सरकार का भाग्य बदल गया है।

केदार सरकार ने आगे बढ़कर एकाएक प्रश्न किया, "आजकल आप क्या कर रहे हैं, मिस्टर राय ?"

"मैं ?"

इस धरती पर सभी को कुछ-न-कुछ करना ही पड़ता है। जो नहीं करता है वह जैसे मनुष्य-नाम का अधिकारी नहीं है।

प्रश्न करने के बाद ही केदार सरकार को जैसे अपनी गलती का अहसास हुआ। तत्काल अपनी गलती सुधारता हुआ वह बोला, "यानी कोई नया प्रोजेक्ट हाथ में लिया है या नहीं ? कोई नयी फैक्टरी ?"

"इसका मतलब हुआ और अधिक पैसा, और अधिक अशांति ! यही न ?" अनासक्ति की हँसी हँसकर लोकनाथ ने कहा, "वैसा कोई मकसद रहता तो ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स को वर्करों के हाथ सुपुर्द नहीं कर देता।"

"सच कह रहे है, सर ?" केदार सरकार ने कहा, "इतने दिनों का बिज़नेस आपने वर्करों को दे दिया, यह बात हम समझ नहीं सके। हालाँकि हमारे स्टाफ़ के लोगों ने कभी स्ट्राइक नहीं की।"

फिर एकाएक जैसे याद आया हो।

'आपकी गाड़ी कहाँ गयी, सर ?"

लोकनाथ ने कहा, "गाड़ी है।"

"तब इस तरफ कहीं आये हुए थे ?"

"किसी के घर में न आना हो तो इधर नहीं आना चाहिए क्या ?" लोकनाथ ने कहा।

"नहीं, नहीं; मैं यह नहीं कह रहा हूँ।"

"देखिए केदार बाबू," लोकनाथ ने एकाएक कहा, "मेरे पास गाडी नही है, यह सुनकर आप बेहद खुश होते। है न ? कहिए हाँ या नही ? कहिए कहिए।"

केदार सरकार जैसे चंगुल में फँस गया हो और छुटकारा पाने के लिए छटपटा रहा हो।

"नही-नही," उसने कहा, "मेरे कहने का यह तात्पर्य नही है। मैं यानी...।"

लोकनाथ ने डाँटा, "चुप रहिए, मैं सब समझता हूँ। आप लोग हर आदमी का अनुमान रुपया-पैसा, गाड़ी और बैंक-बैलेंस देखकर करते हैं। यही वजह है कि मैंने अपनी फर्म छोड़ दी। इसलिए मैं पैदल चलता रहता हूँ, मैं देखना चाहता हूँ कि आदमी आज कितना नीचे उतर आया है !"

कुछ देर तक चुप रहने के बाद फिर से बोलना शुरू किया, 'हो सकता है कि आप सोच रहे हों कि पैदल चलकर और सड़क पर बाहर आकर मैं आपकी बराबरी के स्तर पर उतर आया हूँ, लेकिन असली बात यह नही है कि आपसे और ज्यादा निचले स्तर पर उतर आया हूँ। आपको यह मालूम है ? मेरे इस पैतृक प्राण की तरह मेरे पैतृक घर, गाड़ी आदि सब-कुछ मौजूद है, लेकिन वे सब नाम मात्र के है। मेरी नानी अम्मा की जब मौत हो जायेगी उस दिन उन चीजों को भी बेच डालूंगा। तब आप लोग दूर से मुझे धिक्कारेंगे। अभी जिस तरह आप खड़े होकर दो बातें कर रहे हैं उस दिन नही कीजिएगा। तब आपको निगाहों मे मैं एक इडियट हो जाऊँगा।"

इतना कहकर वह कुछ देर तक चुप रहा और फिर कहा, "चलूं...!"

और मानसतल्ला लेन पकड़कर सीधे सामने की ओर जाने लगा।

केदार सरकार लोकनाथ की बातें सुनकर पल-भर के लिए स्तंभित रह गया। उसका जाना वह अवाक् होकर कुछ देर तक देखता रहा। उसी ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स का मालिक मिस्टर राय है ! घड़ी की सुई देखकर गाड़ी से दफ्तर मे आता था और दिन-भर चर्खी की तरह डिपार्टमेंट का निरीक्षण करता था। सब-एकाउंटेंट केदार सरकार अनेक बार खाता-बही और वाउचर लेकर हस्ताक्षर कराने मिस्टर राय के पास जाता था। तब

मिस्टर राय की पोशाक ऐसी नहीं रहती थी। सफ़ाचट दाढ़ी रहती थी, साफ़-धुले शर्ट-टाई-सूट और ज़बान से विशुद्ध अँग्रेजी का उच्चारण।

और आज ?

वही चेहरा दाढ़ी से भरा हुआ है, पाजामा मैला, कुरता भी कहीं-कहीं फटा हुआ।

"इस तरह किसकी ओर ताक रहे हैं ?"

केदार सरकार ने मुँह घुमाकर देखा। इसी व्यक्ति के लिए वह मानसतल्ला आया है।

"मैं सोच रहा था," उस भले आदमी ने कहा, "इतनी देर हो गयी, आप अब तक नहीं आये। सो जैसे ही बाहर आया कि आपको खड़ा पाया।"

केदार सरकार ने कहा, "उस भले आदमी को आपने देखा न ? देखा था ? जानते हैं, वह कौन हैं ?"

"कौन ?"

"अजी, मैं जहाँ नौकरी करता था, उसी ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के मैनेजिंग डाइरेक्टर मिस्टर लोकनाथ राय थे।"

भला आदमी अवाक् हो गया। "क्या कह रहे है आप ! वही फटा कुरता-पाजामा पहने हुए आदमी ? उसकी हालत ऐसी क्यों हो गयी ? घर, गाड़ी सब कहाँ गये ?"

"मैंने भी तो यही पूछा था," केदार सरकार ने कहा, "उस पर क्या कहा, पता है ? कहा, गाड़ी रहने से आप लोग ज्यादा इज्ज़त कीजिएगा ? परेशानी देखिए !"

उस भले आदमी ने कहा, "मैंने उसे कहीं देखा है। अकेला अपने-आप में खोया घूमता रहता है। मैं तो पहचान नहीं पाया था, सोचता था, पागल-वागल होगा।"

केदार सरकार ने कहा, "वह कितने बड़े परिवार की संतान है, जानते हैं ? एक दिन उसके घर में महात्मा गांधी, मोतीलाल नेहरू, श्रीनिवास अयंगर जैसे लोग आकर ठहर चुके हैं। जवाहरलाल नेहरू उसके पिता के मित्र थे। लखनऊ कांग्रेस में जब नेहरूजी प्रेसिडेंट थे, उस बार उसके नाना

जो, नानी अम्मा सभी डेलिगेट बनकर गये थे। उन तसवीरों को उसके ड्राइगरूम मे टँगा हुआ देख चुका हूँ।"

सब सुनने के बाद उस भले आदमी ने कहा, 'सब किस्मत की बात है! लेकिन असली कारण क्या है, यह तो बताइए। कारोबार से तो फायदा ही हो रहा था। फिर कारोबार बन्द करने का कारण क्या हो सकता है?"

'पता नही जनाब, कारण क्या है?" केदार सरकार ने कहा।

"इसके पीछे कोई लड़की-वड़की है क्या?"

"नही, यह सब सुनने को नही मिला है।"

"अभी तक शादी नही हुई है न?"

"नही।"

उस भले आदमी ने कहा, "फिर और देखने की जरूरत नही। इसके पीछे निश्चित-रूपेण किसी लड़की का हाथ है। अब और कुछ नहीं देखना है। यही वजह है कि उस चीज से मैं दूर रहा हूँ। इस तरह के व्यवसाय को बिलकुल उठा देना...!"

केदार सरकार ने कहा, 'नहीं जनाब, लड़की नहीं है।"

"लड़की नही है? तब क्या है?"

"दूसरी ही बात है। मैंने अपने एकाउंटेंट से सुना था। दरअसल किताब पढ़कर दिमाग गड़बड़ा गया है।"

"किताब? किस विषय की किताब!"

केदार सरकार ने कहा, "यही कारण है कि मैंने अपने लड़के से कहा है कि अधिक मत पढ़ो बेटा! लिखाई-पढ़ाई का अर्थ ही है सिर का बोझा बढ़ाना। जानते है, लोकनाथ एम० ए० में फ़र्स्टक्लास-फर्स्ट आया था। कात्तिकराय ने अपने इस नाती के दो पेपरों के लिए दो प्रोफेसर रखे थे। बूढे आदमी ने सोचा था कि ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स की बुनियाद मजबूत करके जा रहा है। उसके बाद उस लड़के को 'लंडन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स' से ग्रेजुएट कराया। सारे कामों की नीव बिलकुल मजबूत डाल गये जिससे कि राय-वंश का व्यवसाय पीढ़ी-दर-पीढ़ी पूरी रफ़्तार से आगे बढ़ता जाये। लेकिन लड़का दानव-वंश में प्रह्लाद निकला।"

"क्यों ?"

"कहा न—वही किताब के कारण। लाइब्रेरी में ढेर सारी किताबें थी। उन्ही किताबों को पढ़ते-पढते नाती का दिमाग बड़बड़ा गया। एक दिन बेवजह दीवार की सारी तसवीरों को पटक-पटककर तोड़ डाला। महात्मा गांधी, मोतीलाल नेहरू, रवि ठाकुर, रामकृष्ण परमहंसदेव—किसी की भी तसवीर को नहीं छोड़ा। सभी को संगमरमर के फर्श पर पटकना शुरू किया और तसवीरो के कांच टूट-टूटकर चारों ओर बिखर गये।"

उसी लोकनाथ की नानी अम्मा मेरे दफ्तर के सामने अपनी गाड़ी में बैठी मेरी प्रतीक्षा कर रही थी। किसी ज़माने मे वसुमती देवी का मिलना-जुलना बड़े-बड़े विख्यात व्यक्तियों से रह चुका है। कात्तिकराय की धर्मपत्नी वसुमती देवी की तसवीर उस ज़माने मे 'आनन्द बाज़ार' के पन्नों पर अनेक बार छप चुकी है।

अखबारों के पन्नों पर बहुतों की तसवीरें नही छपा करती हैं। लेकिन छपने के बाद जो व्यक्ति स्वयं को धन्य समझते हैं, वसुमती देवी उन्ही मे से एक हैं। उस ज़माने में अखबारों के न्यूज़-एडिटर कात्तिक-राय की दावत मे निमन्त्रित होकर शरीक होते थे। आकर स्वयं को धन्य मानते थे। भविष्य मे जिससे और भी निमन्त्रण प्राप्त हों, उसके लिए बतौर रिश्वत के मौका मिलने पर अखबारों मे कात्तिकराय और वसुमती देवी की तसवीरें छापा करते थे।

बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने एक बार वसुमती देवी से कहा था, "बहनजी, मैं राजेन्द्रप्रसाद हूं और आप हैं राजेन्द्राणी...।"

यह बात सुनकर वहां जितने आदमी उपस्थित थे, हँस पड़े थे। कहा जा सकता है कि उस ज़माने में वसुमती देवी राजेन्द्राणी ही थी।

कितना वैभव था, कितना सम्मान, कितने अतिथि-अभ्यागत ! उन बातों को सोचने से हैरान रह जाना पड़ता है।

लोग कहा करते थे—कात्तिकराय की सफलताओं के मूल मे उनकी पत्नी का हाथ है।

लोग सच ही कहते थे। उस बात में अतिशयोक्ति नहीं थी बल्कि वे कुछ घटाकर ही कहते थे। क्योंकि घर के अन्दर के बेडरूम की बातें तो सुनायी नहीं पड़ती थी, कात्तिकराय वहीं वसुमती देवी से सलाह-परामर्श कर हर तरह के काम में हाथ लगाते थे।

कात्तिकराय कहते, "सुनो, तुम्हारे एकाउंट से सेनगुप्त साहब को दस हजार रुपया दे रहा हूँ।"

"क्यों ?"

"असम के चाय के बग़ीचों में लेबर-स्ट्राइक चल रही है। देशप्रिय साहब कल रुपया लेने के लिए आये थे। आज सुबह देने की बात है।"

न केवल चाय के बगीचों के मजदूरों की हड़ताल में ही बल्कि बहुत सारे कामों के लिए कात्तिकराय को रुपया देना पड़ता था। 'ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स' जिस तरह कांग्रेस के कल्याण के कारण ही इतना बड़ा हो गया था, कात्तिकराय को भी उसी तरह काफी पैसा कांग्रेस को चन्दा देना पड़ता था, कभी चाय के बगीचों की मजदूर-हड़ताल के लिए, कभी अखिल-भारतीय कांग्रेस अधिवेशन के लिए और कभी फ़रीदपुर की बाढ़ के कारण प्रफुल्लचन्द्र बाढ़-पीड़ित कोष के लिए। आचार्य प्रफुल्लचन्द्र हमेशा हाथ फैलाये ही रहते थे। वह चन्दा मांगते तो कात्तिकराय नकार नहीं सकते थे, लेकिन रात में शयन-कक्ष में आकर एक बार वसुमती देवी से पूछ लिया करते थे।

तब हाँ, इन सबों से अलग भी वसुमती देवी की व्यक्तिगत दुनिया नाम की भी एक चीज थी। वहाँ वह अकेली ही सब-कुछ थीं। उनके एक ही लड़की थी। उसका लालन-पालन, लिखाई-पढ़ाई, विवाह-शादी। संतोष राय को जो उन्होंने दामाद बनाया था वह भी अपनी ही पसन्द से। वह देखने-सुनने में राजकुमार जैसे लगते थे। साइंस कॉलेज से एम० एस-सी० पास किया था। प्रफुल्लचन्द्र ने उसे अपने हाथों से रसायनशास्त्र के प्रयोग सिखाये थे। संतोष अपने प्रारंभिक जीवन में आचार्यदेव की तरह ही ब्रह्मचर्य का पालन करता था। अखाड़े में कुश्ती लड़ा करता था। सबेरे पाव-रोटी के टोस्ट के बदले भिगोया हुआ चना और ईख का गुड़ खाता, था और गुरु की ईश्वर की तरह भक्ति करता था।

वही आचार्य प्रफुल्लचन्द्र ही एक दिन कार्तिकराय के घर में आये ।
"कहाँ हो जी, कार्तिक ?" उन्होंने कहा ।

चपरासी से आचार्यदेव के आने की खबर पाकर दौड़े-दौड़े वह बाहर आये । साथ में थी वसुमती देवी । दोनों व्यक्तियों ने आकर आचार्य राय के पैर छूकर प्रणाम किया ।

प्रफुल्लचन्द्र बोले, "देखो, किसे लेकर आया हूँ ।"

कार्तिकराय और वसुमती देवी ने निकट बैठे उस लड़के की ओर देखा । राजकुमार की तरह चेहरा । देह का रंग दूधिया और गोरा । खादी का साफ धुना कुरता और धोती । उस लड़के ने दोनों के पाँवों का स्पर्श किया ।

वसुमती देवी तब भी अवाक् होकर अपलक उस लड़के के चेहरे पर आँखें टिकाये खड़ी थी ।

"तुम्हारा नाम क्या है, बेटा ?" उन्होंने पूछा ।

"संतोष राय ।"

"घर कहाँ है ?"

"फरीदपुर ।" संतोष राय ने कहा ।

"माँ-बाप ?"

आचार्य प्रफुल्लचंद्र बीच ही में बोल पड़े, "कोई नहीं है, कोई नहीं; मैं ही उसका माँ-बाप सब कुछ हूँ । उसके बारे में तुम लोग मुझी से पूछताछ करो । मुझे उसके बारे में पूरी जानकारी है ।"

उसके बाद आचार्यदेव ने जो बताया, उसका सारांश यह था : बाढ़-कल्याण समिति के दौरान उन्हें यह लड़का फ़रीदपुर के एक गाँव में मिला था । वहीं से उनके स्वयंसेवक उसे उठाकर कलकत्ता ले आये थे । आने पर साइंस कॉलिज में उनके हाथों में सौंप दिया । उसी समय से संतोष उनके पास है । आचार्यदेव को तब कॉलेज से माहवार आठ सौ रुपये वेतन मिलता था । उससे चालीस रुपये निकालकर बाक़ी सारी रकम गरीब और अनाथ छात्रों को दे देते थे । संतोषराय उन्हीं ग़रीब और अभिभावकहीन छात्रों में से एक है ।

"अब उसकी लिखाई-पढ़ाई समाप्त हो चुकी है । अब तक उसको

सकते हो ? पकौड़ी खाना क्या उसे अच्छा लगता है ?"

"असल मे पकौडी खाना अच्छा नही लगता है," मैंने कहा, "उस किस्म के लोगो से मिलना-जुलना उसे अच्छा लगता है ।"

वसुमती देवी बोली, "पता नही, आजकल बाल-बच्चो को क्या हो गया है । अच्छे-अच्छे लोगो से मिलने के बजाय निचले तबके के लोगो से मिलने-जुलते है । और निचले तबके के लोगो की तरह बेढब कपड़े-लत्ते पहनते है । हालांकि तुम लोग तो खासा सभ्य-भव्य रहते हो । तुम ही शर्ट-पैंट-टाई पहने हो, तुम्हे कितना फबता है ! और उसने कितनी बदसूरत दाढ़ी रखी है ! तुमने उसकी दाढी देखी है ?"

"देख चुका हूँ ।" मैंने कहा ।

"अच्छा, मुन्ना ने उस तरह की दाढी क्यो रखी है, बता सकते हो ? उसके बाप, उसके नानाजी किसी ने ऐसी दाढी नही रखी थी ।"

मैंने कहा, "ऐसी बात नही है । उसके पिताजी और नानाजी को ऐसी दाढी नही हो सकती है, लेकिन और-और बहुत-से आदमियों को दाढ़ी थी । रवि ठाकुर को दाढी थी, रामकृष्ण परमहंस देव को दाढी थी । कार्ल मार्क्स, पंचमजार्ज और पी० सी० राय ने दाढी रखी थी, इसके अलावा दुनिया के बहुत-से लोगो ने दाढ़ी नही रखी थी । राममोहनराय और स्वामी विवेकानंद को दाढी नही थी । उस जमाने में ऐसा एक वक्त आया था जबकि हर कोई दाढी रखा करता था, उसी तरह इस युग मे कुछ और ही फैशन आया है ।"

वसुमती देवी की उम्र होने से क्या होगा, आवाज मे तब भी बुलंदी थी । वह बोली, "सो पहले तुम उस कोटि के आदमी बनो तब उनकी जैसी दाढ़ी रखो । मैं तो यही बात मुन्ना से कहती हूँ । कहती हूँ, उन लोगो का गुण तो तू पा नही सका, सिर्फ़ दाढी ही मिली ।"

"यह सुनकर लोकनाथ ने क्या कहा ?"

वसुमतीदेवी बोली, "वह मेरी बात का उत्तर ही देता तो असमय आकर तुम्हारे काम ही में बाधा क्यो डालती, बेटा ? देखो न, मेरा भाग्य कितना खोटा है, कहाँ किस जादूगोपाल की दुकान में, जिन्हे मैं बराबर निचले तबक़े का आदमी समझती आ रही हूँ, मुझे तकलीफ़ सहकर जाना पड़ता

है। मेरे भाग्य में यह भी बदा था। तुम तो जानते ही हो कि एक ज़माना ऐसा था जब मेरा मिलना-जुलना किसी से नही था—चाहे दिल्ली कहो या मद्रास या कि बंबई—सभी जगह से किसी जमाने में लोग मेरे घर पर आते थे, मुझे 'बहनजी' कहकर पुकारते थे और सम्मान देते थे। राजगोपालाचारीजी से शुरू कर वल्लभभाई पटेल, राजेन्द्रप्रसाद—कौन मेरे घर नहीं आ चुका है ? इंदिरा तब छोटी थी, अपनी माँ के साथ कितनी ही बार मेरे घर आ चुकी है। आज इस लडके के कारण मुझे ही रास्ते-रास्ते की खाक छाननी पडती है !"

इस बात का उत्तर भला मैं क्या देता ?

वसुमती ने फिर कहना शुरू किया, "ख़ैर, जो बात मैं कहने आयी हूँ, वही पहले कहूँ। तुम किसी दिन मेरे घर पर आओ।"

"कब आऊँ ?" मैंने कहा।

"कल ही आओ न !"

"कल ? कल कब आऊँ ?"

"कल शाम को।"

"ज़रूर आऊँगा," मैंने कहा, "आप निश्चिंत रहें।"

बातचीत करके वसुमती देवी चली गयी। बेंजू गाड़ी से धुआँ उड़ाता हुआ चला गया। मैं कुछ क्षणों तक वहीं ख़ामोश खड़ा रहा। एक दिन जो दिल्ली, बंबई, मद्रास से संबंधित रही हैं, जिनके मकान में सारे हिन्दुस्तान के वी० आई० पी० ने आतिथ्य ग्रहण किया है, जिनकी तसवीरें अखबारों के मुख्य पृष्ठ पर छपती रही है, वही आज मेरे सामने धरना धरकर बैठी हैं। यह भाग्य की विडंबना ही है। हाँ, विडंबना ही।

सड़क पर कुछ देर तक खड़ा रहकर मैं फिर दफ़्तर में अपने कमरे में आकर बैठ गया। लगा, ऐसा क्यों हुआ ! ऐसा हुआ ही क्यों ? लोकनाथ ऐसा क्यों हो गया ? क्यों वह इतने अर्थ, सम्मान, संपत्ति और परम्परा के ख़िलाफ़ डटकर खड़ा हो गया ? हार जाने से आदमी ऐसा ही हो जाता है क्या ?

कुछ भी समझ में नहीं आया।

जब होने को होता है तब संभवतः ऐसा ही होता है। एक दिन लाला-

बाबू सड़क से होकर जा रहे थे, अचानक कानों मे एक बात पहुँची। बग़ल के मकान मे एक छोटी-सी लड़की अपने पिता से कह रही थी, "बाबूजी उठिए ! समय बीत रहा है, उठिए।"

छोटी-सी बात थी। लेकिन वह बात ज्यों ही कानों मे पहुँची, लाला-बाबू जहाँ जा रहे थे, वहाँ नही गये। संसार, अर्थ, परिवार, सुख, ऐश्वर्य सब-कुछ त्यागकर उन्होंने संन्यास के पथ पर क़दम बढ़ाया। और उनका सब-कुछ पीछे पड़ा रह गया। सचमुच, समय बीतता जा रहा है, अब देरी करने से नहीं चलेगा। हो सकता है कि लोकनाथ के जीवन मे भी इस प्रकार की घटना किसी दिन घटित हुई थी।

उस रात वसुमती देवी बग़ल के कमरे मे लेटी थी। अकस्मात् चिल्लाहट सुनकर चौंक पड़ी। "कौन...बगल के कमरे मे कौन चिल्ला रहा है ?"

लेकिन बगल के कमरे मे तब 1945 ईस्वी के पाँच अगस्त की रात की विभीषिका घटित हो रही थी। एक दिन पृथ्वी पर बाढ़ आयी थी और सब-कुछ बहाकर ले गयी थी। उस दिन कहीं खड़े होने के लिए मिट्टी का एक टुकड़ा भी न था। करोड़ों बरसों में मनुष्य ने तिल-तिल करके अपनी पृथ्वी का फिर से नवनिर्माण किया है। विश्वास का निर्माण किया है, धर्म का निर्माण किया है और इतिहास का निर्माण किया है। एक-एक कर महापुरुष अवतरित हुए है और जीवन के प्रति मनुष्य की आस्था को उसे लौटा दिया है। मनुष्य ने अपनी आस्था को केन्द्र मानकर उपनिषद्, वेद, बाइबिल, क़ुरान और गीता की रचना की। इसी मनुष्य ने रूसो की ज़ुबान से कहलाया—"संसार की प्रत्येक वस्तु सुन्दर है क्योंकि यह प्रकृति के हाथों गढ़ी गयी होती है। किन्तु मनुष्य के हाथों मे पड़ते ही हरेक वस्तु घटिया हो जाती है।"[1] फिर इसी मनुष्य ने बारबार प्रकृति के खिलाफ बग़ावत करके कहा—'अयं अहं भोः।' यानी, मै ही सब-कुछ हूँ। मुझसे बड़ा कोई नही है।

---

1. 'Everything is good as it comes from the hands of the author of nature, but everything degenerates in the hands of man.'

1945 ईस्वी का पाँच अगस्त। रविवार। रविवार को जापान के उस द्वीप के तमाम निवासी ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। प्रार्थना कर रहे हैं—हमें अर्थ दो, धन दो, शत्रुओं पर जय-लाभ की सामर्थ्य दो। शांति दो—अखंड अपरिमेय शांति !

कलकत्ता के क़िले-पार की सड़क पर स्थित कार्त्तिकराय के मकान में भी शांति का वातावरण छाया हुआ है। दीवार पर मद्रास के श्रीनिवास अयंगर कार्तिक राय की ओर ताक रहे है और मुसकरा रहे थे। न केवल श्रीनिवास अयंगर बल्कि राजेन्द्रप्रसाद भी मुसकरा रहे हैं। मुसकरा रहे हैं मोतीलाल नेहरू, महात्मा गांधी और भी जितने है सभी मुसकरा रहे है—तुम कहाँ कुछ कर सके ? अपनी संपत्ति को पकड़ कर कहाँ रख सके? हमने तुम्हें परमिट दिये थे और तुमने भी हमारी पार्टी को काफ़ी-कुछ चंदा दिया था। फिर भी क्या हम तुम्हे बचा पाये ? तुम्हारे ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स को बचा पाये ?

1945 ईस्वी का पाँच अगस्त, रविवार। इस दुनिया के इतिहास में कभी क्या घटित हुआ था ? अगर घटित हुआ हो तो इतिहास में इसका कोई रेकार्ड क्यों नही है ? ईसा मसीह ने क्यों कहा था : 'तुम लोगों के लिए चिंता की कोई बात नही है, मैं हूँ।' तथागत ने क्यों कहा था: 'संघं शरणं गच्छामि, बुद्धं शरण गच्छामि।' सुकरात ने क्यों कहा था : 'जूरी के माननीय सदस्यो ! जहाँ तक मृत्यु का संबंध है, आप आशावान रहें। और यह मृत्यु इतनी अवश्यंभावी होती है कि किसी भी भलेमानस का कोई भी बुरा कर ही नहीं सकता, वह चाहे जीवित हो अथवा मृत। देवता भी भले व्यक्ति की कुशलता के प्रति उदासीन नहीं होते।'[1]

तब तुम लोगों ने मुझे सारी बातें क्यों सिखायी है ?

वसुमती देवी ने पुकारा, "कुसुम ?"

जब से गृहस्वामिनी विधवा हुई हैं, कुसुम उनके कमरे के फ़र्श पर

---

1. 'Be hopeful then, gentlemen of the jury, as to death; and this one thing hold fast that no evil can happen to a good man, whether alive or dead; even gods are not indifferent to his well-being.'

सोया करती है। मालकिन को कब क्या ज़रूरत पड़ जाये, कौन कह सकता है। सोने के पहले कुसुम वसुमती देवी के पैर दाबती है। आधी रात में भी कभी-कभार बुलाहट होती है।

वसुमती देवी बोली, "एक गिलास पानी दो, कुसुम।"

कुसुम ने फ्रिज से पानी लाकर माँ जी को दिया। खाली गिलास को उठाकर वह यथास्थान रख आयी। उसके बाद मच्छरदानी खोंसकर रोशनी बुझा दी और फिर से लेट गयी।

लेकिन वह रात और रातों से भिन्न थी।

वसुमती देवी ने पुकारा, "कुसुम!"

कुसुम घबरा कर उठ बैठी; बोली। "क्या, माँ जी!"

"उस कमरे में मुन्ना चिल्ला क्यों रहा है? उतनी किस चीज़ की आवाज हो रही है, री?"

इतनी देर के बाद कुसुम को जैसे अब सुनायी पड़ा हो। वह भी ध्यान से सुनने लगी। चारों तरफ धड़ाम-धड़ाम आवाज हो रही है, कोई जैसे कुछ तोड़ रहा है। कोई खिड़की और दरवाज़े को तोड़-फोड़कर पटक रहा है।

वसुमती देवी बोलीं, "चलूँ, उठकर दरवान को बुलाऊँ...।"

कुसुम बोली, "आपको उठना नहीं पड़ेगा माँजी, मैं देख आती हूँ। दरवान को बुला लाती हूँ।"

कुसुम कमरे से निकलकर बाहर आयी। बाहर कॉलेप्सिबल गेट है। चाबी रासबिहारी के पास रहती है। रासबिहारी कांतिकराय का पुराना विश्वस्त नौकर है। बहुत दिनों के परिचय की वजह से इस घर का अपना आदमी हो गया है। लेकिन बूढ़ा हो जाने के कारण अब पहले की तरह खट नहीं सकता है। पहले कभी गृहस्वामी के साथ, कभी मेहमानबाबू के साथ दिल्ली वगैरह घूम आया है, उन लोगों की सेवा कर चुका है।

रासबिहारी को पुकारना नहीं पड़ा। आवाज़ सुनकर वह बहुत पहले ही उठ चुका था। ताला खोलकर अन्दर घुस चुका था। रात में रासबिहारी आम तौर से बरामदे की रोशनी बुझा दिया करता है। लेकिन तब तमाम घर की रोशनियाँ जल रही थीं।

"कुसुम, तेरी माँजी कहाँ है?"

कुसुम बोली, "माँजी ने ही मुझे देखने को भेजा है। भैयाजी के कमरे में क्या हो रहा है जी, ?"

भैयाजी के कमरे क्या हो रहा है, कुसुम तब तक समझ नहीं पायी थी। मुनीमजी की नींद भी तब टूट चुकी थी। [illegible] ने [illegible] अपने परिवार के साथ रहता है। उसकी [illegible]। वह भी दौड़ता हुआ ड्योढ़ी के अंदर आया।

"भैयाजी...भैयाजी...!"

कमरे के बाहर से मुनीम जी दरवाजा खटखटाने लगे।

'भैया जी, भैया जी!"

रहे हैं। अब मुझे किसी पर विश्वास नहीं रहा।'

'बहुत दिन पहले मास्टर साहब घर पर पढ़ाने के लिए आया करते थे। एक ही मास्टर नहीं थे, मेरे लिए सात-सात प्रोफ़ेसर थे। लेकिन उन सातों मे गोकुल बाबू प्रमुख थे। अंग्रेजी पढ़ाया करते थे। कहाँ, गोकुल बाबू की किसी भी बात से आज की घटना का कहाँ कोई ताल-मेल है! 1946 ईसवी के पांच अगस्त, रविवार की घटना से कोई ताल-मेल नहीं है।'

'भैयाजी, भैयाजी, दरवाजा खोलिए।"

कुसुम ने बैजू के पास जाकर पूछा, 'क्या हुआ, बैजू ?"

गिरधारी भी निकट आकर खड़ा हो गया था। वह भी पुराने ज़माने का आदमी है। दामाद साहब के साथ विलायत हो आया है। मुन्ना को जनमते देख चुका है। कुसुम ने उससे भी पूछा, "क्या हुआ है, गिरधारी ?"

"भैयाजी, भैयाजी !"

रात जब काफी ढल चुकी थी, एक मिलिट्री-डिटेक्टिव ने आकर दरवाज़े को खटखटाना शुरू किया।

'दरवाज़ा खोलो, दरवाज़ा खोलो, ओपिन द डोर !"

स्विनी ने अन्दर से दरवाज़ा खोल दिया। अमेरिकन आर्मी का मेजर। मेजर चार्ल्स डब्लू० स्विनी। मेजर होने से क्या होगा, उम्र बहुत ही कम है। सिर्फ चौबीस साल का, जिसे युवक कहा जाता है। कुल मिलाकर अब तक दाढ़ी-मूँछें उगी हैं। उसके सामने विशाल भविष्य पड़ा है।

"ह्वाट्स अप ? क्या चाहिए ?" उसने पूछा।

'आप मैसाचुसेट्स से आये है ?"

"हाँ।"

"आपका शुभ नाम ?"

"मेजर चार्ल्स डब्लू० स्विनी।"

"फिर आपको एक बार मेरे साथ आना होगा :"

"कहाँ !"

"टारगेट एरिया में।"

टारगेट एरिया का अर्थ हुआ एक्शन एरिया। यानी दरअसल काम

करना है। अब केवल लेटे-लेटे ऊँघने से काम नही चलेगा और न बैठे-बैठे आराम करने से ही। अब काम चाहिए। अब असली काम की फरमाइश हुई है।

उसके बाद दोनों व्यक्ति गाड़ी मे बैठकर चल पड़े। फिर निर्धारित स्थान में पहुँचकर स्विनी के कान से मुँह सटाकर कहा, 'आपको अमेरिका के लिए एक टॉप सिक्रेट काम करना पडेगा।"

"कौन-सा काम ?"

मिलिट्री में जो एक बार दाखिल हो चुके हैं, उन्हें इस तरह का प्रश्न नही करना चाहिए। उनके कामों का एक ही नियम है—करो या मरो। देश नहीं, मानवता नही, ममता नही, दया नही। तुम्हारा एक ही फ़र्ज है—हुक्म की तामील करना। जिन्होने तुम्हारी कोई भी हानि नही की है, जिन्हें तुम पहचानते तक नही हो, जिन्हें तुमने देखा तक नही है, आदेश मिलने पर तुम्हे उन्ही लोगों पर बम फेंकना पड़ेगा।

तब बम फेंकने की कला मे सभी पायलेट पारंगत हो चुके थे। छोटी-छोटी जमात मे पायलेट रात के अँधेरे मे फ्लोरिडा के आकाश मे चले जाते हैं। उनकी जीवन-यात्रा नियम और अनुशासन से बँधी हुई है। वे सब नियम-कानून वाशिंगटन के ह्वाइट हाउस की गोपनीय बैठकों में बनाये जाते हैं। वहाँ के दफ्तरों के कागजात में यह लिखा रहता है कि दुनिया के किस हिस्से मे कितने आदमी वास करते हैं। उनका नाम क्या है, धर्म क्या है, विश्वास क्या है। वे आस्तिक है या नास्तिक ? वे हमारे पक्ष मे है या प्रतिपक्ष मे ? वे हम लोगो के ईश्वर मे आस्था रखते है या किसी दूसरी शक्ति मे ? अगर ये खबरें मालूम नही हैं तो वहाँ आदमी भेजो ! वहाँ के दूतावासमेंहमारे गुप्तचर हैं। उन्ही गुप्तचरो से मुलाक़ात करो। पता लगाओ कि उनकी गतिविधि क्या है ? जरूरत पडने पर वहाँ के लोगों को रिश्वत दो। उन्हे पकड़-धकड़कर न्यौता दो और उन्हे दूतावास मे ले आओ। लंच खिलाओ। उनसे हँस-हँसकर बातचीत करो, वे तुम्हारे वश मे आ जायेंगे। सफेद चमड़े का आदमी सम्मान करते हैं तो वे बात की बात मे बेबस हो जाते हैं। उनके स्तर पर उतरकर उनसे मिलने-जुलने की बहानेबाज़ी करो। लेकिन उनकी समझ में यह बात नही आनी चाहिए कि हम लोग उनके स्वामी हैं और वे

हमारे दास हैं। और उस पर भी अगर वश में न आयें तो शराब पिलाओ। कॉकटेल पार्टी का नाम करके उन्हें भरपूर शराब पिला दो। वे लोग सच्चरित्रता का बड़ा ही गुणगान करते है, वे आर्य-सभ्यता की बड़ाई करते है। उन लोगों का चरित्र बरबाद कर डालो, आर्य-सभ्यता के उनके गर्व को धूल में मिला दो। उन लोगों के सिर पर बम बरसा दो।

"भैयाजी, भैयाजी !"

कुसुम को तब भी भैयाजी के कमरे में धड़ाम-धड़ाम आवाज होती सुनायी पड़ रही थी। मुनीम जी क्या करे, समझ में नहीं आया। गिरधारी बगल में ही खड़ा था। उससे कहा, "अरे गिरधारी, माँजी कहाँ हैं ?"

कुसुम के कानों में यह बात पहुँची। गिरधारी के बदले उसने ही कहा, "माँजी ने मुझे यह जानने के लिए भेजा है कि यहाँ किस चीज़ का शोर-गुल मचा हुआ है।"

बात समाप्त होते-न-होते वसुमती देवी स्वयं वहाँ आकर उपस्थित हुईं।

"यहाँ क्या हुआ है, रे गिरधारी ? मुन्ना के कमरे के अन्दर क्या हो रहा है ?"

मुनीम ने कहा, 'हुज़ूर, यही जानने के लिए तो मैं दरवाजा खटखटा रहा हूँ। कोई जवाब ही नहीं दे रहा है।"

"कमरे के अन्दर और कौन है ?"

"जी, मुन्ना बाबू के सिवा और कौन हो सकता है !"

"फिर दरवाज़ा क्यों नहीं खोल रहा है ? मुन्ना अकेला लाइब्रेरी में क्या कर रहा है ?"

लाइब्रेरी में मुन्ना क्या कर रहा है, यह अगर मालूम ही होता तो अब तक शोर-गुल क्यों मचा रहता ?

वसुमती देवी ने कहा, "फिर दरवाजा तोड़ डालो।"

आखिर दरवाजा तोड़ना ही पड़ा। उस ज़माने के बर्मा टीक का दरवाजा था। कार्तिकराम ने अच्छे ठेकेदार से दरवाज़े और खिड़कियाँ बनवायी थीं। मज़बूत लोहे-लक्कड़ का बना मकान है। गृहस्वामी ने पैसा

खर्च करने में कंजूसी नही की थी और न पैसे का कभी अभाव ही रहा था।
अंत मे गैंती की चोट से दरवाजा टूटकर गिर पडा।

बहुत दिन पहले कात्तिकराय ने जब इस मोहल्ले में मकान बनवाया था, उसमें कीमती लोहा-लक्कड़ खरीदकर लगाया था। इस उम्मीद से लगाया था कि वंश-परंपरा मे पीढी-दर-पीढी के लिए यह मकान राय-वश के ऐश्वर्य का तीर्थ-स्थल बना रहेगा। एक दिन सभी उँगली के इशारे से दिखाकर कहेगे—यह कात्तिकराय का मकान है भाई, यही आँटो इजीनियरिंग वर्क्स की बुनियाद डाली गयी थी।

वसुमती देवी की उम्र अब ढल चुकी है। अब सब-कुछ देख-सुनकर वह गुमसुम पडी रहती है। जरूरत-बेजरूरत मुन्ना की भलाई के लिए दौड-धूप करनी पड़ती है। लेकिन तब वह ऐसी नही थी। उन दिनों की तसवीरें दीवारों पर टँगी है। जब जवाहरलाल नेहरू लखनऊ कांग्रेस मे प्रेसिडेंट हुए थे तब कात्तिकराय और वसुमती देवी यहाँ से डेलिगेट बनकर गये थे। वहाँ वसुमती देवी का कितना सम्मान हुआ था!

उस दिन पूरे अधिवेशन मे सबकी आँखें वसुमती देवी पर टिकी हुई थी। जवाहरलाल नेहरू वसुमती देवी को नमस्कार कर रहे है, यह तसवीर उस दिन तक उनके मकान की दीवार पर टँगी थी।

उसके बाद ?

उसके बाद कितने ही दिन लुढक गये है। पृथ्वी उसके बाद चुपचाप कितनी ही बार अपनी धुरी पर परिक्रमा कर चुकी है। राय-परिवार के प्रासाद के कंगूरे दो-दो बार धराशायी हो चुके है। फिर भी उन्होंने इस परिवार की मर्यादा को ध्वस्त नही होने दिया है। राय-वंश की पताका को ऊँचे मे फहराया है। पहले जब पति की मृत्यु हुई, वह कुछ क्षणों के लिए दिग्भ्रमित-सी हो गयी थी। सोचा था, हो सकता है कि वह भी तत्काल टूट जाये।

लेकिन टूटी नही।

सरकार बाबू को बुलवाकर कहा था, "फैक्टरी के कैशियर को एक बार मेरे पास बुला लायें।"

सचमुच वसुमती देवी का आचरण देखकर उस दिन सभी हैरान हो

गये थे। वह पत्थर की तरह कठोर कैसे हो पायीं, यह सोचकर सभी चौंक पड़े थे। सभी ने सोचा था कि हो-न-हो, रुपये ने ही उस दिन वसुमती देवी को स्वस्थ बनाये रखने में भूमिका अदा की। वसुमती देवी को भी यह बात मालूम थी। लेकिन और-और लोग क्या सोचते हैं, इसके लिए माथापच्ची करने का तब उनके पास समय नहीं था। फ़ैक्टरी के कैशियर के आते ही कहा था, "कल से मैं रोज एक घंटे के लिए दफ़्तर जाया करूँगी। सभी को यह बात सूचित कर दे।"

यहाँ तक कि उनकी लड़की वीणा को भी आश्चर्य हुआ था!

'माँ, तुम फैक्टरी जाओगी?" उसने पूछा था।

वसुमती देवी बोली थीं, "क्यों नही जाऊँगी, मैं भी तो कंपनी के डाइरेक्टरों में से एक हूँ।"

"मगर तुम हुक्म करोगी तो," वीणा ने कहा था, "दफ़्तर की फाइल वगैरह वे लोग यहीं पहुँचा जाया करेंगे।"

"सो पहुँचा जायेंगे, मगर वे यह तो नही समझेंगे कि कंपनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर नही हैं। मैं खुद दफ़्तर जाऊँगी तो मैनेजिंग डाइरे-क्टर की कमी नही अखरेगी।"

"तो तुम ही कंपनी की नयी मैनेजिंग डाइरेक्टर बनोगी!"

वसुमती देवी बोली थीं, "मैं क्यों मैनेजिंग डाइरेक्टर बनूँगी! संतोष लंदन से लौटते ही मैनेजिंग डाइरेक्टर का भार संभालेगा। मेरे लड़का तो नही है, मेरा दामाद ही मेरा लड़का है।"

यही हुआ। कार्तिकराय की मृत्यु की खबर पाकर संतोष राय ही कंपनी का मैनेजिंग डाइरेक्टर बना। कंपनी जिस तरह चल रही थी उसी तरह चलने लगी। ऑटो इंजीनियरिंग के स्टाफ़ को महसूस नही हुआ कि अब मिस्टर राय नही रहे। ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स हमेशा ही हिन्दुस्तान के बाहर से पार्ट्स मँगाता आ रहा है। यहाँ बम्बई में उसकी फैक्टरी है। उसी गाड़ी के ईस्टर्न रीजनल डिस्ट्रीब्यूटर हैं ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स। यहाँ न केवल गाड़ियों की बिक्री ही होती है बल्कि गाड़ियों की मरम्मत भी की जाती है। गाड़ी के विदेशी पुर्जों की बिक्री की जाती है। संतोष तब छोटा था। संतोष को पता भी नहीं था कि

इतनी जल्दी उसे सारा भार संभालना पड़ेगा।

लेकिन दुनिया क्या किसी के लिए रुकी रहती है ? जुलियस सीजर की मृत्यु के बाद क्या रोम साम्राज्य रुकने की स्थिति मे आ गया था ! रोम, यूनान, मिस्र कोई भी रुकने की स्थिति मे नही आया था। इतना बड़ा जो फ़ारिस का साम्राज्य है, वह भी मौजूद है। हो सकता है कि उनका भूगोल बदल गया हो, इतिहास बदल गया हो। हो सकता है कि कालचक्र के कारण उनके नाम मे भी बदलाव आ गया हो। इतिहास की बड़ी-बड़ी पुस्तकों मे हो सकता है कि उनके उत्थान-पतन की कहानी के सन्दर्भ मे बड़े बड़े परिच्छेद लिखे गये हों। हो सकता है कि उसी इतिहास को घोटकर और परीक्षा मे उत्तीर्ण होकर बहुतो को बड़ी-बड़ी नौकरियाँ मिली हों। लेकिन पृथ्वी कभी रुककर खड़ी नही हुई है। ईसामसीह, तथागत बुद्धदेव, शंकराचार्य, मुहम्मद साहब परमहंसदेव, स्वामी विवेकानन्द, चैतन्यदेव—सभी ने पृथ्वी को सीधे रास्ते पर चलाने की कोशिश की, लेकिन पृथ्वी क्या हमेशा सीधी राह पर ही चलती आयी है ?

कात्तिकराय की मृत्यु के बाद ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स अपनी टेढ़ी-मेढ़ी राह पर ही अग्रसर हो रहा है। लेकिन ऐसा होने के बावजूद उसकी गति रुक नही गयी है।

लेकिन अब रुक गयी।

न रुकने पर भी रुक गयी है। इस लोकनाथ ने ही उसे हमेशा के लिए रुकने की स्थिति में लाकर छोड़ दिया है।

लेकिन रुक क्यों गयी, उसी के कारणों पर प्रकाश डालने के उद्देश्य से यह कहानी लिखी जा रही है।

महाकाल के परिप्रेक्ष्य में यह बीसवी शताब्दी है ही कितनी बड़ी ! इतिहास की पुस्तकें पढ़ते-पढ़ते लोकनाथ को भी एक दिन यही अहसास हुआ, एक दिन पाँवों का आश्रय-स्थल जलमय था। उस दिन नियमपूर्वक पूर्व दिशा मे सूरज उगता था और नियमपूर्वक पश्चिम में अस्त होता था। हज़ारों वर्ष इसी तरह व्यतीत होने के बाद एक दिन विश्व-ब्रह्मांड की परिक्रमा के फल-

स्वरूप उस जलराशि के अभ्यंतर को भेदकर एक भूखंड बाहर निकल आया। वही हम लोगों का यह हिमालय है। धीरे-धीरे उस भूखंड पर जड़ और जीव-जगत् का आविर्भाव हुआ। वृक्ष, लता, गुल्म और उसके साथ अवतरण हुआ जीवन का। सरीसृप, पक्षी, दोपाये और चौपाये आये। उसके बाद मानव पैदा हुआ। विश्व-ब्रह्मांड की अंतिम सृष्टि। उसने जन्म लेकर ऊपर की ओर निहारा। और निहार कर आश्चर्य में डूबने-उतरने लगा। उसने अपने आपसे प्रश्न किया—वह कौन है ? किसने उसकी सृष्टि की है ? उसका उद्देश्य क्या है ! उसने जन्म क्यों लिया ? उसका अंत कहाँ है ?

लोकनाथ अपने-आपसे एक दिन यही प्रश्न पूछ बैठा।

एक दिन छुटपन में लोकनाथ ने नानी अम्मा से पूछा, 'मैं कौन हूँ, नानी अम्माँ ?"

वसुमती देवी हतप्रभ हो गयीं।

'यह कैसी बात है ?" उन्होंने कहा, "तू कौन है, इसका मतलब ?"

लोकनाथ बोला, "मतलब यह कि मैं कहाँ से आया हूँ, नानी अम्मा ?"

वसुमती देवी और अधिक हतप्रभ हो गयी।

लड़की को बुलाकर कहा, 'अरी ओ वीणा, देख तेरा लड़का क्या पूछ रहा है !"

वीणा कमरे में आकर खड़ी हुई। "क्या पूछा ?"

वसुमती ने लड़की को सब-कुछ बताया। फिर बोली, "तेरा लड़का बड़ा इंटेलिजेंट होगा। इतनी कम उम्र में ही उसे इतना ज्ञान है !"

लेकिन लोकनाथ छोड़ने वाला जीव नहीं था। वह पूछता, "बताओ न नानी अम्मा, मैं कौन हूँ ?"

वसुमती देवी कहती, "तू मेरा नाती है, वीणा का लड़का ! और क्या होगा ! अपने पिता संतोष राय की तू सन्तान है।"

"सो तो मालूम है, लेकिन मैं आया कहाँ से हूँ ?"

वीणा कहती, "और कहाँ से आयेगा ? आकाश से आया है।"

"और तुम ?...कहाँ से आयी हो ?

"आकाश से।"

"नानी अम्मा कहाँ से आयी है ?"

"नानी अम्मा भी आकाश से आयी है।"

"और मेरे बाबूजी ?"

"बाबूजी भी आकाश से आये है।"

लोकनाथ उस उत्तर को सुनने के बाद बचपन से ही बीच-बीच में आकाश की ओर निहारा करता था। उसी आकाश, उसी सामने के आकाश से ? इस मैदान के पार के मोहल्ले के सभी आदमी क्या फिर आकाश से ही आये है ? ट्राम के रास्ते के किनारे जो सब मकान है, उन मकानों के आदमी भी तब क्या आकाश से आये हे ? उसके बाद एकाध दिन बैजू के साथ वह छत पर जाता था। छत पर चढ कर दूर—बहुत दूर तक आँखें फैला देता था। कितने ही मकान कितने ही कारखाने। कारखानों के माथे की चिमनियों से धुएँ का अम्बार निकल रहा है। उसके पीछे कितने ही आदमी हैं। आदमियों की विशाल भीड। कलकत्ता शहर आदमियों से भरा है। कलकत्ता के बाद एक और कलकत्ता है। उसके पार एक और कलकत्ता। और एक। और कितने ही कलकत्ते। पृथ्वी में भरे कलकत्तों की जमात सारी पृथ्वी पर रेल-पेल कर रही है।

वह बैजू से पूछता, "ए बैजू, इतने सारे आदमी कहाँ से आये है ?"

बैजू कहता, "गाँव से।"

"गाँव से ? गाँव का मतलब ?"

बैजू कहता, "गाँव का मतलब है ग्राम।"

लोकनाथ की समझ में 'गाँव' और 'ग्राम' का अन्तर नहीं आता था।

"तू कहाँ से आया है, बैजू ?"

"मैं ? मैं बिहार से आया हूँ।"

"बिहार ? बिहार कहाँ है ?"

बैजू कहता, "बहुत दूर। वहाँ के छपरा जिले से आया हूँ।"

लोकनाथ आकर नानी अम्मा से कहता, "जानती हो नानी अम्मा, बैजू बिलकुल नासमझ है —बिलकुल गँवार।"

"क्यो ? उसने क्या किया ?"

"जानती हो, वह क्या कहता है ? कहता है कि वह बिहार के छपरा जिले से आया है। कितना गँवार है वह ! हम लोग सभी आकाश से आये

हैं और वह कहता है छपरा जिले से आया हूँ। उसे कुछ भी मालूम नहीं है—गँवार है गँवार!"

वसुमती देवी अपनी लड़की से कहती, "तेरा लड़का बड़ा ही इंटेलिजेंट होगा। वह हम लोगों के खानदान का नाम ऊँचा करेगा। यह गृहस्वामी की तरह ही अक्लमंद है।"

यह सब बचपन की बातें हैं।

उसके बाद जब थोड़ा बड़ा हुआ तो एकाएक उसने अपने घर के सभी व्यक्तियों को रोते पाया। बाहर से भी अनेकों व्यक्ति वहाँ जमा हो गये थे। लोकनाथ इस कमरे से उस कमरे मे पहुँचा। सभी के चेहरे उतरे हुए थे।

माँ के पास जाकर लोकनाथ ने पूछा, "तुम लोगों को क्या हुआ है, माँ?"

वीणा लोकनाथ से लिपटकर फफक-फफककर रोने लगी।

लोकनाथ ने माँ के हाथों से अपना सिर छुड़ाकर पूछा, "माँ, रो क्यों रही हो? तुम्हें क्या हुआ है, बताओ न?"

माँ तब रोये या लड़के की बात का जवाब दे?

लोकनाथ अब बरदाश्त नहीं कर सका। वह दौड़ता हुआ दूसरे कमरे मे गया। वहाँ भी रोना-पीटना मचा हुआ था। नानी अम्मा रो रही थी। मकान का मुनीम, रासबिहारी, नौकरानी, दरवान, कुसुम, रसोइया—सभी रोनी-रोनी सूरत बनाये हुए हैं। कहीं किसी तरह से आनंद की छाया हिल-डुल नहीं रही थी। चारो ओर उदासी का वातावरण छाया हुआ था।

थोड़ी देर बाद किसी ने लोकनाथ को सुला दिया और वह ऊँघने लगा। नींद एक ऐसी चीज है जो तत्काल आदमी को सुख-दुख से परे कर देती है। लेकिन उसी नींद की हालत मे उस दिन जैसे वह एक युग की परिक्रमा करके लौट आया था। एक दिन की ही निद्रा के कारण मनुष्य के जीवन मे परिवर्तन आ सकता है, उसका बोध सम्भवतः उसे उसी दिन हुआ था।

वह जैसे एक नयी ही दुनिया थी। नवीन आविष्कार की तरह तमाम

घर के चेहरे में तब और ज्यादा बदलाव आ गया था। सभी [illegible] चेहरे थे, सभी नये-नये आदमी। उसी अंतराल में वह एकबारगी [illegible] पर जाकर उपस्थित हो गया। वहाँ जाकर देखा, उसके पिताजी बड़े बरा-मदे पर लेटे हैं।

बाबूजी को ऐसी स्थिति में लेटा देखकर लोकनाथ उसी ओर दौड़ लगाने जा रहा था।

एकाएक किसी ने आकर उसे पकड़ लिया।

वसुमती देवी ने उसे देख लिया था। वह बोलीं, "उसे यहाँ कौन ले आया? अरे रघु, ओ गिरधारी, बैजू!"

वसुमती देवी ने ढेर सारे नामों का उच्चारण किया। जो कोई हो इस लड़के को पकड़कर ले जाये। जैसे वह समझ नहीं सके कि उसके पिता की मृत्यु हो गयी है। उधर वसुमती देवी अपनी लड़की की देख-भाल में व्यस्त थी। लंदन से हवाई जहाज द्वारा दामाद की लाश लायी गयी है। इस वक्त उनके हाथों में ढेर-सा काम है। घर पर इतने आद-मियों के रहने के बावजूद मुन्ना को उसे खुद ही सभालना होगा?

लेकिन उसके बाद ही मजेदार घटना घटी। पहले दिन से ही मुन्ना ने गिरधारी की नाको-दम कर दिया।

लोकनाथ ने पूछा, "बाबूजी वहाँ क्यों लेटे हैं! बताओ न!"

शुरू में गिरधारी ने बताना नहीं चाहा। बाबू वहाँ बरामदे पर क्यों लेटे हैं, उसका कारण कौन क्या बताएगा!

अंततः बहुत दबाव देने के बाद गिरधारी ने कहा, "बाबू मर गये हैं।"

"मर गये हैं का मतलब क्या होता है, जी?"

गिरधारी बोला, "मर जाने का मतलब यही हुआ कि बाबू अब खाएँगे-पिएँगे नहीं, न जाएँगे और न साँस लेंगे। बाबू को श्मशान में ले जाकर जला दिया जायेगा।"

"क्यों?...बाबूजी को क्यों जला दिया जायेगा? बाबूजी को तकलीफ नहीं होगी।"

"नहीं; मरने के बाद कोई तकलीफ नहीं होती है।"

"मगर बाबूजी मर क्यों गये?"

गिरधारी बच्चे के प्रश्नों का उत्तर नहीं देना चाहता था। लेकिन मुन्ना बाबू छोड़ने वाला नहीं था।

वह कहने लगा, "बताओ न गिरधारी, बताओ न, बाबूजी क्यों मर गये ?"

गिरधारी वह तो क्या कहे! जिस प्रश्न को युगों पहले एक दिन एक राजा के लड़के ने अपने रथ के सारथी के समक्ष उछाल कर उसे तंग कर मारा था, किले के पार के एक अभिजात परिवार का एक बालक उसी प्रश्न का समाधान सुनना चाहता है।

सतोष राय की मृत्यु हो गयी। श्राद्ध संपन्न हुआ। अनेक अतिथि-अभ्यागतों का आविर्भाव हुआ, लेकिन उस दिन के उस छोटे बालक लोकनाथ के प्रश्न का उत्तर कोई भी न दे सका। उसकी समझ में इतना ही आया कि इस धरती में जिन्होंने जन्म लिया है, किसी दिन वे उनके पिता की तरह बूढ़े होकर मर जायेंगे। और यह भी उसकी समझ में आया कि मनुष्य को जिस तरह यह पता नहीं रहता है कि वह कहाँ से आया है, उसी तरह मृत्यु के बाद वह कहाँ जायेगा, इसका पता भी उसे नहीं रहता है।

उसके बाद जब उसकी उम्र बढ़ी तो उसकी माँ भी एक दिन चल बसी। उस दिन भी ठीक वैसा ही हुआ। उसी तरह माँ बरामदे पर चित्त लेटी थी। पहले की तरह ही कोई शब्द बाहर नहीं निकल रहा था। फिर कई आदमी उसकी माँ को एक खाट पर रखकर और कंधों पर लादकर कहीं चले गये।

याद है, उस दिन सबको रोते देखकर लोकनाथ की आँखों से भी रुलाई फूट पड़ी थी।

उसके बाद रह गयीं सिर्फ नानी अम्मा, ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स की मैनेजिंग डाइरेक्टर मिसेज़ वसुमती देवी। इक्यावन प्रतिशत शेयरों की मालकिन।

वसुमती देवी ने लोकनाथ के शिक्षकों से कहा, "देखिए, मेरा नाती ही बड़ा होकर एक दिन ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स का मैनेजिंग डाइरेक्टर होगा। आप लोग उसी तरह की उसे शिक्षा-दीक्षा दीजिए।"

लेकिन लोकनाथ के पागलपन का भाव तब भी दूर नही हुआ। किसी नवीन तत्त्व को पाते ही वह प्रश्नो की झड़ी लगा देता था।

"यह क्या है, सर !" वह पूछता।

मास्टर साहब घबरा जाते थे।

"ऐसा हमेशा से होता आ रहा है, हमेशा ऐसा ही होता रहेगा। इसमे 'क्यों' की कोई बात नहीं है।"

लोकनाथ फिर भी खुश नही होता था। लेकिन 'क्यों' की बात क्यों नहीं है ? हर चीज का कोई कारण अवश्य होता है।

अन्त में असमर्थ शिक्षक-वर्ग उत्तर देता था, "तुम और बड़े हो जाओ, तब तुम और अधिक किताबें पढोगे, और अधिक ज्ञान पाओगे।"

प्रश्नों की पीडा अतत: वसुमती देवी भी अब महसूस करने लगीं।

एक दिन वह बोलीं, "इतनी बातों का जवाब नही दे पाऊँगी, बाबा। बच्चे हो, बच्चे की तरह रहो। बच्चे इतनी बातें करते है ? अभी तुम बच्चे हो, जो कहती हूँ, वही करो...।"

लोकनाथ ने कहा, "लेकिन मैं जानना जो चाहता हूँ।"

वसुमती देवी ने कहा, "जानने की इतनी इच्छा अच्छी नही होती है। बच्चा बच्चे की तरह रहता है, समयसे पूर्व इतनी परिपक्वता अच्छी नही है।"

परिपक्वता ! उसी दिन लोकनाथ ने इस शब्द को डायरी में लिख लिया। नया शब्द था। ऐसे ही नये-नये शब्दों को लिखने के कारण उसकी कॉपी के पन्ने भर गये थे। नया-नया कौतूहल था, नये-नये प्रश्न, नये-नये शब्द—सब-कुछ उसकी कॉपी में लिखा रहता था। एक दिन जब वह बड़ा होगा तब इस कौतूहल, इन प्रश्नों और इन शब्दों का समाधान होगा। तब लोकनाथ आदमी होगा।

एक दिन लोकनाथ की साल-गिरह के उपलक्ष्य मे वसुमती देवी ने हम लोगों को निमन्त्रित किया। दो-चार व्यक्तियों को। लोकनाथ ने मुझे बुलाकर इसकी सूचना दी—नानी अम्मा ने तुम लोगों को घर पर आने को कहा है।

वही सभवत: लोकनाथ के घर पर हमारा पहले-पहल जाना था। घर के सामने दीवार से घिरा कंपाउंड था। फाटक पर दरबान। भीतर श्वेत

प्लास्टिक का फ़र्श। झाड़-फ़ानूस। झलमलाते फ़र्नीचर। अतरंग अभ्यर्थना। हम लोगों ने स्वयं को कृतार्थ अनुभव किया। आनंद से गद्गद् हो गये। हम सभी मध्यवित्त परिवार के लड़के थे। लोकनाथ के साथ एक ही क्लास में पढ़ा करते थे। लोकनाथ क्लास में प्रथम आता था।

हम लोग जो-जो चीज़ें उपहार के रूप में ले गये थे उनकी ओर लोकनाथ ने आँख उठाकर भी नहीं देखा। हम लोगों के उपहार कम कीमत के थे। माँ-बाप से ज़ोर-जबरन पैसा वसूल करके उन चीज़ों को खरीदा था। किसी ने भेंट की थी रवि ठाकुर की पुस्तक, किसी ने सस्ता फाउंटेनपेन, किसी ने विद्यासागर की फ्रेम में मढ़ी तसवीर। इसी क़िस्म की सारी चीज़ें थीं।

लोकनाथ की नानी अम्मा हम लोगों को देखकर बेहद प्रसन्न हुई।

"वाह," उन्होंने कहा, "तुम लोगों का रुचिबोध बड़ा ही अच्छा है! तुम लोगों की पसन्द बड़ी बेहतरीन है!"

लेकिन लोकनाथ जैसे प्रसन्न नहीं हुआ। हर वक़्त मुंह टेढ़ा किये रहा। वह तब अपने घर का वैभव दिखाने में व्यस्त था—कितना बड़ा मकान है, कितने बड़े-बड़े कमरे हैं, यद्यपि रहने वाले दो ही व्यक्ति हैं—नानी अम्मा और नाती! लोकनाथ जिस कमरे में बैठकर लिखता-पढ़ता है उस कमरे में कितना खूबसूरत लैंपपोस्ट है! पकड़कर खीचने से वह नीचे चला आता है और फिर ठेल देने से वह ऊपर चला जाता है। पुस्तकों के शेल्फ पर पंक्तिबद्ध पुस्तकों का ढेर है। नानाजी की विशाल लाइब्रेरी तो थी ही। उसके नानाजी विलायत से पुस्तकें खरीदकर लाया करते थे। चमड़े की जिल्द से मढ़वाकर सुनहले अक्षरों में नाम लिखवा लिया करते थे। उनकी देखा-देखी नानी अम्मा ने लोकनाथ को भी अनेक तरह की पुस्तकें खरीद दी है।

और तसवीरें!

लोकनाथ उन प्रसिद्ध-प्रसिद्ध तसवीरों को दिखाने लगा—"वह देखो, राजेन्द्रप्रसाद से मेरे नानाजी बातचीत कर रहे हैं। वह देखो, महात्मा गांधी हैं। महात्मा गांधी कलकत्ता आते थे तो हमारे ही घर पर रहते थे।"

मैंने पूछा, "वह कौन है?

लोकनाथ बोला, "श्रीनिवास आयंगर, कांग्रेस के प्रेसिडेंट। और वह हैं शरतचन्द्र बोस, सुभाष बोस, मोतीलाल नेहरू...।"

इसी मकान के इसी कमरे मे किसी फोटोग्राफर ने तसवीरें खींची थीं। उनके निकट दूसरे-दूसरे कितने ही महापुरुषों की तसवीरें टँगी हुई है। रामकृष्ण परमहस, स्वामी विवेकानंद, श्री अरविंद, लोकमान्य तिलक, गोखले, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, वकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय और भी कितने ही महापुरुष—हम लोग विस्मय-विभोर होकर देखने लगे। लगा, लोकनाथ धन्य है! लोकनाथ सौभाग्यशाली है! हम लोगों के चेहरे पर संभवतः वह भावना हिल-डुल रही थी। लोकनाथ को भी इसकी जानकारी थी। लोकनाथ को पता था कि हम लोग गरीब है, हम लोग मध्यवित्त परिवार के है और वह बड़े आदमी का दुलारा बेटा है।

'वह देखो" उसने कहा, "नानी अम्मा ने मुझे सालगिरह पर यह कलम दी है।"

"कलम ?"

शुरू से अंत तक सोने की मढ़ी एक कलम थी।

मैंने पूछा, "इसका दाम कितना है, जी ?"

गर्व से लोकनाथ की आँखे चमकने लगी।

'पाँच सौ तेरह रुपये।" उसने कहा।

हम लोग उसकी कीमत सुनकर चौक पड़े। एक कलम की इतनी कीमत! चाहे वह सोने की ही क्यों न हो, चाहे विलायती चीज ही क्यों न हो। लेकिन इतनी अधिक कीमत हो सकती है ?

लोकनाथ ने कहा, "पाँच सौ तेरह तो फिर भी सस्ती ही है। मेरी नानी अम्मा के पास एक कलम है, उसकी कीमत है आठ सौ चालीस रुपये।"

हम लोग जितने भी व्यक्ति निमन्त्रित होकर आये थे, सभी चौक पड़े। बड़े आदमी का कांड ही अलग होता है! उन लोगो को कितना सुख रहता है, कितना आराम, कितना मनमौजीपन! इस मनमौजीपन को वे लोग अपनी इच्छानुसार कार्य-रूप में परिणत करते है। इस दुनिया में बड़े आदमी ही धन्य है!

फिर भी हम लोगों का कौतूहल दूर नहीं हुआ। मैंने पूछा, "एक ही कलम की कीमत इतनी क्यों होती है, जी ?"

लोकनाथ बोला, "कलम की निब हीरे की है।"

"हीरे की ?"

"हाँ।" लोकनाथ ने कहा, "उसी हीरे के कारण ही उतनी कीमत लगती है।"

हम लोग तब और भी अधिक आश्चर्यचकित हो गये थे। कलम का कैप खोलकर उसकी निब की परीक्षा करने लगे। सुना है, औरतें हीरे के गहने पहनती हैं। वह भी हमेशा असली हीरा नहीं। नकली हीरे को भी असली हीरा कहकर लोग चला देते हैं। लेकिन कलम की निब हीरे से बन सकती है, इसकी हम लोगों ने कल्पना तक नहीं की थी। हीरे को हमने हाथ से छूकर देखा।

"यह क्या बिलकुल असली हीरा है ?" मैंने पूछा।

लोकनाथ ने एक कहक़हा लगाया।

'असली नहीं तो क्या नक़ली हीरा है ?" लोकनाथ ने कहा, "ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के मालिक का नाती नकली हीरे का फ़ाउंटेनपेन व्यवहार करेगा ? तुम लोग क्या बकते हो ? जानते हो, मेरी माँ का एक जोड़ा कगन है, उनकी क़ीमत है डेढ़ लाख रुपये।"

लोकनाथ के पुरखों के वैभव के परिप्रेक्ष्य में हम लोगों के द्वारा दिये गये छोटे-छोटे सस्ते उपहार जैसे हमें बड़ा ही लज्जित करने लगे। हम लोगों को उसने क्यों निमंत्रित किया ? या हम लोगों ने उसके निमंत्रण को क्यों स्वीकारा ? और अगर निमंत्रण स्वीकारा ही तो हम सस्ते उपहार देने क्यों गये ?

लोकनाथ बोला, "तुम लोग ये सब उपहार क्यों ले आये, भाई ? मैं तो इस कलम को काम में भी नहीं ला सकूँगा। रवि ठाकुर की तसवीर का भी उपयोग नहीं कर पाऊँगा।"

"क्यों ?"

'वह देखो, वह एक तसवीर रही। उसकी बग़ल में यह तसवीर क्या शोभा देगी ?"

यह सब अवश्य ही लोकनाथ का अहंकार बोल रहा था। लेकिन अहंकार करना जिसे शोभा देता है, उसके अहंकार में भी कोई दोष नही ढूंढना चाहिए। लोकनाथ हम लोगों से कितना बडा है, हम लोग इसे बेझिझक स्वीकार कर लेते थे। वह न केवल रुपयों की वजह से बड़ा था बल्कि लिखने-पढ़ने में भी वह हम लोगों से कहीं आगे रहता था। हमेशा वही फर्स्ट आता रहा, बहुत कोशिश करने के बावजूद हम लोगो मे से अनेक दूसरा, तीसरा—यहाँ तक कि पाँचवाँ स्थान तक प्राप्त नही कर सके। किसी तरह सिर्फ फेल होने के अगौरव से हम बचते आये थे।

उसी लोकनाथ से जब बहुत दिनों के बाद मुलाकात हुई, तब हिंदुस्तान के इतिहास के बहुत-से पृष्ठ उलट चुके थे। विश्व-युद्ध लोगों मे उद्वेलन जगाकर बीत चुका था। तमाम दुनिया का बाहरी और भीतरी चेहरा भी तब बदल चुका था। हम लोग लोकनाथ के दोस्त, मित्र, अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार, कब कहाँ काम-धंधे मे उलझ गये थे, उसकी भी सूचना रखने का हमें वक्त नही मिला था।

उसी समय लोकनाथ से मेरी मुलाकात हुई थी। उस दिन उसकी बातचीत सुनकर और उसकी चाल-ढाल देखकर मुझमें एक प्रकार का सदेह जगा था।

हम लोगों का और एक मित्र है—विकास। विकास एक दिन मेरे घर पर आया। उसी ने मुझसे कहा, "लोकनाथ की खबरें मालूम हैं ?"

"एक दिन रास्ते मे मिला था," मैंने कहा।

"देखकर तुम्हें क्या प्रतीत हुआ ?"

"लगा, दिमाग थोड़ा गड़बड़ा गया है, अन्यथा इस तरह दिन-भर सड़कों पर इस तरह चहल-कदमी क्यों करता !"

विकास बोला, "सुना है, अपने इतने दिनो के ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स में मालिकाना अधिकार उसने छोड दिया है।"

मैं भी संदेह कर रहा था कि उस तरह का कुछ हुआ है। या तो श्रमिक-सकट या कंपनी मे लाल बत्ती जल गयी है। चारों तरफ जब अशाति फैली हुई है और व्यवसाय के क्षेत्र मे मंदी का बाजार है, कारोबार छोड़ देना कोई अस्वाभाविक बात नही है।

विकास बोला, "नहीं, बात ऐसी नहीं है। उन लोगों का कारोबार अच्छा ही चल रहा था। लेकिन सुनने में आया है, दरअसल उसके पीछे किसी लड़की का हाथ है।

लडकी! लोकनाथ के चरित्र में और कोई दोष भले ही रहे, लेकिन लड़कियों के संसर्ग का दोष कोई उस पर मढ नहीं सकता है।

फिर भी जोर देकर कुछ कहा नहीं जा सकता। लोकनाथ के पास पैसा है, वह बडा आदमी है, नानी अम्मा मर जायेंगी तो सारी संपत्ति लोकनाथ को मिलेगी—यह तथ्य बाहरी लोगों से छिपा नहीं है। अगर कोई लड़की आकर घुल-मिल जाये तो दोष नहीं दिया जा सकता है।

विकास बोला, "लड़की रहने से कोई आपत्ति की बात नहीं है, लेकिन वह तो बिलकुल सस्ते किस्म की लड़की है।"

"तुम्हें कैसे मालूम हुआ?" मैंने पूछा।

विकास बोला, "मैंने अपनी आँखों से देखा है।"

"कहाँ?"

"पैरागन सिनेमा के पीछे जादूगोपाल की पकौड़ों की जो दुकान है, वहीं पर। देखा, लोकनाथ बैठकर एक लड़की से गप-शप कर रहा है।"

मैं बोला, "लेकिन जादूगोपाल की दुकान में बैठकर बातचीत करने की जगह कहाँ है?"

"सामने बैठकर गपशप करने की जगह नहीं है लेकिन अन्दर? लोकनाथ बिलकुल अन्दर चला जाता है। जहाँ आलू का चॉप और बैंगन के पकौड़े तैयार किये जाते हैं, मैंने देखा, दोनों वहीं बैठकर हँस-हँसकर बातचीत कर रहे हैं।"

"वह लड़की कौन है?"

विकास ने कहा, "पता नहीं। न मैंने खुद को उन्हें देखने का मौका दिया और न ही उन लोगों की नजर मुझ पर पड़ी।"

न केवल विकास से ही, बल्कि बहुत सारी जगहों से पता चला कि लोकनाथ ने अपना दफ्तर छोड़ दिया है। अपना सारा शेयर कंपनी के कर्मचारियों को दे दिया है। कर्मचारी ही अब अपनी कंपनी चला रहे हैं, वे ही मालिक बन बैठे हैं। लोकनाथ अब बेकार होकर घूमा-फिरा करता है।

निरुद्देश्य, लक्ष्यहीन घूमना-फिरना ही उसकी परिणति हो गयी है ।

इस तरह की बहुत-सी कहानियाँ जब बहुत-सी जगहों से कानों में पहुँच रही थीं, ठीक उसी समय वसुमती देवी ने मेरे दफ़्तर में उपस्थित होकर मुझे घर आने का बुलावा दिया ।

जादूगोपाल की पकौड़ी की दुकान में उस दिन वह लड़की आयी। जादूगोपाल तब ग्राहकों के साथ व्यस्त था। अकेला त्रैलोक्य चीज़ों के लेन-देन में फँसा था। दुकान के भीतरी हिस्से में अनाथ गरम तेल की कढ़ाई में कच्चा माल डाल रहा था और तलकर उन्हें बाहर निकाल रहा था।

वह लड़की आकर खड़ी हुई।

जादूगोपाल की नजर तब भी उस पर पड़ी नहीं थी। पैरागन सिनेमा थोड़ी देर बाद ही शुरू होने वाला था। अतः जितना झमेला है इसी वक़्त है जादूगोपाल को। नजर पड़ते ही वह लड़की जादूगोपाल की ओर बढ़ आयी।

आगे बढ़कर बोली, "मैं आ गयी, भैया !"

जादूगोपाल बोला, "थोड़ी देर रुकना होगा बहन, अभी बात करने की फुरसत नहीं है।"

वह लड़की उसके निकट बढ़ आयी। समझ गयी, अभी व्यस्तता का समय है। इस वक्त वहाँ आकर उसने अन्याय किया है। दरअसल वह इस दुकान की ग्राहक नहीं है। जो ग्राहक नहीं होता है उसके लिए दुकानदार माथा-पच्ची नहीं किया करते हैं। फिर भी दुकानदार जो उसकी बात सुन रहा है, उसकी बात पर ध्यान दे रहा है, यही बड़ी बात है। दुनिया में इससे बढ़कर किसी से उम्मीद करना अन्याय है।

थोड़ी देर के बाद भीड़ थोड़ी हलकी हुई। उस तरफ सिनेमा में घंटी बज उठी। खाने की चीज़ें किसी तरह खाकर ग्राहकों की जमात दौड़ती हुई हॉल के अन्दर पहुँची। इसके बाद जब मध्यांतर होगा तब भीड़ की एक दूसरी जमात आयेगी। तब त्रैलोक्य और अनाथ

हाथों से संभालने में असमर्थता का बोध करेंगे। तब ग्राहकों को संभालने के लिए जादूगोपाल को हाथ बँटाना होगा।

वह लड़की धीरे-धीरे आगे बढ़ आयी। निकट आकर बोली, "अब आपका हाथ थोड़ा खाली हुआ है, भैया।"

जादूगोपाल की दृष्टि फिर से उसकी ओर मुड़ गयी।

वह बोला, "आओ; आओ, बहन! हाथ खाली रहने का उपाय ही क्या है? सिनेमा के मोहल्ले मे दुकान है, वक़्त जितना ही बीतता जायेगा, भीड़ भी उतनी ही बढ़ती जायेगी।"

उसके बाद कुछ देर तक चुप रहने के बाद वह बोला, "लेकिन बाबू तो अब तक आये नहीं हैं।"

"आपने उनसे कहा था?"

"ज़रूर कहा है। सब समझा-बुझाकर कहा है। समय बड़ा ही बुरा गुज़र रहा है, बहन! इसलिए मुश्किल हो गयी है। वरना किसी लड़की की नौकरी का इन्तजाम करना लोकनाथ बाबू के लिए कठिन नहीं था। वह बहुत बड़े वंश की सन्तान हैं। अब भी अगर कॉरपोरेशन के मेयर से कह दें तो तुम्हारी नौकरी बात की बात मे हो जाये।"

उस लड़की को जैसे विश्वास ही नहीं हुआ। "कहने से ही नौकरी मिल जायेगी?" उसने पूछा।

जादूगोपाल ने कहा, "ज़रूर मिल जायेगी। बहुतों की हो चुकी है। सिर्फ़ कॉरपोरेशन ही क्यों, कलकत्ता के हर दफ़्तर में बाबू की पहुँच है। यही तो उस दिन मेरे नाम से कॉरपोरेशन ने मुकदमा दायर कर दिया था। उसका कहना था, मैं धुआँ उड़ाया करता हूँ, मेरे चूल्हे के धुएँ से लोगों की सेहत खराब होती है। फिर मैंने बाबू से कहा..."

"उसके बाद?"

"उसके बाद बाबू को एक दरख्वास्त देते ही सब रफ़ा-दफ़ा हो गया। उसी दिन से मैं बाबू का शागिर्द हो गया।"

उस लड़की ने पूछा, "आज लोकनाथ बाबू कब आयेंगे?"

जादूगोपाल ने कहा, "आने का वक़्त हो गया है ज़रा बैठ जाओ। कुछ खाओगी? भूख लगी है? मुझसे शरमाओ मत। थोड़ी सी घुघनी दूँ?"

शरमाओ मत, शरमाने से खुद तकलीफ उठाओगी।"

"अच्छा दीजिए।"

जादूगोपाल ने एक प्लेट में घुघनी रखकर आगे बढ़ा दिया।

लेकिन लड़की उसे ले कि उसके पहले ही लोकनाथ वहाँ आ धमका।

'लो, बाबू आ गये।"

हनहनाता हुआ लोकनाथ सीधे कारखाने के अन्दर घुस पड़ा। जादूगोपाल उसके सामने जाकर खड़ा हुआ। लोकनाथ के चेहरे पर जैसे उद्विग्नता की छाया हिल-डुल रही थी। एक तो कारखाने के अन्दर कोयले के चूल्हे की गरमी, उस पर सिर के ऊपर पंखे का न होना। जेब से रूमाल निकालकर वह अपने चेहरे का पसीना पोंछने लगा।

जादूगोपाल ने कहा, "जिसके बारे में मैं कह रहा था, वह यही है...।

और उसने उस लड़की को दिखा दिया।

लोकनाथ ने उस लड़की की ओर गौर से देखा और कहा, "मैं पहचान नहीं पा रहा हूँ, जादूगोपाल नाम क्या है? क्या जरूरत है?"

जादूगोपाल ने कहा, "आपको तो उसका नाम बता चुका हूँ। आपको याद नहीं है। नाम है सरजू—सरजू देवी।"

सरजूदेवी? लोकनाथ ने इस नाम को याद करने की कोशिश की। वह सुन चुका है। आजकल चारों तरफ़ इतने लोगों से जान-पहचान हो रही है कि उसके लिए सभी का नाम याद रखना मुश्किल हो गया है।

"होगा," उसने कहा, 'मुझे याद नहीं आ रहा है। यह क्या चाहती है?"

सरजू ने लोकनाथ के चेहरे की ओर देखा और कातरता के साथ बोली, 'आप मुझे पहचान रहे हैं?"

लोकनाथ ने अब उस लड़की के चेहरे को बहुत गौर से देखा।

लावण्य से भरा चेहरा है।

"हम लोग एक ही साथ स्कॉटिश चर्च कॉलेज में पढ़े हैं। आपको याद नहीं आ रहा है?"

लोकनाथ ने कहा, "आप मेरे साथ पढ़ी हैं?"

"हाँ। आप मुझे पहचान नहीं पा रहे हैं? आप क़िले के पार से गाड़ी में बैठकर कॉलेज आया करते थे। मेरा नाम सरजू है—सरजू

सिकदार।"

फिर भी लोकनाथ उसे पहचान नहीं पाया।

सरजू बोली, "मैं एक बार आपसे मिलने के लिए आपकी फ़ैक्टरी मे गयी थी, मगर उस दिन एक दुर्घटना हो गयी थी। दो आदमियों की हत्या हो गयी थी।"

लोकनाथ ने जादूगोपाल की ओर देखकर कहा, "जादूगोपाल, तुमने मेरे बारे में इनसे क्या कहा है?"

जादूगोपाल अपराधी की तरह सामने खड़ा होकर मुसकराने लगा। यानी 'मैंने जो कुछ कहा है उसके लिए आप अपनी महानता के कारण मुझे क्षमा करें, हुजूर।'

लोकनाथ ने कहा, "तुम मेरे बारे में जानते ही क्या हो या मैंने ही अपने बारे में तुम्हें कितना बताया है? इसके अलावा जिसके-तिसके सामने मेरा गुण-गान करने की जरूरत ही क्या है?"

"नहीं हुजूर!" जादूगोपाल ने कहा, "ऐसी बात नहीं है। यह बहुत कष्ट मे है, बड़ी ही तकलीफ मे है!"

लोकनाथ ने सरजू की ओर ताका।

"तकलीफ?" उसने कहा, 'क्या तकलीफ है?"

"तकलीफ का अंत है सरजू के लिए? बहुत तकलीफ है। आप अगर सब-कुछ सुनें तो आपके मन को भी तकलीफ पहुँचेगी।"

"यह बात है?"

सरजू ने कहा, "यकीन कीजिए, सचमुच मैं बड़ी तकलीफ़ मे हूँ।"

लोकनाथ ने कहा, "तकलीफ़? तकलीफ़ मे कौन नहीं है, बताओ तो सही। दुनिया का अर्थ ही है तकलीफ का डिपो। मुझे कोई ऐसा आदमी तो दिखाओ जो तकलीफ में न हो।"

जादूगोपाल के मुँह से कोई शब्द नहीं निकला।

लोकनाथ ने उसके चेहरे की ओर देखकर कहा, "क्यों तुम चुप क्यों हो गये? तुम जानते ही होगे कि इसके लिए जिम्मेदार आदमी ही है। कितने आदमियों की तकलीफ़ें तुमने देखी हैं, जादूगोपाल? मालूम है, तुम

जो इतनी तकलीफ़ में हो इसके लिए जिम्मेदार कौन है ?"

"नहीं...!" जादूगोपाल ने कहा।

लोकनाथ ने कहा, "हम लोग। हमीं लोग तुम्हें हर तरह की तकलीफ देते हैं, जादूगोपाल। तुम्हारे भाई ने देश की जायदाद के कारण तुम पर मुकदमा दायर किया है। किया है न ? वह भी तो आदमी ही है। फिर तुम्हारे भाई ने तुम्हारे खिलाफ मुकदमा क्यों किया ?"

जादूगोपाल बोला, "मेरी जन्म-पत्री में लिखा है। आप चाहे जो कहें।"

लोकनाथ बोला, "छोड़ो, अपनी जन्म-पत्री को गोली मारो। इन बातों पर विश्वास मत करो, जादूगोपाल।"

जादूगोपाल अवाक् होकर लोकनाथ की ओर ताकने लगा।

लोकनाथ बोला, "मैंने जो कुछ कहा है, ठीक ही कहा है, जादूगोपाल। जानते हो, मैं जो तुमसे यह बातचीत कर रहा हूँ, दरअसल तुमसे दुश्मनी कर रहा हूँ, तुमसे गहरी दुश्मनी कर रहा हूँ।"

"आप क्या कह रहे हैं, बाबू ? आप मेरे दुश्मन हैं ?"

लोकनाथ ने कहा, "हाँ; हम लोग सभी एक-दूसरे के दुश्मन हैं। मैं जिस तरह तुम्हारा दुश्मन हूँ, उसी तरह तुम मेरे दुश्मन हो। यह सरजू मेरी दुश्मन है, मैं सरजू का दुश्मन हूँ।"

सरजू इतने सालों से कलकत्ता में है, इसके पहले उसने कभी ऐसा आदमी नहीं देखा था। किसी के मुँह से भी ऐसी बातें नहीं सुनी थीं। हर कोई रुपया-पैसा, नौकरी, घोड़ा, रेस, ताश, औरत और शायद सिनेमा में उलझा रहता है। कोई-कोई कलकत्ता में मकान बनवाने या एक-दो कट्ठा जमीन खरीदने की कोशिश में लगा रहता है। किस तरह और दो पैसा कमाया जाये; किसको पकड़ने से थोड़ी सुविधा हासिल हो सकती है—सभी को केवल यही चिंता रहती है। लेकिन यह आदमी किस क़िस्म का है !

जादूगोपाल ने पहले ही कहा था, "लोकनाथ बाबू बहुत सरल आदमी नहीं है।"

सरजू ने पूछा था, "बड़े ही धोखेबाज़ है ?"

"नहीं जी; धोखेबाज होते तो राहत की साँस लेता। धोखेबाज नहीं है। दरअसल वह किस क़िस्म के आदमी हैं, आज तक इसका पता नहीं चला है। वरना कलकत्ता में इतनी अच्छी-अच्छी जगह, इतने बड़े-बड़े होटलों के रहने के बावजूद जादूगोपाल की इतनी छोटी-सी दुकान में आते ही क्यों ?"

'क्यों आते हैं ?"

"मालूम नहीं कि क्यों आते हैं। मैं तो बीच में घुघनी और पकौड़ी खाने को देता हूँ। देने में मुझे शर्म मालूम होती है।"

"क्यों, शर्म क्यों मालूम होती है, भाई साहब ?"

"उफ़ ! तू समझती कुछ भी नहीं है। वह क्या मामूली आदमी के नाती हैं ! उन लोगों के पास इतना पैसा है कि इस पैरागन सिनेमाघर को खरीद सकते हैं।

जादूगोपाल की बात सुनकर सरजू अवाक् हो गयी थी। दरअसल सरजू और जादूगोपाल में किसी तरह का संबध नहीं था। आते-जाते और पकौड़ी खाते-खाते जान-पहचान हो गयी थी। अंत में 'आप' से 'तुम' और 'तुम' से 'तू' पर उतर आया था। और वह उसे भाई साहब कहती थी।

शुरु-शुरू में नाइट शो के वक्त जब कोई ग्राहक नहीं रह जाता था और न जादूगोपाल का कोई सामान ही बच जाता था, सरजू कहती, "अच्छा, अब चलूँ...!"

एक दिन जादूगोपाल ने पूछा, "तेरा घर कहाँ है ?"

"दमदम। दमदम पातिपुकुर में।"

"इतनी दूर ? यहाँ-से तू जायेगी कैसे ?"

"बस या ट्रेन से। हर रोज तो वैसे ही जाया करती हूँ।"

उसके बाद आहिस्ता-आहिस्ता पता चला कि वह नौकरी की तलाश में आती है। दिन-भर डलहौज़ी के दफ्तरों का चक्कर लगाया करती है। अन्त में जब पैदल चलते-चलते थक जाती है, जादूगोपाल की दुकान में आकर कुछ खा लिया करती है। खाकर रात्रि-भोजन से निवृत्त हो जाती है। उसके बाद एक गिलास पानी पीती है। इसी से उसका पेट भर जाता है।

शाम इतनी गहरा जाने पर भी एक लड़की अकेली दुकान में बैठी रहती है और फिर भरपेट पकौड़ी खाती है, यह देखकर जादूगोपाल के मन में संदेह जगा था। एक दिन उसने पूछा था, "आपका मकान कहाँ है?"

पहले दिन उस लड़की को खुलकर परिचय देने में झिझक का अहसास हुआ। किंतु वह अधिक दिनों तक बात दबाकर नहीं रख पायी। "जानते है, भाई साहब," उसने कहा था, "कि आपकी दुकान में क्यों आती हूँ? यहाँ बैठने से कोई मेरी ओर घूरता नहीं है। दूसरी जगहों में बैठने पर पाया, सभी मेरी ओर इस तरह घूरते है जैसे निगल जायेंगे। मुझे बड़ा डर लगता है।"

"तुम्हारी लिखाई-पढाई कहाँ तक हुई है?"

"मैं बी० ए० पास हूँ।"

"आजकल बी० ए० पास तो हर कोई है। नकल करके बी० ए० पास किया है या बगैर नकल किये?"

"मैंने जब बी० ए० पास किया था तब नकल-वकल की शुरुआत नही हुई थी।"

"तो फिर इतने दिनों तक नौकरी क्यों नहीं मिली?"

सरजू ने कहा था, "शिक्षित होने से ही क्या नौकरी हो जाती है? आपको नौकरी के बाजार का हाल-चाल मालूम नहीं है, इसीलिए आप इस तरह की बातें कर रहे है। किसी-न-किसी मददगार की जरूरत पड़ती है। आजकल जब तक मददगार न मिले तब तक कुछ नहीं हो सकता है।"

"सभी के क्या मददगार हुआ करते हैं, या होना क्या संभव है?"

"उसी की कोशिश में हूँ। बहुत दिनों से किसी मददगार की तलाश में हूँ। लेकिन हम जैसे गरीबों को मददगार मिले तो कैसे? गरीबों की मदद करता ही कौन है?"

इतना कहते-कहते उस लड़की का चेहरा आँसुओं से भीग गया था।

जादूगोपाल बड़ी मुश्किल में फँसा। जीवन की लड़ाई क्या वस्तु है, जादूगोपाल को इसका कम अनुभव नहीं है। बचपन में दूसरे-दूसरे लोगों की तरह उसे सड़कों की धूल छाननी पड़ी है। साहबों के बड़े होटलों में

हर रोज टैक्सी बुलाकर लाने पर उसे बख्शीश मिलती थी। इसी बख्शीश पर बरसों निर्भर रहकर जादूगोपाल ने पेट का खर्च चलाया है। और न केवल यही काम किया है बल्कि स्यालदा स्टेशन पर कुली बनकर कितने ही दिनों तक गठरियाँ ढोयी है बहूबाजार में एक बड़े आदमी के मकान में सदावर्त चलता था। वहाँ जाकर उसने अपनी अल्यूमीनियम की थाली आगे बढ़ाकर पेट की भूख मिटायी है।

उसके बाद जब लड़ाई शुरू हुई, कलकत्ता शहर खाली हो गया। उसी वक़्त जादूगोपाल के भाग्य में परिवर्तन आया। यह दुकान एकाएक खाली हो गयी और वह चटाई और तकिया लेकर इसके भीतर घुस आया।

और कलकत्ता शहर में एक बार सिर टिकाने लायक अगर कोई जगह मिल जाये तो फिर कौन वहाँ से हटा सकता है?

मकान-मालिक तब बम के डर से शहर छोड़कर चला गया था। उस आदमी के पास बहुत बड़ी जायदाद थी। बहुत-से किरायेदार थे। किरायेदार भी तब कौन कहाँ भाग गया, पता नहीं। सब-कुछ की देखभाल करने वाला जादूगोपाल हो गया।

सरजू सब सुन रही थी। "उसके बाद क्या हुआ?" उसने पूछा।

जादूगोपाल बोला, "उसके बाद मकान-मालिक एक साल के बाद फिर वापस आया। वापस आते ही उसको तमाम जायदाद का मैंने हिसाब समझा दिया। भला आदमी मुझ पर बेहद खुश हुआ। उसके बाद मकान-मालिक ने यह दुकान मुझे दे दी। किराया तय हुआ पाँच रुपये माहवार।"

सरजू बोली, "मात्र पाँच रुपये ही?"

जादूगोपाल ने कहा, "पाँच रुपये के मायने हैं, मुफ़्त में। कहा जा सकता है कि उसी दिन से मैंने खुद को सहेजना शुरू किया। सब भाग्य की बात है, बहन! बताओ न, मेरा मददगार कौन था? कोई नहीं था। भगवान ही मेरा मददगार था।"

सरजू ने कहा, "फिर मेरे लिए आप कुछ रास्ता निकाल दीजिये। आप ही मेरे लिए कुछ कर सकते हैं, भैया। मुझे अपनी छोटी बहन समझें।"

जादूगोपाल के कहा, 'मेरी जान-पहचान ही किसके साथ है? सारा दिन इस पकौड़ी की ही दुकान में बीत जाता है। और पकौड़ी की दुकान

में कहीं कोई भला आदमी आता है ?"

उसके बाद बात करते ही बाबू की याद आयी। लोकनाथ बाबू की।

"हाँ, एक भले आदमी आया करते हैं।" उसने कहा।

"कौन ?"

"उस भले आदमी का मतलब है—कलकत्ता शहर का एक नामी-गिरामी भला आदमी।"

सरजू ने पूछा, "नाम क्या है ?"

जादूगोपाल ने कहा, "लोकनाथ राय।"

'लोकनाथ राय' कोई ऐसा नाम नहीं था जिसे सुनते ही सरजू आनंद से गद्गद् हो जाती।

जादूगोपाल ने कहा, "नाम सुनकर तुम पहचान नहीं पाओगी। ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स का नाम सुना है ?"

"सुन चुकी हूँ। वहाँ भी मैंने नौकरी की कोशिश की थी। वहाँ का जो मालिक है वह मेरे साथ एक ही कॉलेज में पढ़ता था।"

जादूगोपाल ने कहा, "ऐसी बात है ? लेकिन अब वह मालिक नहीं रहे।"

"नहीं रहे ?"

"नहीं; मालिक बदल गया है।"

"क्यों ?"

"यह बाबू की खामखयाली है।"

सरजू ने पूछा, "फिर इतने-इतने आदमी जो नौकरी करते थे, उनका क्या हुआ ?"

"वे ही लोग अब कंपनी के मालिक हैं। अब बाबू के पास कोई काम नहीं है। बाबू अब मेरी दुकान में आते हैं, इधर-उधर का चक्कर काटते हैं और घर जाकर नींद में खो जाते हैं। सारा दिन कलकत्ता की सड़कों पर चहल-कदमी करते हैं और सब-कुछ देखते-सुनते रहते हैं।"

सरजू अवाक् होकर जादूगोपाल की बातें सुन रही थी। "सड़कों पर चहल-कदमी करता रहता है—यह किस तरह की बात है! दिमाग गड़बड़ा गया है क्या ? घाटा उठाना पड़ा है ? कंपनी में तालाबंदी जब

गयी था ? या कारोबार घाटे में चल रहा था ? श्रमिक-सकट का सामना करना पडा था ? कर्मचारियों ने हड़ताल की थी ?"

"नही; यह सब बात नही है। नानाजी के जमाने से ही बहुत बडा कारबार चालू था। उसी कारबार का मालिक नाती हुआ। रुपया-पैसा, घर-गाड़ी, नौकर-दरबान सभी है। लेकिन हो सकता है कि अब उन सबों को हटा दे।"

"आपको यह सब कैसे मालूम हुआ, भाई साहब ? लगता है, आपको सब बताया है।"

जादूगोपाल ने कहा, "धत, मुझे बाबू क्यों बताएँगे ? कहाँ मैं और कहाँ बाबू ? मुझमें और बाबू में समानता हो सकती है ? मुझे सारी खबरें बाबू के ड्राइवर बैजू से पता चली है।"

"फिर बाबू के पास अभी तक गाड़ी है ?"

जादूगोपाल बोला, "गाड़ी है, मगर बाबू उस पर चढ़ते नही हैं। बाबू की खोज में बीच-बीच मे ड्राइवर आता है। पता नही, उसे कैसे तो पता चला गया कि बाबू यहाँ आया करते है।"

यह सब बहुत पहले की बातें है। सरजू बहुत बार आकर बाबू की तलाश कर गयी है। आते ही पूछा है, "भाई साहब, वह आये थे ?"

जादूगोपाल ने ग्राहकों को संभालते हुए जवाब दिया है, "नही बहन ! आये नही है। लेकिन तुम्हारी बात मैंने बाबू तक पहुँचा दी है।"

"आपने उनसे कहा है ?"

"हाँ। क्यों नही कहूँगा !"

"सुनकर बाबू क्या बोले ?"

"बाबू ने कोई जवाब नही दिया। सुन-भर लिया।"

तब जादूगोपाल बुरी तरह व्यस्त था। उसी व्यस्तता के बीच सारी बातों का जवाब दिया।

"बैठो न, बहन," उसने कहा, "खाकर जाना नही है।"

सरजू बोली, "आज नही खाऊँगी। आज मेरे पास पैसा नही है।"

पैसा नही है, यह सुनकर जादूगोपाल आगे बढ आया। वह बोला, "तुम्हें पैसा नही देना पड़ेगा, बहन ! जब पैसा होगा, दे देना। लो, खाकर

जाओ।"

और एक तरह से जबरन कारखाने के सामने एक तिपाई बढा दी। फिर तेल में तली चार अदद पकौड़ियाँ एक तश्तरी में सजाकर सरजू के सामने रख दी। उसके साथ करछी-भर आलू की सब्ज़ी।

'पकी हुई हरी मिर्च दूं? मुँह का स्वाद बदलेगा।"

'दीजिये।"

जादूगोपाल ने एक मिर्च लाकर दी। इच्छा न रहने पर भी सरजू एक-एक कर पकौडियाँ खाने लगी। अनाथ एक गिलास पानी भी दे गया। वे लोग सभी सरजू का बहुत ही आदर करते है। हालांकि वह इन लोगो की होती ही कौन है? कोई नहीं। बिलकुल ग्राहकों की तरह आते आते एक दिन सगे-सबंधी की तरह हो गयी है।

ऐसा अकसर होता था। दमदम पातिपुकुर के निकट से हर रोज़ एक बार कलकत्ता के दफ्तरों के मुहल्ले मे बगैर आये काम नहीं चलता है। कोई कही भी रहे, कैसी भी हालत मे रहे, दिन के आखिरी वक़्त में उसे कलकत्ता आना ही पडेगा। ज्यादा देर तक चहल-कदमी करने से भूख लगेगी ही। तब वे खाना कहाँ खायें? मद्रासी होटलों में सबसे सस्ता खाना मिलता है। शुरू-शुरू मे सरजू वही खाया करती थी। चाहे एक अदद बड़ा या एक अदद इडली। उसके साथ थोड़ी-सी दाल और चटनी नि:शुल्क प्राप्त होती थी।

लेकिन यह सब खरीदना भी बहुतों के बूते के बाहर की बात है। उसी समय जादूगोपाल की इस छोटी-सी पकौड़ी की दुकान का उसे पता चला था। यहाँ चीजें न केवल सस्ती मिलती हैं बल्कि जादूगोपाल आदमी के लिहाज से भी सज्जन हैं। ग्राहकों का यह बड़ा ही जतन करता है। किसी को वह ठगता नहीं हैं. मिलावट का तेल उपयोग में नही लाता है। सफ़ाई की ओर हमेशा ध्यान देता है।

तभी से घनिष्ठता हो गयी है।

उसके बाद नौकरी की बातचीत के संदर्भ में लोकनाथ का नाम सुनने को मिला।

फिर बिलकुल आमने-सामने मुलाक़ात हो गयी। जादूगोपाल से जैसा सुना था, वैसा नहीं है। उनने लोकनाथ को जब पहले देखा था तब उसका

चेहरा बहुत ही सुन्दर था। बड़े घर का लड़का था, साधारण और गरीब घर के लड़कों से हिलता-मिलता नहीं था। फिर जब उसने सुना कि ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के मालिक उसके साथ ही पढ़े-लिखे हैं तो वह एक दिन उससे मिलने के लिए गयी थी। लेकिन फैक्टरी के सामने पहुँचकर अवाक् हो गयी थी। पुलिस का एक दल उस स्थान को घेरे हुए था। दो-चार आदमियों से पूछने के बाद पता चला था कि अंदर किसी की हत्या हो गयी है। उसके बाद फिर वहाँ जाना नहीं हुआ। इतनी बड़ी ऑटो इंजीनियरिंग कम्पनी का मालिक है, संभवतः कोट-शर्ट-टाई पहने होगा। आँखों से अहंकार टपकता होगा। हो सकता है, उसके साथ अच्छी तरह से बातचीत तक न करे। फिर मन में आया था—ऐसा होना क्या संभव है? जब कि इतना बड़ा आदमी है, कलकत्ता में इतने बड़े-बड़े होटलों और रेस्तराँ के रहते यहाँ, जादूगोपाल की इस मैली सस्ती और अँधेरी दुकान मे आयेगा ही क्यों? पैसे के अभाव के बिना यहाँ कोई क्या आता है?

लेकिन बात ऐसी नहीं है। उस पहले के देखे चेहरे से इस चेहरे का कोई तारतम्य नही है। यह बिलकुल दूसरा ही आदमी है। सरजू के कपड़े-लत्ते को उसके कपड़े-लत्ते से कही अच्छा कहा जा सकता है। कत्थई रंग की मोटी खादी का ढीला-ढाला कुरता, सिर के बाल रूखे हैं, चेहरे पर घुंघराली दाढी। जैसे अभी नींद से जगकर आया हो।

सरजू ने लोकनाथ की ओर गौर से देखा। देखकर उसे लगा, इसी आदमी को अगर साहबी पोशाक मे सजा दिया जाये, दाढी बनवाकर, सिर के बालों को कंघी से पीछे की ओर झाड़ दिया जाये तो उसे साहब मानने मे किसी को झिझक नहीं होगी।

जादूगोपाल की पैरवी सुनकर लोकनाथ ने उसकी ओर फिर से देखा।

"मेरी बात से उसकी नौकरी लग जायेगी, इसका तुम्हें कैसे पता चला?"

जादूगोपाल बोला, "भले ही न जानूं, मगर अन्दाज तो कर सकता हूँ।"

लोकनाथ बोला, "फ़िजूल की बातें हैं। पहले हो सकता था कि सुनता,

लेकिन अब कोई नहीं सुनेगा। अब सबको जानकारी हो गयी है कि मैं नौकरी वगैरह नहीं करता हूँ।"

सरजू उन लोगों की बातचीत के दरमियान बोल पड़ी, "फिर भी आप कहियेगा तो कोई इनकार नहीं करेगा। आपकी बात को नजर-अन्दाज करना मुश्किल है।"

लोकनाथ उस लड़की की बात सुनकर अवाक् रह गया। यह लड़की तो खुशामद करने मे उस्ताद मालूम होती है।

"क्यों ? मैं कौन हूँ जो मेरी बात को नजर-अन्दाज करना मुश्किल हो जायेगा ?"

सरजू बोली, "मैं सब सुन चुकी हूँ।"

"तुम सब सुन चुकी हो ? किससे सुना है तुमने ? क्या सुना है ?"

"भाई साहब ने ही मुझे सब कुछ बताया है।"

लोकनाथ की दृष्टि जादूगोपाल की ओर मुड़ी।

"जादूगोपाल, तुमने इससे क्या कहा है ? मुझमें कौन-सी सामर्थ्य है कि मैं लोगों की भलाई कर सकूँ ? दुनिया में किसी ने किसी की भलाई की है ? मुझे इसकी एक भी मिसाल दे सकते हो ?"

जादूगोपाल आत्म-तृप्ति की एक हँसी हँसा, "बाबू, आपने भलाई नहीं की है ? आप भलाई न करते तो मैं यह कारोबार करके खा-पी सकता था ? दुकान-घर तो मुझे दैवात मिल गया है, लेकिन इस सिनेमा वाले ने मुझे हटाने की क्या कम कोशिश की थी ? आपको सरजू के लिए कुछ करना ही होगा। नहीं करने से यह छोड़ेगी नहीं।"

लोकनाथ कुछ क्षणों तक जादूगोपाल के चेहरे पर आँखें टिकाये रहा। फिर बोला, "तुम इसके लिए इतना क्यों कह रहे हो, जादूगोपाल ? यह तुम्हारी कौन होती है ?"

जादूगोपाल बोला, "होगी कौन, कोई नहीं। कलकत्ता में मेरा कोई सगा-संबंधी नहीं है।"

एक पल रुकने के बाद वह फिर बोल पड़ा, "फिर भी आप इसके लिए कुछ कर दें बाबू, आपको करना ही है।"

सरजू बोली, "आप पर ही विश्वास रखकर मैं इतने दिनों

कर रही हूँ ।"

लोकनाथ जैसे चौंक पड़ा । "विश्वास !" उसने कहा, "तुम अगर सचमुच कुछ करना चाहती हो किसी पर विश्वास मत किया करो, खासतौर से आदमी की दया-माया पर जो विश्वास रखता है उसके जैसा अभागा दूसरा कोई नहीं होता है । आदमी में अगर दया-ममता होती तो ईश्वर नामक चीज भी दुनिया में रहती ! तब यह दुनिया भी और तरह की होती ।"

जादूगोपाल बोला, "हम लोग इतनी बड़ी-बड़ी बातें नहीं समझते हैं, बाबू ! हम लोग साधारण आदमी ठहरे ।"

अचानक बाहर से किसी ने पुकारा, "भैया जी ?"

सभी ने उस ओर देखा । जादूगोपाल बोला, "आपका बैजू आया है ।"

बैजू पर दृष्टि पड़ते ही लोकनाथ के चेहरे के भावों मे आमूल परिवर्तन हो गया ।

"तू ? तू यहाँ क्या करने आया ?"

बैजू बोला, "माँ जी आयी है, गाड़ी में बैठी है ।"

"बैठी है तो मैं क्या करूँ ? उनसे जाने को कह दे । मुझसे मिलने से क्या होगा ?"

बैजू और कुछ कहने की हिम्मत नहीं कर सका । वह जाने लगा । लोकनाथ ने उसे फिर से पुकारा, "बैजू सुनता जा, नानी अम्मा से जाकर कह दे कि मेरे पीछे-पीछे इस तरह न घूमा करें ।"

बैजू समझ गया, इशारे से यह बताकर वह चला गया । लोकनाथ सरजू की ओर देखता हुआ बोला, "तुमसे जो मैंने कहा, समझ गयी न ? कोई तुम्हारा उपकार करेगा, यह धारणा मन से दूर कर दो । जिन लोगों ने आदमी की भलाई करने की कोशिश की है, आदमी ने उनकी हत्या कर डाली है । कोई भलाई करे, आदमी यह बरदाश्त नहीं कर पाता है । इतिहास मे जिन्होने भलाई की है, हम लोगों ने उन्हे सूली पर चढ़ाया है, जहर खिलाया है, उन्हे गोली से मार डाला है । आकस्मिक ढंग से मारने की युक्ति की तलाश में आदमी ने ही हजारों-लाखों पुस्तकें लिखी हैं । मेरी उम्मीद छोड़ दो, मैं तुम्हारा कोई उपकार नहीं करूँगा ।"

सरजू इन बातों का पूरा-पूरा अर्थ समझने में असमर्थ रही। वह बोली, "लेकिन सुनने मे आया है कि आपने अनेको का उपकार किया है।"

"किया है। मेरे नानाजी की फर्म जब थी, अनेको को नौकरी दी है। लेकिन मैंने उस फर्म को छोड़ दिया है। क्योंकि मैंने देखा कि उसकी वजह से मैं किसी का उपकार नही कर रहा हूँ बल्कि वे ही लोग मेरा उपकार कर रहे हैं।"

'इसका मतलब ?"

"मतलब है। मैंने देखा, उनकी रोज़ी-रोटी मोटे तौर से चल रही है, लेकिन उपकार दरअसल मेरा ही हो रहा है। उन्हें नौकरी देकर मैं खुद और भी बड़ा आदमी बनता जा रहा हूँ। मेरे पास और ज्यादा पैसा हो रहा है। घुमा-फिराकर मैं उन्हें एक्सप्लॉयट कर रहा हूँ, उनका शोषण कर रहा हूँ। अन्त मे मेरे पास इतना पैसा आने लगा कि मैं तब आदमी नही रह गया, मशीन हो गया, रुपया कमाने की मशीन!"

जादूगोपाल और सरजू दोनों लोकनाथ की बातें समझने में असमर्थ थे। धुएँ और धुएँ से भरी पकौड़ी की उस दुकान मे खड़ा-खड़ा लोकनाथ वही करने लगा जैसा उसने कभी नही किया था। बाबू कभी इस तरह की बातें तो बोला नही करते थे। अनाथ और त्रैलोक्य तब दुकान के ग्राहको को सभाल रहे थे। दरअसल ग्राहकों को सौदा मिल रहा है या नही, तब उस ओर जादूगोपाल का ध्यान तक न था।

जादूगोपाल बोला, "मगर बाबू, मैं अगर अपनी यह दुकान समेट लूँ तो अनाथ और त्रैलोक्य तब क्या करेंगे? फिर वे बेकार जो हो जायेंगे।"

लोकनाथ बोला, "तुम्हारे दुकान करने से पहले वे लोग क्या उपवास करके रहते थे? बिना खाये-पिये रहते थे?"

"मुन्ना!"

आवाज कानो में पहुँचते ही लोकनाथ ने देखा। नानी अम्मा थी। नानी अम्मा गाड़ी से उतरकर एकबारगी दुकान के बाहर आकर खड़ी हो गयी थी।

जादूगोपाल की भी निगाह गयी। लोकनाथ की नानी अम्मा को उसने पहली बार देखा। उसने वसुमती देवी का केवल नाम ही सुना था। वैजू से

ही बाबू के घर की ढेर-सी बातों का पता चला था। लेकिन वसुमती देवी को वह पहली ही बार देख रहा है। वसुमती देवी की उम्र भले ही काफी हो चुकी है लेकिन यौवन, रूप और आभिजात्य की छटा तब भी उनके चेहरे-मोहरे से टपक रही है। उनके बाल काफ़ी तादाद में पक गये हैं। चेहरे का जो अंश सबसे पहले दृष्टि-सीमा में आता है वह है उनकी आँखें। जैसे पत्थर की बनी आँखें हों। फिर भी वे उज्जवल, सजीव, सजल और गंभीर हैं। उन आँखों की ओर ताकने पर आँखें झुकाने की इच्छा नहीं होती। लगता है, ये आँखें आघात करें, भर्त्सना करें, साथ ही साथ क्षमादान भी करें।

"मुन्ना!"

लोकनाथ सड़क की ओर आगे बढ़ा और स्वर में हलके तीखेपन का पुट लाकर बोला, "तुम यहाँ क्यों आयी?"

उस बात का उत्तर दिये बगैर वसुमती देवी ने पूछा, "तू यहाँ किस-लिए आता है?"

लोकनाथ ने कहा, "यहाँ का मतलब? मैं सिर्फ़ यहीं आता हूँ? मैं तो हर जगह जाता रहता हूँ।"

"तुझसे मुझे एक जरूरी काम है।" वसुमती देवी ने कहा।

"क्या काम है? जो कहना है, कह दो। ज्यादा बातें सुनने का अभी मेरे पास वक्त नहीं है।"

वसुमती देवी ने कहा, "तेरे पास सुबह-शाम कभी वक़्त रहता ही नहीं। और दुनिया में जितने लोग हैं सभी के पास वक्त ही वक़्त है।"

"कहना क्या है, जल्दी कहो। क्या कुछ बहुत जरूरी है?"

"जरूरी है इसीलिए तो यहाँ आयी।"

"फिर कहो, सुनूँ।"

वसुमती देवी ने कहा, "मेरे साथ गाड़ी में आ। गाड़ी में बैठकर बताऊँगी।"

"लेकिन ऐसी कौन-सी बात है कि यहाँ खड़े-खड़े नहीं बता सकती हो?"

"नहीं, हर जगह हर तरह की बात नहीं की जा सकती है।"

इतना कहकर नाती का हाथ पकडकर खींचती हुई उसे बड़े रास्ते पर खड़ी गाड़ी के अन्दर ले गयी।

'देख रही हूँ कि तू सिर्फ घटिया किस्म के आदमियों से हिलता-मिलता रहा है। अगर तुझे इतनी ही भूख लगती है तो और किसी जगह जाकर तू खा नही सकता है? पकौड़ी की उस गंदी दुकान मे बिना गये काम नही चल सकता है? कलकत्ता शहर मे अच्छे होटलों की क्या कमी है? किसी भले आदमी को इस तरह की दुकानों मे तूने खाते देखा है?"

लोकनाथ ने शात स्वर मे कहा, "तुम भला आदमी किसे कहती हो, नानी अम्मा? जिनकी देह पर साफ़ कीमती कोट-पैंट रहते हैं, जिनके बैग मे काफ़ी पैसा है—वे ही क्या तुम्हारी निगाहों मे बड़े आदमी हैं?"

वसुमती देवी बोली, "तर्क मत कर। तेरा तो बस हर बात मे तर्क। वे अगर भले आदमी नहीं है तो भला आदमी है तेरा पकौडी वाला?" एक पल चुप रहने के बाद फिर बोलीं, "वह लड़की कौन है? देखने से रिफ्युजी जैसी लगी।"

"तुम किस लडकी की बात कर रही हो?"

"देख, अब तू बनने की कोशिश मत कर। मैं बहुत देख चुकी हूँ,, बहुत सुन चुकी हूँ, बहुत जान चुकी हूँ। आदमी की परीक्षा करते-करते मैं बूढी हो चुकी हूँ, अब तू मुझे ज्ञान मत दे। तूने सोचा है, मैं बेवकूफ़ हूँ, कुछ भी नहीं समझती हूँ?"

लोकनाथ बोला, "सुनो नानी अम्मा, इन बातो पर तुमसे डिसकशन करने में मुझे घृणा होती है। तुम अगर बेवकूफ नही हो, तुम अगर सब समझती हो तो फिर मुझसे पूछती ही क्यों हो?"

"फिर तू अगर इस तरह की एक रिफ्युजी लड़की से शादी करके उसे घर में ले आया तो मैं उस दिन बरदाश्त नही करूँगी। तुझे यह कहे देती हूँ...।"

लोकनाथ ने कहा, "देखो नानी अम्मा, तुम इस तरह बतिया रही हो जैसे मैं तुम पर डिपेंडेंट हूँ, मैं तुम्हारे पैसे से खाता-पहनता हूँ। इसके अलावा तुम यह भुला बैठी हो कि मैं बालिग हूँ, मैं एडल्ट हूँ, मेरा भी एक स्वतंत्र मत हो सकता है।"

वसुमती देवी बोली, "तेरे मुंह से यह सब बीसियों बार और कई अवसरों पर सुन चुकी हूं। लेकिन मेरी बात भी तो तुझे सुननी चाहिए, मैं अपने-आपके लिए इतनी बातें नहीं कर रही हूं। मैं अब कितने दिनों तक जिन्दा रहूँगी, मेरे जाने का दिन निकट आता जा रहा है। मैं जो कुछ भी कहती हूँ, तेरी भलाई के लिए ही कहती हूँ...।"

लोकनाथ बोला, "नानी अम्मा, तुम मेरी बहुत भलाई कर चुकी हो, दया कर और भलाई करने की कोशिश मत करो।"

"तू क्या बक रहा है, मुन्ना!"

"हाँ-हाँ, ठीक ही बात कह रहा हूँ नानी अम्मा! दुनिया में भलाई करने वाले लोगों की संख्या इतनी बढ़ गयी है कि हमलोग आज इतनी मुसीबत में है!"

"तेरी सारी बातें हो फिजूल की हुआ करती है। इन बातों को सुनते-सुनते मेरे कान पक गये हैं, मुन्ना! मालूम है, उस दिन तेरे दोस्त से उसके ऑफिस में मुलाकात हुई थी।"

"किस दोस्त से?"

"विकास या कुछ ऐसा ही नाम है। उसने बताया कि तू कम्युनिस्ट हो गया है।"

लोकनाथ गुस्से से वसुमती देवी की ओर ताकता हुआ बोला, "नानी अम्मा, जिस चीज़ की जानकारी नहीं है, दया करके तुम उसके बारे में बोला मत करो।"

"मैं क्यों बोलूंगी? तेरे दोस्त ने ही तो कहा है।"

"वे लोग आदमी हैं, नानी अम्मा? तुम उन लोगों को आदमी समझती हो? टेरिलिन-टेरिकॉट देह पर धारण करने से ही क्या कोई आदमी हो जाता है?"

"फिर सिर पर रूखे-सूखे बाल रखकर, बड़ी-बड़ी दाढ़ी बढ़ाकर और मैला कुरता और पाजामा पहनकर हिप्पी सजने से ही आदमी बन जाता है?"

लोकनाथ उस बात का उत्तर दिये बगैर बोला, "नानी अम्मा, विकास से तुम्हारी मुलाक़ात हो तो उससे कहना कि इंगलैंड के ड्यूक ऑफ विंडसर

ने जब राजगद्दी छोड़ दी थी तो किसी ने उसे कम्युनिस्ट नही कहा। वजह यह थी कि उसने एक लड़की के लिए राजगद्दी छोड़ी थी। और इतनी बात तो दूर रही, विकास से कहो कि ढाई हज़ार वर्ष पहले एक राजकुमार राज-पाट और स्त्री-पुत्र को त्यागकर वन मे चला गया था, इसके कारण उसे कोई भी कम्युनिस्ट नही कहता है। और सब कुछ त्यागने, रूखे बाल और दाढ़ी रखने से ही मुझे लोग कम्युनिस्ट कहते है ?"

एक क्षण चुप रहकर फिर बोला, 'लेकिन इतनी बातें मैं तुमसे कर ही क्यों रहा हूँ ? मैं चल रहा हूँ...।"

और वह गाड़ी के दरवाज़े को खोलकर बाहर निकल आया। लेकिन वसुमती देवी ने उसे छोडा नही।

'लेकिन तूने तो वताया नही कि वह लडकी कौन है ?"

लोकनाथ ने कहा, "नानी अम्मा, तुम इतने दिनो से देखती आ रही हो। तुम्हें कम-से-कम इतना तो समझना चाहिए कि तुम्हारा नाती चाहे और कुछ भले ही है लेकिन चरित्रहीन नही है...।"

"ओह, फिर तू चरित्र को भी मानता है ?"

लोकनाथ ने कहा, "क्या कह रही हो, चरित्र को नही मानूंगा ? अगर चरित्र ही न रहा तो आदमी मे फिर रह ही क्या जाता है ? ईश्वर को मैं नहीं मान सकता हूँ, लेकिन चरित्र को नही मानूंगा, इस बात पर तुमने विश्वास किया ?"

और लोकनाथ वहाँ रुका नही। कलकत्ता के सभी अचल व्यस्तता में डूबे हुए है। चारो ओर से गाड़ी और आदमी अपने-अपने गंतव्य की ओर बढ़ रहे है। एक क्षण भी नष्ट हो जाये तो काम नही चल सकता। समय का अर्थ है पैसा। समय नष्ट करने के मायने है पैसे की बरबादी। उस पैसे से ही मैं तुम्हें प्रतियोगिता मे पराजित कर दूंगा। तुम पीछे पड़े रह जाओगे और मै उज्जवल सार्थकता की ओर अग्रसर हो जाऊँगा। फिर जब मैं शक्ति-शाली हो जाऊँगा तब तुम्हें मार डालूंगा। जो लोग कमज़ोर हैं, जो पीछे पड़े रह जायेंगे, *हम उनकी हत्या करेंगे। वह हमलोगों का निजी समाज* है। उस समाज के लिए हम नये सिरे से शब्द-कोश लिखेंगे। विकास जैसे लोग टेरिलिन-टेरिकॉट पहनकर सोचा करते है कि दुनियादारी मे उन्हें जीत

आश्चर्य की बात है! विकास जैसे लोग कहते है कि वह कम्युनिस्ट हो गया है!

पीछे से नानी अम्मा ने फिर से पुकारा, "मुन्ना, आज रात मे देर मत करना, जल्दी-जल्दी लौट आना।"

जादूगोपाल की दुनिया मे उस वक्त भी सरजू प्रश्न पर प्रश्न किये जा रही थी।

"भाईसाहब, वही लोकनाथ बाबू की नानी अम्मा हैं?"

जादूगोपाल बोला, "लगता तो यही है। इसके पहले कभी अपनी आँखों से नही देखा था। आज ही पहले-पहल देखा।"

"उन लोगो के पास बहुत पैसा है?"

जादूगोपाल बोला, "कलकत्ता शहर में उनका इतना बड़ा मकान है, इतनी बड़ी गाड़ी है तो निश्चय ही वह बहुत पैसे का मालिक है। और अगर रुपया न रहता तो इतने-इतने लोगो को कैसे खिलाता-पिलाता है और उन्हें तनख्वाह देता है?"

"फिर भी अन्दाजन उन लोगों के पास कितना पैसा है?"

"कह नही सकता," जादूगोपाल ने कहा, "निश्चय ही लाखों रुपया है।"

"एक लाख?"

सरजू लाख रुपये के आयतन और संख्या की कल्पना का अन्दाज लगाने लगी। उसके बाद बोली, "जानते हैं भाईसाहब, एक सौ हजार का एक लाख होता है!"

जादूगोपाल ने कहा, "धुत, पगली लड़की! यह तो हर किसी को मालूम है।"

"मुझे मालूम नही था, भाईसाहब! मैं जिससे लॉटरी का टिकट खरीदती हूँ, उसी ने मुझे यह हिसाब समझाया था।" सरजू ने बताया।

"तू लॉटरी का टिकट खरीदती है?"

सरजू बोली, "क्यो? आप नही खरीदते क्या?"

जादूगोपाल बोला, 'मैं यहाँ का टिकट नही खरीदता हूँ। इन दो-तीन लाख रुपयों के लिए मुझे लोभ नही है। मैं पंजाब का टिकट खरीदता हूँ। वे लोग सोलह-सत्रह लाख रुपये दिया करते हैं। वह अगर एक बार मिल गया तो कलकत्ता शहर मे रहना छोड़ दूँगा। दुकान समेटकर रुपया-पैसा लेकर देश चला जाऊँगा। वहाँ जाकर एक होटल खोलूँगा और राजा-महाराजा की तरह रहूँगा। पेट-भर खाऊँगा और सोया करूँगा, बस इतना ही।"

सरजू ने कहा, "मेरे बाबूजी भी कहते है, अब नही खरीदूँगा। खरीदते-खरीदते बाबूजी को लॉटरी से घृणा हो गयी है, लेकिन फिर भी जब वह आदमी टिकट बेचने आता है तो बाबूजी बिना खरीदे नही रहते है।"

एकाएक लोकनाथ हनहनाता हुआ फिर से दुकान मे आया।

"सरजू कहाँ गयी?" उसने पूछा।

लोककनाथ का चेहरा देखते ही जादूगोपाल को यह समझने मे देर न लगी कि बाबू बहुत अधिक उत्तेजित हो गये है। जादूगोपाल ने पूछा, "*कुछ खाइयेगा, बाबू? गरम घुघनी अभी कढाई से उतारी गयी है।*"

लोकनाथ ने कहा, "नही; अभी मेरे पास खाने का का वक्त नहीं है। दिमाग गडबड़ा गया है।"

"*क्यों? देखा, गृहस्वामिनी आयी थी।*"

"इसीसे तो दिमाग बिगड़ गया है। कोई कुछ पढता नही है, सीखता नही है, जानने की कोशिश नही करता है। उनकी विद्या की दौड है तो बस अखबारों और जासूसी उपन्यासों तक। लेकिन टेरिलिन-टेरिकॉट पहन कर नानी अम्मा के सामने अपना बड़प्पन छाँटेंगे।"

फिर उसे जैसे कुछ याद हो आया हो इस तरह वह बोला, "जाओ, एक कागज का टुकडा ले आओ तो।"

"कागज? कितना बडा कागज?"

"एक चिट्ठी लिखनी है। चिट्ठी लिखने के लिए कागज चाहिए।"

एक नयी एक्सरसाइज़-बुक से एक पन्ना फाड़कर जादूगोपाल ले आया।

कागज हाथ मे लेकर कंधे की झोली से कलम निकालते हुए सरजू से पूछा, "तुम्हारा पूरा नाम क्या है?"

न केवल पूरा नाम बल्कि पूरा पता भी पूछ लिया।

उसके बाद दनादन एक लम्बी चिट्ठी लिखकर सरजू की ओर बढ़ा दी। "इस पते पर इसे ले जाओ। लेकर जाते ही तुम्हारी नौकरी हो जायेगी।"

सरजू की मुख-मुद्रा ने लोकनाथ को अवाक् होने की स्थिति में ला दिया। "तुमने मुझसे नौकरी की माँग की थी। है न?"

'हाँ, माँग तो की थी। लेकिन आपने कहा था कि आप किसी का उपकार नहीं करेंगे।"

लोकनाथ ने कहा, "मैंने तुम्हारा उपकार नहीं किया बल्कि तुम्हारी हानि ही कर रहा हूँ।"

"नौकरी मिलने से मेरी हानि होगी?"

"हानि ही नहीं, बल्कि सर्वनाश होगा। देख लेना। उस दिन मेरी बात याद रखना। भीख देने से आदमी का उपकार नहीं होता है, सर्वनाश ही होता है।"

लोकनाथ की बातों का तात्पर्य फिर भी सरजू की समझ में नहीं आया। "मैं आपकी बातों का अर्थ समझ नहीं सकी। मगर आपने मेरा कितना उपकार किया है, मैं इसे समझाकर कहने में असमर्थ हूँ। जानते हैं, मेरे माँ-बाप बूढ़े हैं, मेरे भाई-बहन को भर-पेट खाना नसीब नहीं होता है।"

लोकनाथ ने कहा, "हो सकता है, यह सही हो लेकिन दरअसल मैंने तुम्हारा सर्वनाश ही किया। यह बात एक दिन भले ही तुम न समझो, मगर तुम्हारे माँ-बाप और भाई-बहन समझेंगे।"

सरजू जल्दी-जल्दी लोकनाथ के पाँवों का स्पर्श करने के लिए आगे बढ़ी, लेकिन लोकनाथ पीछे हट गया।

"यह नहीं हो सकता। तुम नौकरी चाहती थी, इसीलिए मैंने तुम्हें चिट्ठी दी। अब देखो, तुम्हें नौकरी मिलती है या नहीं?"

सरजू अब क्या कहे? जादूगोपाल की ओर ताकती हुई और हाथ जोड़ती हुई चली गयी। "फिर मैं चलूँ।" वह बोली।

सरजू के जाने के बाद लोकनाथ भी जा रहा था। पीछे-पीछे जाते हुए जादूगोपाल ने एक बार पुकारा, "बाबू!"

लोकनाथ पीछे मुड़कर खड़ा हुआ और बोला, "अब तुम क्या कहना

चाहते हो, जादूगोपाल ?"

जादूगोपाल बोला, "आज तो आपने कुछ खाया नहीं, बाबू ! बढ़िया घुघनी तैयार की है।"

"घुघनी ?"

"हाँ, मैं तो आपको संदेश, रसगुल्ला, चॉप, कटलेट—यह सब खिला नहीं सकता हूँ। मामूली तेल की चीज़ें खिलाकर थोड़ी-सी खातिर करने की कोशिश करता हूँ।"

लोकनाथ मुड़कर खड़ा हो गया और बोला, "जादूगोपाल, तुम्हारी पकौड़ी की दुकान है। यह दुकान ग़रीबों के लिए है। जो लोग बड़े-बड़े होटलों में नहीं जा सकते, उन्हीं लोगों के लिए तुमने यह दुकान खोली है। मैं इन्हीं चीजों के लिए तुम्हारी दुकान में आता हूँ। तुम क्या सोचते हो कि मैं बड़े-बड़े होटलों में चॉप-कटलेट नहीं खा सकता हूँ ? टेरिलिन-टेरिकॉट पहनकर, सूटेड-बूटेड होकर दूसरे लोगों की तरह गाड़ी ड्राइव नहीं कर सकता हूँ ?"

जादूगोपाल इस प्रश्न से जिस तरह परिचित है उसी तरह उसके उत्तर से भी परिचित है। लेकिन उत्तर देना व्यर्थ समझकर चुपचाप रहा।

लोकनाथ कहने लगा, "मगर मैं अकेला चॉप-कटलेट खाऊँ तो चल नहीं सकता है, जादूगोपाल। जिस दिन हर किसी को चॉप-कटलेट खिला सकूँगा उसी दिन वह सब खाऊँगा। मगर वे लोग यह समझ नहीं पाते हैं।"

"वे लोग कहने का मतलब क्या है ?"

"विकास, सुधांशु ..तुम्हें उन लोगों के बारे में मालूम नहीं है। उन्हीं लोगों ने मेरी नानी अम्मा को समझाया है कि मैं पागल हो गया हूँ। मैं भी कहता हूँ, अगर पागल ही हो गया हूँ तो अच्छा ही किया है।"

जादूगोपाल बोला, "आपने सरजू के लिए जो किया बाबू, कोई नहीं करता।"

"अरे, पहले नौकरी मिल जाये, उसके बाद कहना।"

"हुज़ूर, आपने जब लिख दिया है तो ज़रूर ही लग जायेगी। यह देखने की ज़रूरत नहीं है।"

लोकनाथ के चेहरे पर गंभीरता उतर आयी। कुछ देर के बाद बोला,

"तुम्हें मालूम नहीं है, जादूगोपाल, मैंने उसकी हानि की है। उसकी मैंने कितनी बड़ी हानि की है, यह बात अभी तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी। समझोगे तब जब कोई चारा नहीं रह जायेगा।"

जादूगोपाल ने कहा, "उसको नौकरी मिल गयी, उसके माँ-बाप, भाई-बहन को खाना नसीब होगा और आप कहते हैं कि आपने उसका सर्वनाश किया!"

"हाँ; अभी तुम लोग कोई समझ नहीं पा रहे हो, लेकिन बाद में तुम्हारी समझ में यह बात आयेगी। हमारे देश में लोगों की जितनी वृद्धि हो रही है उसी अनुपात से भय की वृद्धि हो रही है।"

"क्यों?"

"अरे, सिर्फ़ भिखारियों की तादाद में ही वृद्धि हो रही है। जनसंख्या नहीं बढ़ रही है, सिर्फ भिखारियों की संख्या ही बढ़ रही है। यह सरजू की नौकरी जो हुई उससे भिखारियों की संख्या में एक की और वृद्धि हुई।"

उसके बाद वह और अधिक अनमना हो उठा। मन-ही-मन बुड़बुड़ाने लगा, 'उन लोगों ने सारी दुनिया को भिखारी बना डाला, जादूगोपाल। इससे बढ़कर कोई ट्रैजडी नहीं हो सकती। तमाम आदमी हाथ फैलाये बैठे हैं—हमें नौकरी दो, हमें खाना दो, हमें चावल दो। या कि हमें राइफल दो, बुलेट दो, मशीनगन दो।"

और लोकनाथ भीड़ से खचाखच भरे रास्ते पर खड़ा होकर अपने आप बुड़बुड़ाने लगा।

फिर एकाएक मुड़कर उसने कहा, "अच्छा जादूगोपाल, तुम कुछ चाहते हो?"

"मैं? मैं कुछ चाहता हूँ या नहीं, यही पूछ रहे हैं न?"

"हाँ, यही पूछ रहा हूँ, तुम भी तो एक भिखारी ही हो न।"

जादूगोपाल शर्म से गड़ गया। "भिखारी नहीं रहता तो पंजाब-लॉटरी की टिकट खरीदता, बाबू? उसी उम्मीद पर तो जी रहा हूँ कि एक दिन लॉटरी के टिकट से बड़ा आदमी बनकर आराम से खाना खाऊँ और बेफ़िक्र होकर सोऊँ।"

लोकनाथ ने कहा, "यह सिर्फ़ तुम्हारी ही बात नहीं है, जादूगोपाल

यह हमारी-तुम्हारी, सबकी बात है। एक दिन अमेरिका मोटी रकम देकर हम लोगों की महायता करेगा, मोटी रकम का चावल, गेहूँ, इंजेक्शन देगा और देगा राइफल, बुलेट और मशीनगन। हम लोग हाथ पर हाथ रखे आराम के साथ खाना खायेंगे और सोयेंगे। दरअसल उन लोगों ने हमें भिखारी बना दिया है, जादूगोपाल ! सारी दुनिया के आदमी आज भिखमंगे हैं।"

जादूगोपाल खामोशी के साथ सुन रहा था, लेकिन उसकी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था।

लोकनाथ बोला, "चलूँ जादूगोपाल !"

"कल आप आ रहे हैं न ?"

लोकनाथ ने कहा, "आऊँगा। नहीं तो फिर कहाँ जाऊँगा, जादूगोपाल ? सुबह के वक्त ही घर से निकला हूँ। उसके बाद गया बेलगछिया, वहाँ से हावड़ा, हावड़े से खिदिरपुर और खिदिरपुर से यहाँ आया हूँ।"

"अब घर लौट रहे हैं न ?"

"नहीं, अब टालीगंज जा रहा हूँ।"

"टालीगंज क्यों ?"

लोकनाथ अब मुसकरा दिया। बड़ी ही मीठी मुसकराहट !

"टालीगंज में एक व्यक्ति से प्यार कर बैठा हूँ।"

"आप प्यार कर बैठे हैं ? आश्चर्य लग रहा है ! किससे प्यार कर बैठे हैं ?"

"वह एक लड़की है, जादूगोपाल !"

"लड़की ? आप किसी लड़की को प्यार करते हैं ?"

"हाँ।"

"वह लड़की कौन है ?"

"तुम उसे नहीं पहचानोगे।"

'उसका नाम क्या है, बाबू ?'

"बकुल।"

"बकुल !"

"हाँ जादूगोपाल, वह एक अजीब लड़की है।"

इतना कहने के बाद लोकनाथ वहाँ रुका नहीं। उस भीड़ से भरी गली

से होकर सीधे बड़ी सड़क की ओर चल दिया।

सहज, सरल और स्वाभाविक विचार-बुद्धि से जो समझ में आता है वह है गणित। गणित ही हमें सिखाता है कि दो और दो जोड़ने से योगफल चार होता है। लोकनाथ के नानाजी और नानीअम्मा उसी गणित से परिचित थे। अठारहवी और उन्नीसवी शताब्दी के प्रारंभ से एक प्रकार की शिक्षा मनुष्य के मन में घर कर बैठी थी। उस शिक्षा का मूल उद्देश्य था व्यक्तिगत उन्नति। कार्त्तिकराय अपने परिश्रम, चेष्टा और अनेकानेक घटनाओं के सहयोग से धन कमाकर बडे आदमी हुए थे। उनके पुत्र नही था, कहा जा सकता है कि दामाद ही लडके की तरह था। दामाद ही ससुर के कारोबार की देख-भाल करने लगा। उसके बाद एक दिन लोकनाथ का जन्म हुआ।

लोकनाथ ने पैदा होते ही एक अजीव तरह की दुनिया देखी। शुरू में उसने देखा कि यहाँ आदमी जन्म लेता है, जन्म लेकर एक दिन बूढा होता है और उसके बाद मर जाता है।

लेकिन ज्यों-ज्यों उसकी उम्र बढ़ती गयी, वह बहुत कुछ देखने लगा।

लोकनाथ पहले-पहले जब अपनी फैक्टरी में घुसा, उसकी उम्र उस समय बहुत ही कम थी। उस कम उम्र मे ही वह महसूस करता था कि वह अन्याय का सहारा ले रहा है। घर लौटकर वह नानी अम्मा से कहता "नानी अम्मा, अब मैं फ़ैक्टरी नहीं जाऊँगा।"

वसुमति देवी आश्चर्य में डूबने-उतराने लगती थी।

"क्यों रे ?" वह कहती, "क्यों नहीं जायेगा ? तुझे क्या हुआ है ? तबीयत खराब है क्या ?"

लोकनाथ कहता, " नानी अम्मा, हम लोगों के रामभजन को तुम पहचानती हो न ?"

" रामभजन को मैं पहचानती नहीं हूँ ? वह तो बहुत ही पुराना आदमी है। उसे मेरे बारे में कहना। उसे क्या हुआ है ?"

लोकनाथ कहता, "आज वह मेरे पास आया।"

"क्यों ?"

"वही बात तो तुम्हें बता रहा हूँ। आज सेल्स-टैक्स ऑफ़िसर मुझसे बातचीत करने के लिए दफ़्तर मे आया था। उसका सम्मान करने के खयाल से उसे लेकर लंच खिलाने के लिए होटल गया था। जानती हो, हमने कितने रुपयो का लंच खाया?"

नानी अम्मा उस बात का जवाब दिये बगैर बोली, "जैसी तेरी मर्ज़ी हुई, तूने खाया। वह मुझे बताने की ज़रूरत क्या है?"

"नहीं, तुम्हारे लिए यह सुनना ज़रुरी है कि हम दोनो ने कितने रुपयो का लंच खाया। जब मैंने बिल चुकाया, तब पता चला कि हम दोनों ने क़रीब-क़रीब अस्सी रुपये का खाया है।"

नानी अम्मा बोली, "खाया है तो अच्छा ही किया है। सेहत रखने के लिए खाना ही होगा। नही खायेगा तो काम कैसे करेगा?"

लोकनाथ ने कहा, "मगर काम क्या मैं अकेला करता हूँ, नानी अम्मा? मेरी फ़ैक्टरी मे कोई दूसरा आदमी काम नही करता है...?"

"वह सब सोचने से चल सकता है क्या?"

"लेकिन मैं तो उन्हीं बातों को सोच रहा हूं, नानी अम्मा! मैंने सोचा है कि रामभजन की तनख्वाह बढा दूं।"

"क्यों, उसने तनख्वाह बढ़ाने को कहा है क्या?"

लोकनाथ बोला, "नहीं, उसने ऐसा नही कहा है। लेकिन आज दो व्यक्तियों के खाने का खर्च अस्सी रुपये देखकर मेरे मन मे विचार आया कि रामभजन को महीने मे अस्सी रुपये तनख्वाह के बतौर मिलते है। उस रुपये से वह यहाँ खाना खायेगा या उसे देस भेजेगा? इसलिए उसकी तनख्वाह बढाने के लिए केदार बाबू को बुला भेजा। केदारबाबू को पहचानती हो न?—केदार सरकार, अपने असिस्टेंट एकाउटेंट को।"

"हां, पहचनाती हूँ।"

"सुनकर तुम्हे आश्चर्य होगा कि केदार बाबू ने क्या कहा। उसने कहा: ऐसा काम कभी न करें, सर! उसकी वजह से यूनियन मे भीषण शोर-गु ल मच जाएगा। तब लोगों को संभालना मेरे लिए मुश्किल हो जायेगा।"

हालांकि आश्चर्य की बात है कि वही केदार सरकार एक दिन ऑटो

इंजीनियरिंग वर्क्स की यूनियन का सेक्रेट्री था। उसी के कहने पर फ़ैक्टरी के अफसर एक दिन उठते-बैठते थे। उसीके कारण कम्पनी में दो यूनियन नहीं हो पायी थी। केदार सरकार नाम से तो असिस्टेंट एकाउंटेंट था, लेकिन दरअसल उसका स्थान था एकाउंटेंट के ऊपर। कहीं कुछ श्रमिक-संकट पैदा होता तो लोकनाथ के पिता संतोष राय केदार सरकार को घर पर बुला भेजते थे।

संतोष राय गरम-नरम स्वभाव के व्यक्ति थे। अपने ससुर कान्तिकराय की तरह नहीं थे। इतना जरूर था कि कान्तिकराय न केवल उद्योगपति ही थे बल्कि देश के लोगों की निगाह में एक कर्मवीर पुरुष भी थे। व्यवसाय करने का अर्थ था स्वदेशी आन्दोलन में योगदान करना। उसके जीवन का यही आदर्श था। वह आजीवन खादी पहनते रहे। विलायती चीजों को छूते तक न थे। उनके जमाने में न आज के श्रमिक थे और न आज का संकट ही।

उस जमाने में विजयदशमी के दिन कर्मचारीगण घर पर आकर गृह-स्वामिनी को प्रणाम कर जाते थे। पत्तल बिछाकर पेट भर खाना खाते थे और उसके बाद खुश होकर गृहस्वामी सबको बोनस देते थे।

श्रमिक-संकट की शुरुआत दामाद साहब के जमाने में हुई थी।

उन्होंने ही पहले-पहल लेबर-यूनियन क़ायम करा दी। तब अँगरेज चले गये थे। लेकिन गड़बड़ तभी से शुरू हुई। उसका प्रारम्भ एक हड़ताल से हुआ था। वही हड़ताल जब अन्तिम बिन्दु तक पहुँच गयी, संतोषराय ने केदार सरकार को बुला भेजा और उसके हाथ में दो हजार रुपये थमा दिये।

केदार सरकार आश्चर्य में आ गया।

"मुझे इतना रुपया क्यों दे रहे हैं, सर ?" उसने कहा।

संतोष राय ने कहा, "आपको कम तनख्वाह मिलती है। आपको यह रकम यों ही बोनस के रूप में दी है।"

"बोनस ? किस चीज का बोनस ?"

"आप हमारी यूनियन के सेक्रेट्री हैं। आपकी तनख्वाह भी कम है। हम लोगों की डाइरेक्टर्स-बोर्ड की मीटिंग में यही तय हुआ है कि आपको कुछ

एकस्ट्रा पैसा दिया जाये...।"

उसके बाद धीरे से मुसकरा कर बोले, "देखिए, मेरी इच्छा थी कि आपको हेड-कैशियर बना दूँ। आप इसके लिए राजी है?"

केदार सरकार चुप्पी साधे बैठा रहा।

"आप चाहे तो आपको कैशियर बना सकता हूँ। उससे आपकी तनख्वाह मे सात सौ की बढोतरी हो जायेगी, लेकिन तब आप यूनियन के सेक्रेट्री नही रह पायेंगे।"

केदार सरकार ने कहा, "लेकिन यूनियन तो मुझे ही चाहती है, सर!"

"मैं भी तो यही चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप यूनियन में ही रहे। कम्पनी का डाइरेक्टर्स बोर्ड भी चाहता है। लेकिन हेड-कैशियर होने मे सेक्रेट्री रहना नही हो पायेगा, लेबर एक्ट यही कहता है।"

केदार सरकार बोला, "*मैं हेड कैशियर या हेड एकाउंटेंट नही बनना* चाहता हूँ, सर! बन जाऊँ तो उन लोगों का विश्वास मुझ पर नहीं रहेगा।"

"फिर आप अब से हर महीने मुझसे सात सौ रुपये एक मुश्त ले जाया करे। यह हमारी कम्पनी के हिसाब मे नही लिखा जायेगा।"

"लेकिन सर, आप यह न सोचें कि इसके बदले मैं उन लोगो के *स्वार्थ पर नजर नही रखूँगा।"*

"सो आप रखिए। आप जी-भर उन लोगों की भलाई का ध्यान रखा कीजिये। आपको जब जहाँ अन्याय और अत्याचार दीखे, आप उसे कपनी की निगाह में ले आइये। उसी के लिए तो आप उन लोगों के सेक्रेट्री बने हैं।"

इसके बाद कुछ क्षणो तक मौन रहने के बाद संतोष राय ने कहा, "और एक बात। आप किसी बाहरी आदमी को यूनियन का प्रेसिडेंट नही बना सकते है। जहाँ कही बाहरी आदमी घुसता है वही गडबड़ होती है।"

"लेकिन किसी-न-किसी को प्रेसीडेंट बनाना तो पड़ेगा ही।"

"प्रेसीडेंट अगर रखना है तो आप ही प्रेसीडेंट बन जायें। किसी दूसरे को सेक्रेट्री बना दें। मगर इतनी दया अवश्य करें कि किसी पोलिटिकल लीडर को इसमें न घुसने दें। इससे तो बेहतर यही है कि कम्पनी ही

बन्द कर दूं।"

उसी समय से केदार सरकार इस कम्पनी की यूनियन का प्रेसीडेंट हो गया। उसी वक्त से केदार सरकार एक ओर साँप बनकर डसता था और दूसरी ओर ओझा बनकर विष उतारता था। उसके फलस्वरूप कंपनी की भी हानि नहीं हुई थी और मजदूरों का भी उपकार हुआ था।

लेकिन संतोषराय की मृत्यु के बाद लोकनाथ के जमाने में ही गड़बड़ की शुरुआत हुई।

उस दिन लोकनाथ ने रामभजन को बुला भेजा।

"तुम्हें कितनी तनख्वाह मिलती है, रामभजन ?" उसने पूछा।

रामभजन इतने दिनों से नौकरी करता आ रहा है। गृहस्वामी के जमाने में वह पहले-पहल नौकरी में आया था। उसके बाद सुख-दुख में जी-जान से कम्पनी की सेवा करता आ रहा है। स्वामिभक्त कुत्ते की तरह केवल स्वामी के मंगल की चिन्ता में ही निमग्न रहा है। इसमें कभी किसी तरह की अवहेलना नहीं की है। आज इतने दिनों के बाद साहब की जबान से इस तरह का प्रश्न सुनकर वह आश्चर्यचकित हो गया।

"बताओ, तुम्हें कितनी तनख्वाह मिलती है ?"

"सब मिलकर एक सौ तीस रुपये, हुजूर।"

"कितना रुपया देस भेज देते हो ?"

"सौ रुपये।"

"देस में तुम्हारे कौन-कौन हैं ?"

"दो लड़के और बीवी।"

"जगह-जमीन कुछ है ?"

"है हुजूर ! चार भैंस है, एक मकान और तीन बीघा जमीन।"

लोकनाथ ने कहा, "अच्छा जाओ।"

लोकनाथ से सब-कुछ सुनने के बाद केदार सरकार बोला, "आपने बड़ा ही बुरा किया, सर ! निचले तबके के लोगों से आप खुद बातचीत क्यों करने गये ? मैंने तो आप से कहा है कि आपको जो कुछ कहना रहे मेरे जरिये कहला दिया करें। आप अगर एकाएक रामभजन की तनख्वाह बढ़ा देते हैं तो दूसरे लोग क्या सोचेंगे, बताइये तो ?"

"आपने इतने दिनो तक उन लोगों के बारे में मुझे बताया क्यों नहीं था ?"

केदार सरकार ने कहा, "आपने कहने ही कहाँ दिया ? मैं अगर किसी खास व्यक्ति के बारे मे कहूँ तो चल नही सकता। ट्रेड-यूनियन का अपना एक कानून है। मुझे तो कानून के अनुसार ही काम करना होगा। नये सिरे से पे-स्केल बनाना होगा या मँहगाई भत्ता बढ़ाना पड़ेगा।"

लोकनाथ को गुस्सा आ गया। "जिससे अच्छा हो, आप वही कीजिये। आप यूनियन के कर्त्ता-वर्त्ता हैं तो आपकी ही ओर से पहले बात आनी चाहिए थी। सो तो आप करते नही, मैं जब कहूँगा तब आप काम हाथ मे लीजियेगा। जानते हैं, आज सेल्स-टैक्स ऑफ़िसर को लेकर होटल मे लंच खाने गया था। वहाँ बिल आया अस्सी रुपये। हम लोगों के रामभजन का बेसिक पे...।"

केदार सरकार गृहस्वामी के ज़माने मे एकाउंटस् सेक्शन में काम कर चुका है। एक बार जब मिसेज राय मैनेजिंग डाइरेक्टर थी, तब भी उसने काम किया है। लेकिन जब से लोकनाथ आया है, कुछ और ही तरह का हो रहा है। दफ़्तर का परंपरित वातावरण बदल जाने की स्थिति मे आ गया है। बिना किसी कारणवश अचानक वर्क्स-मैनेजर को बुलवा भेजता है और आने पर कहता, "अच्छा मिस्टर सिन्हा, कंपनी का फ़्युचर कैसा मालूम पड़ता है ?"

आश्चर्यजनक कांड ! मिस्टर सिन्हा कहता, "फ़्युचर तो अच्छा ही है, सर !"

लोकनाथ कहता, "देखिए, फ़्युचर अच्छा है या बुरा, यह मेरी समझ में नही आता। यह कम्पनी हम लोगों की कंट्री, हमारे देश और हमारे वर्करों की कोई भलाई कर रही है ?"

"भलाई जरूर ही कर रही है, सर ! पिछले वर्ष का बैलेंस-शीट मैने देखा है, ऑडिटर्स-रिपोर्ट भी मैंने पढी है। आपने भी पढ़ी है। इसीसे समझ सकते है कि फ़्युचर कितना ब्राइट है !"

लोकनाथ ने कहा, "देखिए वह बैलेंस-शीट बिलकुल धोखा-धड़ी है। एकाउंटेंटों के हाथ की सफ़ाई है। उस पर मै विश्वास नही करता हूँ। वे

लोग रात को दिन और दिन को रात कर सकते हैं। असली बात है, यह ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स देश की भलाई कर रहा है या नहीं ?"

'ज़रूर कर रहा है, सर ! देश में इस तरह की जितनी लिमिटेड कंपनियाँ बन जायें उतना ही अच्छा रहे। प्रोडक्शन उतना ही बढ़ेगा। और प्रोडक्शन बढ़ने से ही कंट्री की उन्नति...।"

"कंट्री ? कंट्री का मतलब ?"

वर्क्स-मैनेजर मिस्टर सिन्हा ने कहा, "कंट्री का मतलब है हम लोगों का बंगाल, इंडिया। हम लोग सभी इंडिया की ही उन्नति चाहते है ?"

लोकनाथ ने कहा, "आर यू श्योर ? हम लोग कंट्री की उन्नति चाहते हैं ?"

"ज़रूर चाहते है, सर ! ऐसा न होता तो लेट मिस्टर राय यह कंपनी बनाते ही क्यों ? अपनी उन्नति के लिए अपनी प्रापर्टी बनाने के लिए उन्होंने नहीं किया था। वह साधारण गरीब लोगो की भलाई करना चाहते थे।"

"वह भलाई क्या हो पायी है ?"

इसका उत्तर कोई भी नही दे सका। लोकनाथ जब तक ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स का मैनेजिंग डाइरेक्टर था तब तक कोई भी इसका उत्तर नहीं दे सका।

वसुमती देवी एक दिन बोली थीं, "तू यह सोचकर परेशान क्यों होता है, मुन्ना ? उस कुरसी पर एक दिन मैं भी बैठ चुकी हूँ। मजदूरों के बारे मे सोचकर मैं कभी परेशान नहीं हुई। उन बातों को मैं हमेशा मिस्टर सरकार पर छोड देती थी।"

आश्चर्य की बात है, वही मिस्टर सरकार जब ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स से हटे तो उन्होने क्षतिपूर्ति के रूप मे पचास हज़ार रुपये लिये। जिस तरह सभी को कुछ-कुछ दिया गया था, ठीक उसी रूप में।

लेकिन तब तक लेबर-लीडर की हैसियत से मिस्टर सरकार ने घर, गाड़ी, जायदाद बना ली थी। अपने भविष्य को सुंदर बना लिया था।

और वह रामभजन ?

उस दिन रामभजन की फिर से खोज हुई। तब लोकनाथ कंपनी छोड़ चुका था।

रामभजन आश्चर्यचकित हो गया। साथ-साथ लोकनाथ को भी आश्चर्य हुआ।

रामभजन तब एक बस्ती में जाकर रहने लगा था। अपने पास लोकनाथ को पाकर वह बोला, "हुजूर, आप!"

न गाड़ी है और न वह साज-पोशाक ही। उसके बदले है बढ़ी हुई दाढ़ी, मैला कुरता, हाथ में एक झोली।

'कैसे हो, रामभजन ?"

रामभजन बहुत बरसों से कलकत्ता में है। वह बहुत प्रकार के अनुभव बटोर चुका है। कलकत्ता में जापानी बम बरसते देखा है, कलकत्ता छोड़कर भागने की घटना से साक्षात्कार किया है, अकाल का नज़ारा देखा है, सड़कों पर लोगों को मरते हुए देखा है और उसके बाद दंगे को देखा है। हिंदू-मुसलिम दंगे के समय रामभजन बंदूक लिये मालिक के मकान में पहरा लगा चुका है। उन दिनों की बातें रामभजन को याद है। लेकिन ऐसी घटना उसने कभी नहीं देखी थी।

"तुम अब भी नौकरी करते हो, रामभजन ?"

"कर रहा हूँ, हुजूर।"

"कितना मिलता है ? अब तो तुम लोगों की अपनी कंपनी है। तुम्हारी तनख्वाह बढ़ी है ?"

रामभजन बोला, "नहीं; बढ़ी नहीं है बल्कि कम हो गयी है। महीने में पचास रुपया कम हो गया है। मैनेजर साहब ने बताया है कि कंपनी घाटे में चल रही है।"

लोकनाथ ने अपने इर्द-गिर्द दृष्टि दौड़ायी। मानिकतल्ला की बस्ती का अंचल। गंदी आबोहवा में खड़े हुए लोकनाथ ने एक बार रामभजन की ओर देखा और फिर इर्द-गिर्द फैली बस्ती की ओर दृष्टि दौड़ायी। छोटे-छोटे मकान हैं, ऊपर टीन ईंटों से दबाकर रखी हुई है। उसके बाद लोकनाथ ने इस बीच कब हाथ बढ़ाकर रामभजन के हाथ में रुपये थमा दिये, इसका खयाल न रहा। शायद रामभजन ने कल्पना तक नहीं की थी कि साहब इस तरह आयेंगे और उसे रुपया थमा जायेंगे, उसकी खोज-खबर रखेंगे और उसे खाना मिल रहा है या नहीं, अपनी आँखों से देख जायेंगे।

याद है, रामभजन की आँखों से आखिर मे आँसू लुढक पड़े थे। उसने सोचा तक नही था कि हुजूर इस तरह डेरे का पता लगाकर आयेंगे।

उसके हाथ मे तब भी रुपये पड़े थे। सौ-सौ रुपये के नोट, वह भी पाँच नोट। रामभजन ने इसकी कल्पना तक न की थी। तब नोटों को लेकर वह उनका अनुभव करने लगा। फिर जब ध्यान आया तो देखा, हुजूर अब वहाँ मौजूद नही है।

एक बार वह सलाम करे और सलाम करके अपने मन की कृतज्ञता प्रकट करे, इसका भी अब उपाय नही रहा। हुजूर तब आँखो से ओझल हो चुके थे। रामभजन को उस दिन पता भी न चला कि पाँच सौ की यह राशि लोकनाथ ने अस्सी रुपये के लब खाने के हरजाने के रूप मे दी थी।

ये सब पहले की घटनाएँ है। तब लोकनाथ के मन में जो क्रांति छिड़ी हुई थी, बाहरी लोगों के लिए यह जानने की बात नही थी। बाहर से हमें पता था कि लोकनाथ विराट् ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स का मैनेजिंग डाइरेक्टर है। एक दिन वह शादी करेगा। कुलीनवंश की सुन्दर, स्वस्थ और विदुषी लड़की देखकर उसकी नानी अम्मा उसे घर की बहू बनाकर ले आयेगी।

यही साधारण गणित है। तमाम दुनिया इस गणित को मानकर चलती है। लोकनाथ के संदर्भ मे भी यही गणित लागू होगा।

लेकिन अचानक विकास ने आकर एक दिन सूचना दी, "लोकनाथ की खबर का पता है ?"

"खबर क्या है ?" मैंने कहा।

विकास ने कहा, "ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स मे लाल बत्ती जल गयी।"

"लोकनाथ के दफ्तर मे ?"

"हाँ।"

"क्यों ? क्या हुआ था ? कंपनी फ़ेल हो गयी ?"

विकास को जैसे कोई खुशखबरी मिली हो और वह खुशी से लड़खड़ा रहा हो। जैसे विकास को लोकनाथ के अधःपतन से खुशी हुई है।

'जब तक उसके पिता थे, चल रहा था," विकास ने कहा, 'लेबर-लीडर केदार सरकार को अंडरहैंड रुपया देकर कंपनी चलाये जा रहे थे। अब बाप के मरने के बाद लोकनाथ चला नहीं पाया। भैया, आजकल कंपनी चलाना क्या इतना आसान है ? कंपनी जो हमें ढाई हजार रुपये हर महीने तनख्वाह दे रही है यह क्या चेहरा देखकर दे रही है ? मैं हूँ, कंपनी इसलिए है, यह कोई भी नहीं समझता।"

मैंने कहा, 'बात क्या है ? अन्दरूनी खबर क्या है ?"

विकास ने कहा, "अन्दरूनी खबरों का अब तक ठीक-ठीक पता नहीं चला है। लगता है, इसके पीछे कोई लड़की है।"

"लड़की ?"

विकास ने कहा, "लड़की नही होती तो तीन पुरखो की यह लिमिटेड कंपनी कोई स्वेच्छा से छोड़ देता ?"

विकास ने अलबत्ता यह बात कही, लेकिन मुझे विश्वास नही हुआ। लड़की पृष्ठभूमि में न रहे फिर भी कंपनी बंद हो जाती है, इस तरह की घटना कई बार देख चुका हूँ। बहुत खोज-पड़ताल करने के बाद भी समझ मे न आया कि इसका क्या कारण हो सकता है। जो लोग व्यवसाय की दुनिया की खबरें रखा करते है उनसे पूछा, कारण क्या है ? लेकिन कोई कुछ बता नही सका। विदेशी कंपनी से कोलाबरेशन है, मोटी आय होती है। कहा जा सकता है कि लोकनाथ का एकाधिकारी व्यवसाय था। प्रति-योगिता का कोई झमेला नही था और न हानि होने की ही संभावना थी। मोटर-गाड़ी की एजेंसी से लाभ की दर पर्याप्त थी। नियमपूर्वक सेलसटैक्स देते जाओ। और कुछ करना नहीं होगा।

लेकिन उसके बाद ही एक दिन आश्चर्य में डूबा विकास मेरे दफ्तर मे फिर से दौड़ा-दौड़ा आया।

"कहा था न !" विकास ने कहा, "कहा था न कि इसके पीछे एक लड़की है।"

मैं चुपचाप उसके चेहरे पर आँखें टिकाये रहा।

विकास ने कहा, "लोकनाथ ने मुझे एक चिट्ठी भेजी है।"

"तुम्हारे पास चिट्ठी भेजी है।"

"हाँ, एक लड़की को नौकरी देने को कहा है। वही लड़की चिट्ठी लेकर थोड़ी देर पहले मेरे पास आयी थी...!"

"देखने मे कैसी है ? उम्र क्या होगी ?"

किसी महिला के संबंध में कोई कौतूहल जगने से शुरू में मन मे यही दो प्रश्न जगते हैं : देखने में कैसी है और उम्र कितनी है ?

विकास ने कहा, 'नॉट बैड, और उम्र यही बाईस-तेईस के लगभग होगी, उससे अधिक नहीं।"

"नाम क्या है ?"

"सरजू सिकदार।"

"क्या चाहती है ?"

"और क्या चाहेगी ? नौकरी।"

'तुम उसे नौकरी दोगे ?"

विकास ने कहा, "तुम क्या कहते हो ? तुमसे ही पूछ रहा हूँ, नौकरी दूँ। आफ़्टर-ऑल, लोकनाथ हम लोगों का क्लास-फ्रेंड है। अभी उसकी हालत जैसी भी हो, किसी ज़माने में, कहा जा सकता है कि वे लोग कैलकटा के किंग थे।"

मैंने पूछा, "तुम उसे नौकरी दोगे ? तुमने क्या निर्णय लिया है ?"

विकास लोकनाथ की चिट्ठी पाकर जैसे चौबीस घंटे के अंदर लोकनाथ को भी पीछे छोड़कर आगे बढ़ गया है। प्रतिष्ठा की तराज़ू का ऊँचा भाग जैसे फिर से, इतने दिनों के बाद, सम्मान के वजन से विकास की ओर झुक गया है।

"अभी तक कोई निर्णय नहीं लिया है, भाई।" विकास ने कहा, "बताओ न, क्या करूँ ? नौकरी दूँ ?"

"वैकेंसी है ?"

"वैकेंसी न रहे तो भी मैं पोस्ट क्रीयेट कर सकता हूँ।"

मैंने पूछा, "वह लड़की *क्वालिफ़ाइड* है ?"

विकास बोला, "है। आजकल जिन क्वालिफ़िकेशनों की ज़रूरत पड़ती है, सब उसके पास हैं।"

"कैसे ?"

"उम्र कम है, सेहत अच्छी है—यही दो चीजें तो आजकल सबसे बडी क्वालिफ़िकेशन होती है।" और विकास ने एक कहक़हा लगाया। मैं विकास की उस हँसी को देखकर चौंक पड़ा।

विकास के सामने भले ही मैं चाहे जो कुछ बोलूँ और लोकनाथ के सदर्भ मे कितनी ही हँसी क्यो न उड़ाऊँ, लेकिन लोकनाथ वास्तव मे हम सबो के लिए एक आश्चर्य था। अलग-अलग जगहों से लोकनाथ के बारे में इतनी तरह की खबरें हम लोगो के कानों मे आती थी कि हम लोग सोचते थे, या तो लोकनाथ पागल है या वह एक महापुरुष है। इसके अतिरिक्त आधुनिक काल मे जो लोग महापुरुषो के नाम से विख्यात हैं उन्हे दरअसल शैतान के सिवा और कहा ही क्या जा सकता है! दरअसल हम सभी शैतान है—हम लोग जो टेरिलिन-टेरिकॉट पहनकर गृहस्थ बन कर बैठे है और वे जो देश-सेवा के नाम पर राजनीति के पेशे अपनाये हुए है। इन दो जमातो के साथ हम लोगो के बीच एक और जमात है जो आदमी को आध्यात्मिकता की धोखेबाजी का शिकार बनाती है। वे भी शैतान ही हैं। अंतर केवल इतना ही है कि लोकनाथ हमारी इन तीन जमातो मे से किस जमात का है, यही बात हम समझ नही पा रहे थे।

उस दिन सिथि के रास्ते मे उसकी मुलाकात एकाएक केदार सरकार से हो गयी। "यह क्या सर, आप? आप इधर कहाँ जा रहे हैं?"

इसी ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स का सब-एकाउंटेंट—केदार सरकार। लेबर यूनियन का सेक्रेटरी था। बाद में प्रेसिडेंट हुआ और हर महीने कंपनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर से बँधी-बँधायी सात सौ रुपये की राशि रिश्वत लेता रहा।

केदार सरकार से पिछले दिनों खिदिरपुर के मानसतल्ला लेन में मुलाकात हुई थी। अब की सिथि में हुई। लेकिन अब वह पैदल चलने वाला केदार सरकार नहीं था। बिलकुल नयी गाड़ी में बैठा था। लोकनाथ पर दृष्टि पड़ते ही केदार सरकार नीचे उतर आया।

"कैसे हैं, सर?" केदार सरकार ने पूछा।

लोकनाथ का चेहरा दाढ़ी से भरा था, कंधे पर झोला, पैरों में चप्पल। मिस्टर सरकार के चेहरे पर दृष्टि डाली। अब केदार सरकार खासा मोटा हो गया है। गाड़ी की ओर भी गौर से देखा।

"यह गाड़ी!"

केदार सरकार बोला, "खरीदी है। अब पैदल चल नहीं पाता हूँ। उम्र ढलती जा रही है।"

"हाँ, आजकल गाड़ी न हो तो चला ही कैसे जाये? लेबर-ट्रबुल पहले से तो बढ़ गया है।"

केदार सरकार बोल उठा, "मत कहिये सर, चारों तरफ़ इतना लेबर-ट्रबुल है कि अब संभाल नहीं पा रहा हूँ। कल की ही बात है, चीफ मिनिस्टर ने बुला भेजा था। लेकिन मैं क्या करूँ, बताइये तो सही। मेरे व्यक्तिगत बिजनेस की देख-भाल कौन करे, इसी का कोई ठीक नहीं है। ऐसे मे लेबर-ट्रबुल सेटिल करना क्या मुझसे संभव है?"

"लेकिन वह तो आपका प्रोफेशन है।"

"प्रोफ़ेशन नहीं सर, कहिये मिशन।"

लोकनाथ एकाएक बोलने लगा, "अच्छा मिस्टर सरकार, इस मुल्क में जिस दिन लेबर-ट्रबुल नहीं रह जायेगा उस दिन आप जैसे लेबर-लीडर क्या करेंगे? तब क्या इंडिया छोड़कर पाकिस्तान चले जायेंगे? वहाँ जाकर लेबर-ट्रबुल पैदा करेंगे?"

केदार सरकार हँस दिया। "आप ठीक कह रहे हैं सर, इतने बुरे दिन आ गये हैं कि मालूम पड़ता है, अंत में पाकिस्तान ही नहीं अफ्रीका भी जाना पड़ेगा...।"

"यही कीजिये, केदार बाबू। आप लोगों के जाने से मजदूरों को कम-से-कम पेट-भर खाना तो नसीब होगा। उन लोगो,की नौकरी कम-से-कम बची तो रहेगी, हड़ताल का भय नहीं रहेगा। और आप यह सुनकर हैरान हो जाइयेगा कि जब से मैंने अपना शेयर छोड़ दिया है, ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के रामभजन की तनख्वाह में पचास रुपये की कमी आ गयी है।"

यह बात केदार बाबू को संभवतः अच्छी नहीं लगी।

"इस ओर किसी काम से आये थे क्या, सर ?"

लोकनाथ ने कहा, "काम ? क्यों काम की बात आप क्यों कर रहे हैं ?"

"नहीं, कहने का मतलब है कि आपको कभी इस तरफ़ नही देखा था।"

लोकनाथ ने कहा, "मैंने भी तो आपको कभी इस ओर नही देखा था।"

केदार बाबू ने कहा, "मुझे देखियेगा कैसे ? मैं कभी सिंधि आता हूँ और कभी दिल्ली में रहता हूँ और कभी बंबई में। आजकल आपकी तरह इस ओर आने का मुझे समय मिलता ही नहीं है। अभी ईस्टर्न मिल की ओर जा रहा हूँ।

"क्यो ? वह क्या आपकी कंपनी है ?"

"क्या कह रहे हैं आप ! वह मेरी कंपनी क्यों होने लगी ? मैं वहाँ की लेबर-यूनियन का प्रेसिडेंट हूँ।"

लोकनाथ ने एकाएक पूछा, "वहाँ कंपनी आपको महीने में कितनी तनख्वाह देती है, मिस्टर सरकार ?"

"तनख्वाह ? तनख्वाह किस चीज की ?"

लोकनाथ बोला, "तनख्वाह किसी चीज की, समझ नही पा रहे हैं ? ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स से आपको हर महीने सात सौ रुपये मिला करता था, मैंने पुराने खाते में देखा है।"

"तब की बात कुछ और ही थी। तब कंपनी से मैं तनख्वाह भी कम लिया करता था।"

"तनख्वाह कम लेने के कारण ही रिश्वत लेते थे ?"

केदार सरकार तब शायद जल्दबाजी में था। जल्दी-जल्दी गाड़ी के अंदर जाकर बैठ गया। जाता हुआ बोला, "आप एक गाड़ी खरीद लें, सर ! अब पैदल मत चला करें। आपको पैदल चलना शोभा नही देता।"

लोकनाथ ने कहा, "आपने गाड़ी पर चढ़ना शुरू किया है और मैंने पैदल चलना। हर्ज ही क्या है ! आपका आरंभ हुआ और मेरा अंत।"

और लोकनाथ हँसने लगा। लेकिन तब तक केदार सकरार की गाड़ी लोकनाथ की नाक में धुआँ भरकर चली गयी थी।

सचमुच केदार सरकार के गाड़ी पर चढ़कर सैर-सपाटा करने के

ही दिन थे। केदार सरकार गाड़ी पर चढ़कर सैर-सपाटा नहीं करेगा तो क्या लोकनाथ करेगा !

सरजू सिकदार को उस दिन की बात याद है। उसे किसी ने एक दिन बताया था कि ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स का मैनेजिंग डाइरेक्टर उन लोगों के साथ पढ़ता था। उस व्यक्ति ने लोकनाथ के चेहरे का ब्योरा भी दिया था। स्कॉटिश चर्च कॉलेज के बहुत चेहरों में से वह चेहरा अपनी खासियत रखता है। ऐसे चेहरे को एक बार देख लेने के बाद भूलना मुश्किल है, गाड़ी पर आता था और फिर कॉलेज खत्म होने के बाद गाड़ी से घर लौटता था। बड़े आदमी की संतान होने के कारण अहंकार से मिट्टी पर पाँव रखने में उसे लज्जा का बोध होता था।

लेकिन पेट ऐसी चीज़ होता है कि इच्छा-अनिच्छा, लज्जा-संभ्रम—किसी की रोक नही मानता है।

इसीलिए पता लगाती हुई सरजू एक दिन ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के दफ़्तर के सामने जाकर उपस्थित हुई।

लेकिन दूर से ही बिल्डिंग को देखकर मन में एक प्रकार का सदेह जगा। दफ़्तर के सामने इतनी पुलिस क्यों है ? डरती-डरती निकट पहुँची और देखा, आदमियों की खासी बड़ी भीड़ है और कारखाना बंद है। फाटक के बाहर कारखाने के कर्मचारी हैं। पुलिस किसी को भी अन्दर जाने नहीं दे रही है।

आस-पास के लोगों से पूछा, "यहाँ क्या हुआ है ?"

बहुत पूछने के बाद एक व्यक्ति ने आहिस्ता से बताया, "अन्दर एक कर्मचारी की हत्या हो गयी है।"

"हत्या ?"

यह बात सुनते ही सरजू चौंक पड़ी थी। ठीक जिस दिन सरजू लोकनाथ से मिलने आयी, उसी दिन एक आदमी की हत्या हो गयी ! यह भी उसका भाग्य ही है !

उसके बाद सरजू वहाँ रुकी नही। फिर नौकरी की तलाश में वहाँ नही गयी।

इतने दिनों बाद फिर से उसी प्रसंग को याद करना पड़ेगा, सरजू ने तब वह सोचा तक न था।

लेकिन ऐसा क्यों हुआ ? क्यों वह आदमी इस स्थिति में आ गया था ?

लेकन सरजू को उस दिन मालूम नहीं था कि तब लोकनाथ के जीवन में एक और क्रांति का सूत्रपात हो गया था। बहुत-सी ऐसी क्रांतियाँ होती हैं जो बाहर से नहीं दीख पड़ती हैं। जो अन्दर-अन्दर सुप्त ज्वालामुखी की तरह क्रियाशील रहता है वह आदमी पूर्णतः निःस्व हो जाता है। आदमी को वह क्रिया निःसहाय और निरवलब बनाकर रास्ते की धूल पर उतार देती है। बाहरी तड़क-भड़क की ओट में भीषण दरिद्रता की चोट से वह जर्जरित हो जाता है।

और सिर्फ सरजू के बारे में ही क्यों कहा जाये, किसी को भी इसकी जानकारी नहीं थी। सगी नानी होने के बावजूद वसुमती देवी ही क्या जान पायी थी ?

लेकिन उसी समय एक दिन एक घटना घटित होने पर वसुमती देवी चौंक पड़ी थी। एक दिन एक लड़की ने आकर उनसे मिलना चाहा।

शुरू में वसुमती देवी स्तंभित रह गयीं। "मुझसे मिलना चाहती है ?" वसुमती देवी ने पूछा, "कहाँ से आयी है ?"

कुसुम बोली, "मालूम नहीं। दरवान से कहा है, उसे मुन्ना बाबू से काम है।"

"मुन्ना बाबू से ? मुन्ना बाबू घर पर हों तो उससे मिलने को कहो।"

कुसुम बोली, "भैयाजी तो नहीं हैं...।"

"मुन्ना नहीं है फिर भी मुझसे मिलना चाहती है ?"

"हाँ।"

फिर उस लड़की को ले आने को कहा। उस लड़की के आते ही और उसका चेहरा देखते ही वसुमती देवी दंग रह गयीं। यह कौन है ? उस लड़की का चेहरा देखते ही समझ गयीं कि वह ग़रीब घर की लड़की है। एक सस्ती साड़ी पहने है, हाथ से सिली ब्लाउज़।

"तुम कौन हो ? कहाँ से आयी हो ?" वसुमती देवी ने पूछा।

"मैं बेलघरिया से आयी हूँ।"

वसुमती देवी के चेहरे पर तिरस्कार की एक रेखा खिंच आयी।

"मुन्ना से तुम्हारा परिचय किस तरह हुआ !"

वह लड़की बोली, "मैं उनके दफ्तर में नौकरी की तलाश में गयी थी। वहीं पहले-पहल परिचय हुआ...।"

"इसके बाद क्या हुआ ? अब नौकरी छूट गयी है क्या ?"

वह लड़की बोली, "नहीं, मुझे नौकरी मिली ही नहीं...।"

"ओह, फिर उसके पास नौकरी की तलाश में आयी हो ? लेकिन नौकरी के लिए घर पर मिलना मैं पसन्द नहीं करती हूँ। तुम लोग उससे मिलने के लिए घर पर क्यों आती हो ? दिन-भर का थका-माँदा कोई घर लौटता है और तुम लोग उसे आराम तक नहीं करने दोगी ? तुम लोगों की यह हिम्मत कि घर पर आकर तंग किया करो ! जाओ, फिर कभी मत आना, जाओ !"

वह लड़की एक क्षण के लिए खामोश रही, फिर बोली, "मैं नौकरी की तलाश में नहीं आयी हूँ।"

"नौकरी की तलाश में नहीं आयी हो तो क्या करने आयी हो ?"

वह लड़की बैग से कुछ नोट निकालती हुई बोली, "कुछ रुपये उन्हें देने आयी थी।"

रुपया ! रुपये की बात सुनते ही वसुमती देवी को जैसे एक धक्का लगा। मुन्ना को रुपया देने आयी है ! ऐसी घटना तो कभी घटित नहीं हुई। आमतौर से लोग लोकनाथ से रुपया माँगने ही आया करते हैं। लोकनाथ को इसके पहले रुपया देने के लिए कोई भी नहीं आया था। यह तो एक नयी घटना है। यह लड़की लोकनाथ को रुपया देने आयी है !

"कितने रुपये ?'

"बीस रुपये नब्बे पैसे।"

वसुमती देवी रुपये और रेजगारी हाथ में लेती हुई बोली, "यह रुपया किस चीज का है ?"

उस लड़की ने कहा, "जूतों के।"

"जूतों के !"

उस लड़की ने कहा, "हाँ, जूतों के। लोकनाथ बाबू ने मुझे एक जोड़ा जूता खरीद दिया था। उसी कर्ज को आज चुका रही हूँ।"

वसुमती देवी और भी अधिक आश्चर्य में आ गयी। लोकनाथ ने इस हैगर्ड लड़की को जूता खरीद दिया है ! यह लड़की उसे ठग रही है क्या ?

"तुम्हारा नाम क्या है ?" वसुमती देवी ने पूछा।

"सरजू...सरजू सिकदार। उनसे कहियेगा : सरजू सिकदार तुम्हारे रुपये दे गयी है...।"

फिर बोली, "आपको अगर याद न रहे तो मैं इस कागज पर अपना नाम-पता लिख देती हूँ।"

इतना कहकर और नाम-पता लिखकर वह चली जा रही थी। लेकिन उसके पहले ही वसुमती देवी ने उसे रोक लिया।

"सुनो, तुमसे एक बात पूछना चाहती हूँ। इतने लोगों के रहने के बावजूद मुन्ना ने तुम्हें ही जूता खरीदकर क्यों दिया ? तुम्हारे पास जूते तक खरीदने के पैसे नहीं थे ?"

सरजू वसुमती देवी की बात सुनकर स्तंभित रह गयी।

फिर वह स्वयं को सहेजती हुई बोली, "देखिए, मैं ग़रीब हो सकती हूँ मगर यह मत समझिये कि मैं भिखमंगी हूँ। किसी के दया-दान की भीख लेने के लिए मैं आपके घर पर नही आयी हूँ।"

इतना कहकर वह फिर रुकी नहीं, जल्दी-जल्दी नीचे उतर आयी। और उसके बाद एक ही क्षण मे सदर रास्ते पर चली आयी।

उन दिनों की बातें याद ही किसे हैं ! किसी को चाहे याद न रहे, लेकिन वसुमती देवी को अवश्य ही याद हैं। लेकिन उसके पहले लोकनाथ के बारे में बताऊँ। लोकनाथ पैदल चलता हुआ किसी-किसी दिन उसी टोले में चला आता है। चेतलगछिया के पुल से उतरकर बायें बाजू में जो छोटी-सी दुकान है उसके मालिक के पास कुछ देर के लिए बैठता है।

"छोटे बाबू, आइये, आइये !"

निमाई के पास जब कुछ भी नहीं था, वह रास्ते में फेरी किया करता था—कभी मनिहारी की चीजें, कभी आम या लीची और कभी रोटी-बिस्कुट। उसी दौरान छोटे बाबू से जान-पहचान हुई थी।

एक दिन चार आने का बिस्कुट खरीदकर छोटे बाबू ने निमाई को पूरा एक नोट दे दिया था।

"बाद में जब तुम्हें फ़ायदा होगा तब क़र्ज़ चुका देना।" लोकनाथ ने कहा था।

आज तक फ़ायदा भी नहीं हुआ और न लोकनाथ का क़र्ज़ ही वसूल हुआ।

बीच-बीच मे छोटे बाबू जब आते है, वह उनका मान-सम्मान करता है।

'एक कप चाय ले आऊँ, छोटे बाबू ?"

लोकनाथ को गुस्सा आया। "मैं क्या तुमसे कर्ज़ वसूलने आया हूँ कि तुम मुझे चाय पीने को कहते हो ? तुम क्या सोचते हो कि मैंने तुम्हारा उपकार करने के लिए तुम्हे पैसा दिया है ? नहीं जी, मैं किसी का भी उपकार नही किया करता हूँ। आज की दुनिया में कोई किसी का उपकार नही करता है। तुम मुझे चाय पीने को कहोगे तो मैं चला जाऊँगा।"

इतना कहकर लोकनाथ जाने-जाने को हुआ।

लेकिन निमाई हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। "अब चाय पीने को नहीं कहूँगा, छोटे बाबू !" निमाई ने कहा, "बैठिये, बैठिये !"

लोकनाथ फिर से तिपाई पर बैठ गया। उसने कहा, "जानते हो निमाई, मैंने तुम्हे जो रुपया दिया था वह तुम्हारा सर्वनाश करने के लिए।"

"क्या कह रहे हैं !"

"हाँ निमाई, मेरा अपना एक दफ़्तर था। उस दफ़्तर के कारखाने में बहुत-से आदमी काम करते थे। हर किसी को मोटी तनख्वाह मिलती थी। मोटी-मोटी तनख्वाह पर वर्क्स-मैनेजर, कैशियर, विलायती डिग्रीधारी इंजीनियर रखे गये थे। मगर एक दिन मैंने सब-कुछ छोड़ दिया। देखा, उससे मैं किसी का भी उपकार नही कर रहा हूँ, उपकार हो रहा है सिर्फ़

मेरा अपना। और लोगों को यह दिखा रहा हूँ कि जैसे मैं देश की सेवा कर रहा हूँ...।"

निमाई इतना पढ़ा-लिखा नहीं है। वह छोटे बाबू की बात क़तई नहीं समझ पा रहा था। वह बोला, "समझाकर कहिये, छोटे बाबु! आप लोग पढ़े-लिखे व्यक्ति ठहरे, आप लोगों की बात मैं क्योंकर समझूँ?"

लोकनाथ ने समझाने की कोशिश की, "अच्छा, तुमने तो बताया था कि अपने घर पर तुम मुरगी पालते हो।"

"जी हाँ। अभी उसके चार चूज़े हैं। थोड़ा बढ़ जायें तो काटकर खाऊँगा।"

लोकनाथ ने कहा, "उन मुरगियों को तुम खाने के लिए कुछ भी नहीं देते हो?"

"हाँ छोटे बाबू, खाने को देता हूँ। चावल के दाने, दाल के दाने, फिर भात खाने के बाद जो जूठन पड़ा रहता है, उन्हे खाने के लिए दे देता हूँ।"

"उन्हें तुम खाना क्यों देते हो, निमाई? तुम उन्हें खाना नहीं भी दे सकते हो। फिर भी तुम उन्हें खाना क्यों देते हो?"

"हुज़ूर, एक बार मैंने अपने घर पर एक मेमना भी पाला था। उसे हर रोज़ खाने के लिए चना देता था, कटहल के पत्ते, आम और कटहल का गूदा देता था। खिला-खिलाकर उसे खासा-तगड़ा बनाया था। फिर दस रुपये में ख़रीदे उस मेमने को डेढ़ सौ रुपये में एक कसाई के हाथ बेच दिया। उसने उसको ज़िबह करके मांस बेचा और ढेरों पैसा बनाया।"

लोकनाथ उछल पड़ा।

"निमाई, फिर तो तुम सब कुछ जानते हो। मैंने जो कुछ भी सीखा है, किताब पढ़कर सीखा है और तुम बिना किताब पढे सब सीख गये हो। जानते हो निमाई, मैं चौरंगी की एक पकौड़ी की दुकान में आया-जाया करता हूँ। वहाँ जादूगोपाल नाम का एक आदमी है। वह उस दुकान का मालिक है। वह भी लिखा-पढा नहीं है। लेकिन बिलकुल नासमझ है। जानते हो, उस दिन मेरे सामने एक लड़की को ले आया। तुम्हारे उस मेमने की तरह ही उसका बदन मांसल था। उम्र बाईस या तेईस से ज्यादा नही होगी। देखकर मेरे मन में बड़ी ही ममता जगी। सोचा, इसे ये लोग

जिबह कर डालेंगे ! जादूगोपाल छोड़ने वाला जीव नहीं है। वह लड़की, उसका नाम संभवतः सरजू है, छोड़ने वाली नहीं थी। वह बोली, कोई नौकरी दिला दीजिए। मैंने कहा—नौकरी दिलाने से तुम्हारा सर्वनाश हो जायेगा। नौकरी मत करो। लेकिन वह लड़की कहने लगी—मगर मुझे नौकरी चाहिए ही। अगर न दिलाइयेगा तो मेरे माँ-बाप, भाई-बहन सभी को भूखों तड़पना पड़ेगा। नौकरी दिला दीजिये।"

निमाई उसकी बात सुन रहा था। वह बोला, "उसके बाद ?"

"उसके बाद और क्या होगा, अपने एक मित्र को नौकरी के लिए मैंने चिट्ठी लिख दी।"

"नौकरी मिल गयी ?"

लोकनाथ ने कहा, "तुमने जिस तरह मेमने को कसाई के हाथों बेचकर खासा लाभ उठाया, मैं वैसा नहीं करना चाहता था, निमाई। यक़ीन मानो, मैं वैसा नहीं चाहता था।"

"उसके बाद ?...उसके बाद क्या हुआ, छोटे बाबू ?"

लोकनाथ ने कहा, "अब तक कोई सूचना नहीं मिली है। मगर देखना, एक दिन सभी उसको जिबह कर उसे खा जायेंगे। तुम जिस तरह अभी अपने घर पर मुरगी पाल रहे हो उसी तरह सरजू को वे लोग पाल रहे हैं। उसके बाद एक दिन तुम मुरगियों को काट डालोगे, सरजू को भी वे लोग मिलकर काट डालेंगे, देख लेना।"

निमाई छोटे बाबू की बात कुछ समझ नहीं पाया।

लोकनाथ निमाई के चेहरे की ओर देखकर समझ गया कि वह कुछ भी समझ नहीं सका। "तुम्हारी गलती नहीं है निमाई, दुनिया में कोई भी मेरी बातें समझ नहीं पाता है। [illegible] निमाई, मेरे माँ-बाप, [illegible] नौकर गिरधारी, हमारी नौकरानी कुसुम, [illegible] [illegible] [illegible] देवी, मेरे दोस्त-मित्र—कोई मेरी बात समझ नहीं पाते हैं। सभी समझते हैं, मैं पागल हो गया हूँ, [illegible] [illegible] नहीं करती है। [illegible] भी मैं गाड़ी पर नहीं चढ़ता हूँ, गाड़ी के लिए [illegible] [illegible] टेरिकॉट नहीं पहनता हूँ—फिर भी पागल नहीं हूँ [illegible] जानते हो निमाई, [illegible]

वह अब बहुत बड़ा लेबर-लीडर हो गया है। अब वह गाड़ी पर चढ़ता है और मैं पैदल घूमा करता हूँ। मुझे देखकर सभी कहते हैं कि वे सबके सब स्वस्थ हैं और केवल मैं ही पागल हूँ...।"

निमाई बोला, "आपको जो पागल कहता है, वह खुद ही पागल है, छोटे बाबू।"

लोकनाथ बोला, "मैंने जो तुम्हें पचास रुपये बतौर क़र्ज़ के दिये है, इसीलिए तुम मुझे पागल नहीं कहते हो, निमाई। जादुगोपाल भी मुझे पागल नहीं कहता है। लेकिन जानते हो निमाई, दुनिया में जितने बड़े-बड़े आदमी हैं उनके लिए हम मुरगी है।"

निमाई मुसकरा दिया। "मुरगी? क्या कह रहे हैं, छोटे बाबू?"

"हाँ निमाई, ठीक ही कह रहा हूँ। तुमने हिरोशिमा का नाम सुना है?"

"हिरोशिमा? वह क्या है, छोटे बाबू?"

"इस दुनिया में एक जगह है जिसका नाम है हिरोशिमा। वहाँ उन लोगों ने बहुत-सी मुरगियाँ पाली थी। जिबह करके खाने के लिए लाखों मुरगियाँ पाली थीं। तुमने जैसे घर में मुरगियाँ पाली है ठीक उसी तरह। तुम्हारी ही तरह वे भी मुरगियों को खाने-पहनने की चीज़ें देते थे, रहने के लिए मकान बनवा दिये थे, प्यास शांत करने के लिए पानी का टंक बनवा दिया था—ठीक उसी तरह जिस तरह तुम उनके मिट्टी के प्यालों मे पीने का पानी डालते हो...।"

"उसके बाद?...उसके बाद क्या हुआ?"

"उसके बाद मुरगियाँ जब कुछ बड़ी हुईं, कुछ मोटी-तगड़ी हुईं, और खुद दाना चुग-चुगकर जब खासी मोटी-तगड़ी हो गयी कि तत्काल...।"

निमाईदा के कई ग्राहक आ गये।

"दो तो भैया, तीन प्याली चाय, तीन अदद बिस्कुट।"

लोकनाथ उठकर खड़ा हुआ। "तुम उन्हें चाय दो निमाई, मैं फिर किसी दिन आऊँगा।"

बेलगछिया पुल के नीचे की इस दुकान को लोकनाथ ने ही एक दिन पचास रुपये क़र्ज़ देकर बनवा दिया था। अब निमाई अपने पैरों पर खड़ा हो

गया है। इस चाय की दुकान की बदौलत ही अब इस मुहल्ले में उसने एक मकान किराये पर ले लिया है। गृहस्थी बसायी है। घर मे मुरग़ियाँ पाली हैं। सो वह पाले। ज़िबह करके खाने के लिए जिन्हें पाला गया है उनकी सहायता करके उसने कौन-सा उपकार किया है ? एक दिन वे लोग सभी को ज़िबह कर डालेंगे !

लोकनाथ ने अपना झोला कंधे पर डाला और फिर से चलना शुरू किया।

उस दिन दफ़्तर से जल्दी ही छुटकारा पाकर मैं सीधे लोकनाथ के घर पर पहुँचा। आने की सूचना वसुमती देवी को पहले ही टेलिफ़ोन से दे दी थी। कितने बरसों के बाद लोकनाथ के घर पर जा रहा हूँ। बचपन की सारी स्मृतियाँ हरी हो गयीं—लोकनाथ की सालगिरह पर हमलोगों को निमंत्रित करना। बड़े आदमी के लड़के को सस्ती कलम उपहार में देकर लज्जा का अनुभव करना। फिर उस सजे-सजाये ड्राइंगरूम की शक्ल की भी याद आयी। शुरू से अंत तक खादी के कपड़ों से सजा। खिड़की-दरवाज़ों मे महीन खादी के छपे परदे। और पाँवों के नीचे फ़र्श पर रंगीन बेल-बूटेदार गलीचा।

कार्तिकराय के पास उतना वक़्त नहीं था कि उन सब चीज़ों के लिए माथा-पच्ची करें। सब-कुछ का भार वसुमती देवी पर था।

"आओ बेटा, आओ !"

पहले भी इस ड्राइंगरूम में आ चुका हूँ। परन्तु इस बार आने पर लगा कि सब-कुछ श्रीहीन हो गया है।

"क्या खिलाऊँ बेटा, बताओ। ऑफ़िस से आ रहे हो। थोड़ी-सी मिठाई खाओ और शर्बत बनाने को कह देती हूँ।"

मैंने कहा, "अच्छा नानीअम्मा, वे सब तसवीरें क्या हुईं—राजेन्द्र-प्रसाद, गांधीजी, पंडित मोतीलाल नेहरू की तसवीरें ? फिर लोकनाथ के *नानाजी की तसवीरें—वे सब कहाँ गयीं ?"*

वसुमती देवी बोलीं, "क्यों, तुम्हें कुछ मालूम नहीं है ? उन तसवीरों

को मुन्ना ने तोड़ डाला है। तोड़कर चूर-चूर कर दिया है।"

सुनकर मैं अवाक् रह गया। "क्यों, तसवीरों ने क्या गलती की थी ?" मैंने पूछा।

वसुमती देवी बोली, "वह कहने कौन जाये ? तुम्हीं बताओ बेटा, जिन लोगो की तसवीरें टँगी हुई थीं उनमें से कोई क्या बुरे आदमी है ? वे सभी प्रातःस्मरणीय व्यक्ति है। मेरे इसी कमरे में सभी आ चुके हैं। मुन्ना जब छः साल का था, उनमे से अनेको ने उसे गोद मे लेकर प्यार किया था। यहाँ तुम जिस कुर्सी पर बैठे हो, यहाँ महात्मा गांधी पाँव मोड़े बैठ कर तकली से सूत कात चुके है। वह दृश्य अभी तक मेरी आँखों के सामने तैर रहा है। उस तसवीर को भी जिसमें वह चरखा चलाते हुए दीख रहे थे, मुन्ना ने तोड़ डाला है।"

मैंने पूछा, "तसवीरों ने क्या गलती की थी ?"

"क्या मालूम, बेटा ! हमे कुछ पता नही था। रात के वक़्त मैं अपने कमरे में सोयी हुई थी। फ़र्श पर मेरी नौकरानी कुसुम भी नींद में बेहोश थी। लाइब्रेरी रूम में धड़ाम-धड़ाम आवाज़ होते सुनकर मेरी नींद टूट गयी—मैं दौड़ पड़ी, साथ-साथ कुसुम भी। देखा, सरकार भी दौड़े-दौड़े आये। गिरधारी और बैजू आये। तुम गिरधारी को पहचानते हो न !"

मैं बोला, "लोकनाथ से उसका नाम सुना है।"

"सरकार दरवाज़े को ठेलने लगा, 'भैयाजी दरवाज़ा खोलिए, भैयाजी दरवाज़ा खोलिए'...!"

"उसके बाद !"

वसुमती देवी ने कहना शुरू किया, "तुम लोग तो बेटा, मुन्ना को छुटपन से ही देखते आ रहे हो। हमेशा ही वह दूसरे लोगों से अलग प्रकृति का रहा है। दूसरे लोग जो कुछ कहते है, हमेशा वह उनसे अलग ही कुछ करने का ज़िद्दी रहा है। बचपन मे ही वह पूछा करता था—आकाश में चाँद क्यों उगा करता है, नानी अम्मा ? सवेरे आकाश मे सूर्य क्यों उगा करता है ? आदमी क्यों जन्म लेता है और क्यों उसकी मृत्यु होती है ! बैजू के साथ उसे घूमने भेजती थी। बैजू हमारे घर में बचपन से ही रह रहा है। उसे सब-कुछ मालूम है। कुछ-कुछ तो तुम लोगों को भी मालूम है, बेटा ! सवाल

पूछते-पूछते टीचरों की नाक में दम कर देता था।"

मैंने हामी भरी, "यह तो हम सबों को मालूम है। यही वजह है कि हम लोगों ने उसका नाम 'बुद्धदेव' रखा था।"

वसुमती देवी कहने लगी, "सोचती थी, वचपन मे ऐसा स्वभाव बहुतों का रहता है। जब बड़ा होगा तो हो सकता है कि सुधर जाये। हो सकता था कि सुधर भी जाता। उसे जब कम्पनी का मैनेजिंग-डाइरेक्टर बनाया तो सोचा, हो सकता है, आहिस्ता-आहिस्ता सामान्य स्थिति में लौट आये। लेकिन वहाँ जाने पर भी वही निरालापन। वहाँ का दरबान है रामभजन। एक दिन रामभजन को बुलाकर मेरे पास ले आया। कहा, उसकी तनख्वाह बढ़ा दूँगा। देखो तो, खुद मैनेजिंग डाइरेक्टर होकर तनख्वाह बढ़ाने के लिए मेरे पास ले आया। अच्छा तुम्ही बताओ तो, आजकल यों ही बात-बात में किसी की तनख्वाह बढ़ायी जा सकती है ? यूनियन के अनेकों झमेले हैं। यों ही किसी की तनख्वाह बढाना सभव है ? मैंने जब पूछा कि इतने आदमियों के रहते सिर्फ उसकी ही तनख्वाह क्यों बढ़ाओगे तब उसने क्या कहा, जानते हो ! कहा कि होटल जाकर दो व्यक्तियों के खाने में मैंने अस्सी रुपये खर्च किये हैं—अपने और गवर्नमेंट के सेल्सटैक्स ऑफ़िसर के खाने पर। रामभजन की एक महीने की तनख्वाह है अस्सी रुपये। लो, उसकी बात सुनो ! एक मामूली दरबान से अपनी तुलना ! वह चाहे सत्तर रुपये पाये या अस्सी, इसके लिए माथापच्ची करने की जरूरत ही क्या है, भैया ! तू सेल्सटैक्स, प्रोडक्शन, इनकम टैक्स उसके बाद इम्पोर्ट लाइसेंस और एक्सपोर्ट लाइसेंस—इन बातों की बावत माथापच्ची कर। मालूम ही है बेटा, कि अब वह जमाना नही रहा। जब तक जवाहर-लाल नेहरू था, मैं खुद दिल्ली जा-जाकर उससे मिला करती थी, अब उसकी लड़की समाजवाद का शोर मचाती है। अब उसके पास वक्त है कि बगाल के बारे मे सोचे ? यहाँ जो इतनी मार-पीट, खून-खराबा हो रहा है, इसके लिए तो सेंटर ही जिम्मेदार है, बेटा। और मैं दिल्ली जाकर अगर यही बात कहूँ कि आज देश की यह हालत तुम्ही लोगों के कारण है तो मैं कैपिटलिस्ट कहाऊँगी।"

कहते-कहते वसुमती देवी चुप हो गयीं।

"खैर !" वह बोलीं, "तुम्हें अब ज्यादा देर तक रोककर नहीं रखूँगी। तुम सवेरे ही घर से दफ्तर के लिए निकले हो, अभी तक घर नहीं जा पाये हो। तुम्हें जो बात कहने के लिए बुलाया है, वही कहूँ। तुम्हें तो पता ही होगा कि उसने फ़ैक्टरी क्यों बन्द कर दी !"

मैंने कहा, "मुझे वह मालूम नहीं है। उससे पूछा था, लेकिन वह खोल कर कुछ बताना नहीं चाहता है।"

वसुमती देवी बोलीं, "तुमने हिरोशिमा के संबंध में कोई किताब पढ़ी है ?"

मैं आश्चर्य में आ गया। "हिरोशिमा ?"

"हाँ बेटा, वह घटना मैं अब तक भूली नहीं। एक ही रात में घटना घटी। जब आधी रात में लाइब्रेरी-रूम में धड़ाम-धड़ाम शब्द होने लगा, मैं भय से चंचल हो उठी। रात में मुन्ना के साथ बैठकर एक ही मेज़ पर खाना खाया था। उस वक़्त भी उसने कुछ नहीं बताया था। खाना खाने के बाद मुन्ना हमेशा ही एक गिलास दूध पीने का अभ्यस्त रहा है। उस दिन भी गिरधारी दूध का गिलास ढँककर तिपाई पर रख आया था। उसके बाद मैं भी सोने चली गयी। खाना खाने के बाद हमेशा मुन्ना लाइब्रेरी-रूम में बैठकर किताबें पढ़ा करता है। किताबें पढ़ना उसकी बचपन की आदत है। हाथ में एक किताब लिये वह पढ़ने बैठा। देखा, लाल रंग की एक किताब थी। उस किताब को उस दिन वह दफ़्तर से लौटते वक़्त वह चौरंगी से खरीदकर ले आया था। लेकिन वही किताब मेरा सर्वनाश कर डालेगी, इसका पता किसे था ! मेरे सोने के पहले कुसुम कुछ देर तक मेरे पाँव सहलाती रही। मैं मुन्ना की शादी के विषय में सोच रही थी। मुन्ना के लिए एक बड़ी ही अच्छी लड़की देखी है...।"

"लड़की ?"

"हाँ, उसी लड़की के बारे में बताने के लिए ही तुम्हें बुलाया है। वह लड़की बड़ी ही सुशील है, बेटा। देखने में जैसी है वैसी ही गुणवती। वैसा गीत गाते मैंने किसी को नहीं देखा है। वैसे घर की है जहाँ हम लोगों का संबंध हो सकता है। लेकिन मुन्ना के साथ मेरी बड़ी मुश्किल है। वह लड़की देखना ही नहीं चाहता है। राजी ही नहीं हो रहा है। अगर तुम, बेटा, उसे

राज़ी कर सको...तुम उसके पुराने दोस्त हो। किसी तरह उसे राज़ी नहीं कर सकते हो?"

क्या कहूँ, समझ में नहीं आया। तब मैं लोकनाथ की शादी के लिए उतना उत्सुक नहीं था जितना कि उसकी व्यक्तिगत बातों को लेकर था। जो लोकनाथ उतनी बड़ी लिमिटेड कंपनी का डाइरेक्टर था, उसने किस तरह कंपनी को बरबाद कर दिया, उसी के लिए तब मुझ में अधिक कौतूहल था।

मैंने पूछा, "लोकनाथ कौन-सी किताब चौरंगी से खरीदकर लाया था?"

वसुमती देवी बोली, "कोई अँगरेज़ी की किताब थी।"

"अँगरेज़ी की कौन-सी किताब थी?"

वसुमती देवी ने उस ज़माने में, पति के मृत्यु के बाद, कुछ दिनों तक खुद ही कंपनी का संचालन किया था। घर पर मेमसाहब रखकर अँगरेज़ी लिखना-पढ़ना सीखा था—यह सब हमें मालूम था।

वह बोलीं, "लाल रंग की जिल्द है, साधारण साइज़ की। नाम याद नहीं आ रहा है। उसी किताब को पढ़ने के बाद से ही लोकनाथ का दिमाग गड़बड़ा गया। लाइब्रेरी-रूम के दरवाज़े को तोड़कर जब कमरे के भीतर घुसी तो एक भयंकर ही कांड देखा।"

सचमुच वह एक भयावह कांड ही था। तमाम कमरे में काँच के टुकड़े बिखरे पड़े थे। दीवार की बड़ी-बड़ी तसवीरों को फ़र्श पर पटक-पटककर चूर कर दिया था। सभी बड़ी-बड़ी तसवीरें थीं। किसी में राजेंद्रप्रसाद थे, किसी में स्वामी विवेकानंद, किसी में सर पी० सी० राय, किसी में नेताजी, किसी में मोतीलाल नेहरू, किसी में महात्मा गांधी। कार्तिकराय ने देश-विदेश के सभी महापुरुषों की तसवीरें खिंचवाकर क़ीमती फ्रेमों में मढ़वाकर अपने लाइब्रेरी-रूम में टँगवाकर रखी थीं। सभी के फ्रेम सुनहले थे। एक-एक फ्रेम मढ़वाने में ही उस ज़माने में चालीस-पचास रुपये खर्च हो गये थे।

सरकार बाबू तब थर-थर काँप रहा था। वह भैयाजी का चेहरा देखकर काँप रहा था। सचमुच तब लोकनाथ का चेहरा ही कुछ और हो

गया था। वह भी तब ज़ोरों से कांप रहा था।

वसुमती देवी बोली, "मुन्ना, मुन्ना, अरे मुन्ना, इस तरह क्यों कर रहा है? तुझे क्या हुआ?"

लोकनाथ के हाथ में तब लोहे की एक बड़ी-सी सलाख थी। उस सलाख से वह तसवीरों पर अनवरत चोट किये जा रहा था। जैसे तसवीरें जीवित सांप हों। जैसे अच्छी तरह ज़ोर-ज़ोर से उन्हें नहीं मारेगा तो तसवीरें डस लेंगी।

वसुमती देवी पुनः चिल्ला पड़ीं, "मुन्ना, यह सब तू क्या कर रहा है? इन तसवीरों को क्यों तोड़ रहा है?"

लोकनाथ बोला, "ज़रूर तोड़ डालूंगा। सब के सब झूठे और पाखंडी हैं, सब-के-सब शैतान हैं। तुम लोग व्यर्थ ही इतने दिनों तक इन शैतानों और पाखंडियों को दीवार पर टांगे रहीं!"

वसुमती देवी बोली, "लेकिन तोड़ने से क्या होगा? उन्होंने क्या किया है?"

"शैतान—सब-के-सब शैतान हैं। सभी शैतान हैं, अमेरिका का प्रेसिडेंट ट्रूमैन शैतान है, जर्मनी का हिटलर शैतान है, चीन का च्यांग-काईशेक शैतान है। इंडिया का महात्मा गांधी शैतान है। दुनिया का हर आदमी शैतान है...।"

वसुमती देवी अब स्वयं को रोक नहीं पायीं। सीधे जाकर लोकनाथ का हाथ कसकर पकड़ा।

"अनाप-शनाप क्या-क्या बकता है? आधी रात में तेरा दिमाग बिगड़ गया है क्या?"

"हां, मेरा दिमाग ही बिगड़ गया है, नानी अम्मा! और तुम लोगों का दिमाग ठीक है, सिर्फ़ मेरा ही दिमाग गड़बड़ा गया है। तुम लोगों में से किसी के पास दिमाग नहीं है, इसी से गड़बड़ाया भी नहीं है। दिमाग रहता तो गड़बड़ाता। हिरोशिमा में जो कांड हुआ, किसी ने इसका विरोध क्यों नहीं किया? करोड़ों आदमियों ने सब-कुछ चुपचाप बरदाश्त कर लिया...!"

"मुन्ना, ओ मुन्ना, यह सब तू क्या बक रहा है?"

लोकनाथ और ज़ोर से चिल्ला पड़ा, "बक रहा हूँ तो ठीक कर रहा हूँ। तुम्हारे गांधीजी ने तो कोई विरोध नहीं किया। उस दिन तुम्हारे नेहरूजी ने कोई आपत्ति नहीं की। तुम्हारे स्वामी विवेकानंद, ईसामसीह, बुद्धदेव, रामकृष्ण परमहंसदेव जैसे लोग बहुत उपदेश दे गये हैं, बहुत तरह की शिक्षा दे गये हैं। तुम लोगों ने मुझे वह सब सिखाने के लिए कितना ही रुपया खर्च किया है, लेकिन वह तो गोबर में घी डालना जैसा हो गया, नानी अम्मा!"

वसुमती देवी बोलीं, "मैं तेरी बातों का एक भी अक्षर नहीं समझ पा रही हूँ, मुन्ना! तू उस घर में सोयेगा। चल, पागलपन मत कर, बेटा! मेरी बात मान, चल आ!"

और वसुमती देवी लोकनाथ का हाथ खींचने लगीं।

लोकनाथ की जैसे संज्ञा लौट आयी हो। अचानक उसके हृदय को भेदकर रुलाई फूट पड़ी। वह नानी अम्मा के दोनों हाथों को पकड़कर बोला, "नानी अम्मा, आज मेरे कारण फैक्टरी के दो बेगुनाह आदमियों का क़त्ल हो गया। मगर सिर्फ मेरे कारण ही क्या, मेरी ही तरह के एक और आदमी के कारण एक देश के लाखों बेगुनाह आदमियों की हत्या की गयी। इन दो के बीच कोई अंतर नहीं है। तुमने वह किताब पढ़ी नहीं है। आदमी आदमी का किस हद तक सर्वनाश कर सकता है, इसका तुम्हें एक बार भी पता नहीं चला, नानी अम्मा। पढ़ने पर तुम भी मेरी ही तरह पागल हो जातीं, नानी अम्मा! मेरी तरह तुम इन तसवीरों को तोड़ डालतीं। उन लोगों में से किसी की भी तसवीर कमरे में टाँगकर रखना उचित नहीं है, नानी अम्मा! वे सब के सब झूठे हैं वे सब के सब शैतान हैं, मुझे इतने दिनों से वे लोग केवल झूठी बातें ही सिखाते आ रहे हैं...।"

तब तक नानी अम्मा मुन्ना को उसके कमरे में ले जाकर बिछावन पर सुला चुकी थीं।

गिरधारी को डॉक्टर बुलाने को कहा। लेकिन डॉक्टर के आने के पहले तक लोकनाथ भीषण यातना का बोध करता रहा।

"नानी अम्मा, लोगों पर बम बरसाकर हिरोशिमा को चूर-चूर कर डाला और तुम लोगों ने चूँ तक नहीं किया। तुम्हारे विवेकानंद ने कुछ

नहीं कहा, तुम्हारे ईसामसीह, महात्मा गांधी—सभी खामोश रहे और तुम कहती हो कि मैं उन लोगों की तसवीरों को न तोड़ूं ?"

डॉक्टर आया। लोकनाथ की जाँच की।

याद है, उसके बाद कोई इंजेक्शन देते ही लोकनाथ कुछ ही मिनटों में नींद में खो गया। फिर उस बीमारी से जब उसे छुटकारा मिला, लोकनाथ तब से एक अलग ही आदमी हो गया। उसका व्यक्तित्व ही बदल गया।

अच्छा होने पर नानी अम्मा को देखकर वह बोला, "मैं दफ्तर बंद कर दूंगा, नानी अम्मा!"

"क्यों ? दफ्तर में क्या हुआ है ? लेबर-ट्रबुल हुआ है ? केदार सरकार को एक बार मेरे पास बुला लाना, मैं सब ठीक कर दूँगी।"

लोकनाथ बोला, "नहीं नानी अम्मा, केदार सरकार को लेबर-लीडर मानकर हमने उसे काफ़ी रुपये दिये हैं, अब देना नहीं है।"

"क्यों ? देगा क्यों नहीं ?"

"क्यों दूं ? हिरोशिमा में उन लोगों ने लाखों बेगुनाह आदमियों को जब इतनी निर्ममता से हत्या कर डाली तो केदार सरकार को इतना रुपया देने से लाभ ही क्या है ?"

वसुमती देवी बोली, "हिरोशिमा से केदार सरकार का क्या संबंध है ?"

"संबंध है, नानी अम्मा! केदार सरकार ने सिर्फ दो आदमियों की हत्या की है, मगर दुनिया में जितने शैतान है सभी ने हमारे खिलाफ षड्यंत्र किया है!"

वसुमती देवी बोली, "तेरा दिमाग़ वास्तव में गड़बड़ा गया है, मुन्ना! तू चुपचाप रहा कर। मैं ऑफ़िस बंद नहीं करूँगी।"

"मगर मैं तो बंद कर दूंगा, नानी अम्मा! मैं कंपनी का मैनेजिंग डाइरेक्टर हूँ। अपने तमाम शेयर उन्हें बिना पैसे लिये दे दूंगा।"

वसुमती देवी को ऊब का अहसास हुआ।

वह बोलीं, "तुझे इतना खर्च करके लिखाना-पढ़ाना ही मुश्किल में डाल गया! कहाँ हिरोशिमा, किस दूर देश में अणुबम का विस्फोट हुआ

और तू हिन्दुस्तान में बैठा दिमाग़ खराब कर रहा है ?"

"नानी अम्मा, केदार सरकार ने जिन आदमियों की हत्या की वे क्योंकि गरीब थे इसलिए तुम उनके बारे में नहीं सोचती हो और उसी तरह जापानी रहने के नाते हिरोशिमा के लोग भी आदमी नहीं हैं ?"

"मैंने क्या ऐसा कहा है ?"

"जरूर ही कहा है। हम लोगों के इस कलकत्ता में हमारे-तुम्हारे सिर पर बम गिरता तब क्या इस ओर तुम्हारा ध्यान आकर्षित होता, नानी अम्मा ?"

वसुमती देवी बोली, "तू अपना शेयर दे देगा तो क्या वे मरे हुए आदमी जिन्दा हो जायेंगे ?"

"तुम समझ नहीं रही हो, नानी अम्मा! आज भले ही हिरोशिमा पर अणुबम बरसाया गया है, कल अगर तुम्हारे कलकत्ता पर गिरे तो ?"

"ऑफ़िस बंद करने से ही कलकत्ता पर बम गिरना बंद हो जायेगा ?"

लोकनाथ ने कहा, "जानती हो नानी अम्मा, तुम जो दलील पेश कर रही हो, वही दलील वे लोग भी पेश करते है। वे भी कहते हैं—चाहे दूसरे आदमी मर जायँ, हम लोग तो जिन्दा रहेंगे। जापान के भी तमाम आदमी मारे नही गये हैं, बहुत-से आदमी जिन्दा है। वे खाते हैं, पीते हैं, सोते हैं, संतान पैदा करते है और यह भुला बैठे है कि हिरोशिमा में बम गिरने के कारण कई लाख आदमी स्वाहा हो गये थे। लेकिन सभी अगर यही करें तब दुनिया के इन निरीह, निर्दोष और निरपराध लोगों को कौन जीवित रखेगा...?"

"तो तेरे अलावा क्या कोई और जिन्दा रखने वाला नहीं है ?"

"और है ही कौन, नानी अम्मा ?"

"क्यो, अमेरिका का प्रेसिडेंट, रूस का प्रेसिडेंट, चीन का प्रेसिडेंट, हिन्दुस्तान का प्रेसिडेंट—कितने बड़े-बड़े आदमी मौजूद हैं। उन्हें इन बातों को सोचने दे। तू यह सब सोचकर दिमाग खराब क्यों करता है ? तू कौन है ? इतनी बड़ी दुनिया मे तेरा अस्तित्व ही कितना बड़ा है ?"

"नानी अम्मा, तुम मुझे छोड़ दो। मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ, मुझे मुक्त कर दो। सोच लो कि मैं पैदा हुआ ही नहीं। या सोच लो कि मैं जन्मते

मर गया हूँ चाहे डिपथेरिया से या हैजे से या कि टॉयफ़ायड से। सोच लो कि तुम्हारा कोई नाती नही है, तुम्हारे कोई नहीं है...।"

वसुमती देवी ने कहा, "फिर तू क्या यही कहना चाहता है कि मैं इस बुढ़ापे में फिर से दफ़्तर मे जाकर बैठा करूँ?"

"नहीं। तुम्हें दफ़्तर जाने को कौन कहता है?"

"फिर इतने आदमी क्या बेकार हो जायें?"

"नही, बेकार क्यों होंगे? इतने दिनों तक वे कर्मचारी थे, अब वे मालिक हो जायेंगे। अपना इक्यावन प्रतिशत शेयर उनके बीच बाँट दूँगा।"

"यह क्या? क्या कह रहा है तू?"

वसुमती देवी की समझ मे वह बात नही आयी। वह बोलीं, "इतने दिनों के व्यवसाय को हम लोग छोड़ देंगे?"

लोकनाथ ने कहा, "हाँ नानी अम्मा, इतना रुपया लेकर तुम क्या करोगी? हम लोगों के पास काफ़ी पैसा है।"

वसुमती देवी को और अधिक ऊब का अहसास हुआ।

वह बोलीं, "तू ऊल-जलूल क्यों बकता है?"

"हाँ नानी अम्मा, मैं जो भी कह रहा हूँ, ठीक ही कह रहा हूँ। मैं अब इस व्यवसाय का लाभांश नहीं लूँगा।"

इतना कहकर लोकनाथ घर से बाहर निकल पड़ा।

दरअसल लोकनाथ के मानसिक जगत् में कहाँ गड़बड़ हुई थी, इसे वसुमती देवी जिस तरह नही जानती थीं उसी तरह बाहर के भी किसी आदमी को इसका पता नही था। साधारण मनुष्यों और असाधारण मनुष्यों में यही अन्तर होता है। साधारण मनुष्य सर्वदा तमाम घटनाओं या दुर्घटनाओं को अपनी-अपनी सुविधा के लिए साधारण आँखों से देखते है। उसमे उन्हें शान्ति प्राप्त होती है, इससे उनका खाना पचता है। लेकिन जो असाधारण होते हैं वे प्रत्येक घटना की गहराई तक जाकर उस पर सोचना चाहते है। वे अपने चारों ओर की दुनिया को अपनी दुनिया मानकर उसकी जिम्मेदारी के भोक्ता होते है। और भोक्ता बनकर दुर्भाग्यपूर्ण जीवन जीते हैं। हम लोगों का मित्र होकर भी लोकनाथ ठीक-ठीक हम लोगों का मित्र

नहीं था। यही वजह है कि इतने लोगों के रहने के बावजूद लोकनाथ के बारे में ही मैं यह कहानी लिखने बैठा हूँ।

उस दिन लोकनाथ की नानी अम्मा वसुमती देवी ने सब कुछ बताकर भी जिस घटना के बारे में नहीं बताया उस घटना के बारे में यहाँ कह रहा हूँ।

आदमी क्या सिर्फ रुपये-पैसे और प्रतिष्ठा से सुखी होता है ?

कोई-कोई ही क्यों, संभवतः ज्यादातर आदमी सुखी होते है। परन्तु सिर्फ लोकनाथ ही ऐसा था जो सुखी नही हुआ। बचपन में वह चाहे जैसा भी रहा हो, लेकिन बालिग होते ही उसने देखा कि उसका व्यवसाय असत्य की भित्ति पर खड़ा है।

शुरू में जब लोकनाथ कम्पनी का मैनेजिंग डाइरेक्टर हुआ, उसकी आँखें उसी दिन खुल गयी।

आंटो इंजीनियरिंग कम्पनी की पूरी फैक्टरी देखने के बाद जब वह अपने चेम्बर में आकर बैठा, तभी कहा जा सकता है कि उसमें ज्ञान का आविर्भाव हुआ।

केदार सरकार ने एक-एक कर हिसाब के सभी खाते-बही दिखाकर कहा, "अब इस खाते को देखिये, सर ! यही असली खाता है।"

छोटा पतला-सा खाता। छोटे-छोटे अक्षर।

लोकनाथ ने पूछा, "यह किस चीज का हिसाब है ?"

'यह सर, मोस्ट कॉन्फिडेनशियल बुक है। इसी में हम लोगों का दो नम्बर का एकाउंट लिखा रहता है। आप जो इन लड़कों को देख रहे हैं उनमें से एक का नाम चौधरी है और दूसरे का हवलदार। इन्हीं दोनों को इसका पता रहता है। वे ही इस खाते की पोस्टिंग करते हैं। उनके अतिरिक्त इसका पता किसी को भी नहीं है।"

तब भी लोकनाथ की समझ में यह बात नहीं आयी। उसने पूछा, "किस चीज की पोस्टिंग ? सब कुछ खुलासा बताइये।"

अब की केदार सरकार ने खुलासा ही बताया, "ब्लैक की पोस्टिंग।"

"इसके मायने ?"

"मायने यह हैं कि सरकार से हमें लोहे का जो कोटा मिलता है, उसमें से सब काम में नहीं लाया जाता है। उसे बाहर ज्यादा क़ीमत पर ब्लैक में बेच देते हैं।"

चौधरी और हवलदार दोनों तब भी चुपचाप खड़े होकर सब-कुछ सुन रहे थे।

लोकनाथ ने कहा, "हम अपने काम में लायें, सरकार इसीलिए हमें लोहा देती है। फिर उसे ब्लैक में क्यों बेच देते है ?"

"बेचने की वजह यह है कि हमें ज्यादा फ़ायदा होता है। उससे कम्पनी के मालिक की आमदनी बढ़ती है और टैक्स की भी बचत हो जाती है...।"

"टैक्स की बचत हो जाती है, इसका मतलब ?"

केदार सरकार ने दाँत निपोर दिये।

"टैक्स का मतलब है इनकम-टैक्स, सर ! इसी इनकम-टैक्स के काफ़ी झमेले है। इनकम-टैक्स पर वेल्थ-टैक्स है और उस पर डेथ-टैक्स, जिसका नाम है एस्टेट-ड्यूटी। एक ओर टैक्स का झमेला है, फिर उस टैक्स का हिसाब रखने के लिए स्टाफ़ रखना पड़ता है।"

लोकनाथ कुछ देर तक चुप्पी ओढ़े रहा।

केदार सरकार ने उसी मौक़े पर कहा, "हो सकता है, सर, कि आप सोच रहे हों कि इसका बेनिफिट सिर्फ़ कम्पनी के मालिक को ही मिलता है। नहीं, ऐसी बात नहीं है सर, मिसेज राय इस मामले में बहुत ही सिम्पैथेटिक हैं। उनकी तरह की काइन्ड-हर्टेड लेडी नहीं मिला करती हैं। चौधरी और हालदार को वह इसी काम के दो-दो सौ रुपये एक्स्ट्रा दिया करती हैं।"

"ऐसी बात है !"

लोकनाथ ने गरदन घुमाकर चौधरी और हालदार की ओर देखा। दोनों के दोनो लबोतरे चेहरे के हैं ! असहाय की तरह उनकी ओर ताक रहे हैं। देखने से लगा, दोनों लड़के बड़े अभाव में जी रहे हैं। लोकनाथ के मन में आया कि उन दोनों से वह कुछ बातचीत करे, लेकिन केदार सरकार ने कहा, "वे लोग बहुत ओनेस्ट हैं, सर ! उन लोगों को काट भी डाला जाये तो वे असली बात का भेद किसी को भी नहीं बतायेंगे।"

लोकनाथ ने फिर से उन दोनों लड़कों की ओर देखा। उसके बाद उसने कहा, "ऐसी बात है!"

"हाँ सर, इस तरह के अच्छे लड़के इस युग में नहीं मिलते हैं। वेरी गुड बॉयज़!"

लोकनाथ अब वहाँ ज्यादा देर तक नहीं बैठा। और बैठना उसे अच्छा नहीं लगा। वह जल्दी से उठकर खड़ा हो गया।

केदार सरकार का काम तब तक समाप्त नहीं हुआ था।

उसने कहा, "सर, बैलेंस-शीट देखियेगा?"

"नहीं; आज नहीं।"

और वह जल्दी-जल्दी दफ़्तर से निकलकर बाहर खड़ी गाड़ी में जा बैठा। उसके बाद इंजिन चालू हुआ और वह घर की ओर चल दिया।

लेकिन उस दिन अकस्मात् वह घटना घटित हुई। वही भयंकर दुर्घटना! तीसरे पहर पाँच बजे तक किसी को पता नहीं था। शाम छः बजे तक किसी को पता नहीं चला।

चौधरी और हालदार जिस तरह हर रोज़ काफ़ी रात तक दफ़्तर में काम किया करते थे, उसी तरह काम करते रहे। उसके बाद सबेरे की शिफ़्ट में जब सभी फ़ैक्टरी में आये तो देखा, दफ़्तर के भीतर के दो किरानी—चौधरी और हालदार अपने कमरे में मरे हुए पड़े हैं।

झाड़ू देने वाला ज्योंही अन्दर गया, लहू से लथपथ चेहरे देखकर चिहुँक उठा। उसकी चीख से आस-पास के लोग दौड़े-दौड़े आये और कमरे के अन्दर का दृश्य देखकर हतप्रभ हो गये। किसने यह कांड किया! क्यों ऐसा कांड किया!

तत्काल मालिक की बुलाहट हुई। कुल मिलाकर तब लोकनाथ ने कंपनी के मैनेजिंग डाइरेक्टर के पद की ज़िम्मेदारी ली थी। खबर मिलते ही वह दौड़ा-दौड़ा आया। तब तक मौहल्ले के थाने से पुलिस पहुँच चुकी थी। वह जगह भीड़ से खचाखच भर गयी। सारी भीड़ को हटाकर जब वह अंदर गया और वहाँ जाने पर उसने जो कुछ देखा उसकी वजह

उसके मुँह से एक शब्द तक न निकला।

कुछ आदमी उसके सामने आकर खड़े हुए। वे कुछ कहना चाहते थे। केदार सरकार जब उसके सामने आया तो लोकनाथ ने उसके चेहरे को गौर से देखा।

केदार सरकार ने अपने-आप कहा, "क्या से क्या हो गया, सर! कुछ कहना मुश्किल है। हालाँकि आप तो जानते ही है सर, कि वे दोनों हमारी कंपनी के कितने बड़े ऐसेट थे!"

लोकनाथ ने कुछ भी उत्तर नही दिया। जिस तरह आया था उसी तरह सीधे मुँह घुमाकर बाहर निकला और अपनी गाड़ी में जाकर बैठ गया।

दूर से सरजू लोकनाथ को देखकर उसकी ओर बढ़ने जा रही थी, लेकिन उसके पहले ही लोकनाथ गाड़ी स्टार्ट करके बाहर निकल आया।

उस दिन गाड़ी लेकर लोकनाथ कहाँ लापता हो गया, किसी को भी उसका पता नहीं चला। वह घटना सवेरे घटी थी, लेकिन कहाँ उसने खाना खाया, कहाँ उसने दिन गुज़ारा, इसके बारे में किसी को कुछ भी मालूम नही हुआ।

दोपहर काटे नहीं कट रही थी। वसुमती देवी अपने कमरे मे छटपटा रही थी। उनकी फ़ैक्टरी मे इतनी बड़ी एक घटना घटित हो गयी, फिर भी किसी का पता नही है---न तो लोकनाथ का और न केदार सरकार का ही।

बार-बार फ़ैक्टरी में टेलिफोन करने के बावजूद उन्हे किसी का कोई पता नहीं चला। तब वहाँ पुलिस मौजूद थी और हत्या का आतंक फैला हुआ था। उनकी बात का कौन ठीक तरह से जवाब दे!

परंतु लोकनाथ नहीं, बल्कि केदार सरकार एकाएक घर पर आकर उपस्थित हुआ।

केदार सरकार तब हाँफ रहा था।

उसने कहा, "सब कुछ रफ़ा-दफ़ा करने में थोड़ी देर हो गयी, मिसेज़ राय!"

वसुमती देवी उसकी बात का तात्पर्य नहीं समझ सकी।

उन्होंने पूछा, "रफ़ा-दफ़ा क्या हुआ?"

केदार सरकार उस वक्त भी हाँफ रहा था। "लगभग दस हजार रुपये खर्च हो गये।"

"पुलिस क्या बोली ?"

"पुलिस और क्या कहेगी, मैडम ? दुनिया में आजकल तो हर कोई रुपये का गुलाम है। इन सब मामलों में कुछ-न-कुछ हरजाना देना ही पड़ता है।"

वसुमती देवी बोलीं, "खैर, उसके लिए कोई बात नहीं। वह बस आपके मत्थे छोड़कर मैं निश्चिंत हूँ।"

केदार सरकार बोला, "लेकिन एक बात, मिसेज राय !"

"क्या, कहिये ?"

"मिस्टर राय को यह सब मत बताइयेगा। अभी वह नौजवान हैं, सेंटिमेंट से काम लेते हैं।"

वसुमती देवी बोलीं, "व्यवसाय करने में इन सेंटिमेंट से कहीं काम चलता है ?"

अचानक उन लोगों को लोकनाथ दरवाज़े के सामने खड़ा दीख पड़ा।

उसके देखते ही केदार सरकार उठकर खड़ा हो गया। आहिस्ता से चुपचाप कमरे से निकलकर ओझल हो गया। जैसे उसकी जान में जान आयी।

वसुमती देवी बोली, "मुन्ना, तू कब आया ?"

लोकनाथ ने कहा, "नानी अम्मा, दो व्यक्तियों की हत्या कराने का तुमने पुलिस को कितना हरजाना दिया ?"

"इसका मतलब ?"

"इसका मतलब क्या तुम नहीं जानती हो? मैंने दिल्ली की पुलिस को सूचना दी थी कि हमारी कंपनी लोहे का कोटा चोरबाज़ार में बेच देती है। और इसीलिए उन लोगों के यहाँ आने के पहले ही मिस्टर सरकार ने उन दोनों की हत्या का षड्यंत्र रचा। लेकिन अभी मैं पुलिस को अगर सूचित कर दूँ तो तुम्हारी कंपनी कहाँ रहेगी ?"

"मुन्ना !"

"अब मुझे मुन्ना कहकर मत पुकारा करो, नानी अम्मा ! मैं

तुम्हारा कोई नहीं होता हूँ। मैं अब तुम लोगों की इस कंपनी का भी कोई नहीं हूँ। आज से मैं इस घर मे कोई नही हूँ। मैं चला।"

"मुन्ना...ओ मुन्ना...!"

लोकनाथ अब वहाँ और खड़ा नही रहा। हनहनाता हुआ सीढ़ियाँ उतरकर एकबारगी वह सीधे अपनी लाइब्रेरी के कमरे में घुस गया और अन्दर से सिटकनी बंद कर दी।

और उसी रात वह भयंकर दुर्घटना घटी।

मैंने पूछा, "उसके बाद ?"

वसुमती देवी बोली, "उसके बाद तो तुम सब जानते ही हो, बेटा। वही से गड़बड़ शुरू हुई। मारा-मारा फिरने लगा। जादूगोपाल और निमाई-शा के यहाँ आना-जाना शुरू हुआ। जितने भी निचले तबके के आदमी हैं उनसे हेल-मेल। तभी से दाढ़ी रखना शुरू किया। अब वह दाढी नहीं बनाता है, मैला कुरता, वही ढीला-ढाला पाजामा और टूटा हुआ चप्पल...!"

"और वह किताब ?"

"उस किताब को मैंने उठाकर रख दिया था, बेटा! लाल रग की उसकी जिल्द है।"

इतना कहकर चाबी से अलमारी खोलकर लाल रग की एक किताब ले आयीं और मेरे हाथ मे दे दी। उस किताब को मैंने उलट-पलटकर देखा। जिन लोगों ने हिरोशिमा पर बम गिराया था उन्ही की कहानी थी।

उन्ही के द्वारा लिखी कहानी थी: कैसे उन्होंने बम बरसाये। उसी मेजर चार्ल्स डब्लू० स्विनी ने। स्विनी को पता नही था कि उसे क्या करना है। वह इतना ही जानता था कि उसे कहाँ जाकर बम फेंक आना है। हालांकि कहाँ बम फेंक आयेगा, यह भी जानने का नियम नहीं है। और वह बम किस तरह का बम था, इसकी भी मेजर स्विनी को सूचना नहीं दी गयी थी।

तब सुबह के छः बजे थे।

तमाम हिरोशिमा शहर तब अर्द्ध-निद्रा की बाँहों में लिपटा था। नींद तब बहुतों को शांति के हाथों से थपकियाँ दे रही थी। थकावट तब बहुतों को नये जन्म से साक्षात्कार करा रही थी। कितने ही आदमी उस दिन आशा के समुद्र में नौका लेकर बिछावन पर सोने गये थे। उन्हें आशा थी कि दूसरे दिन सवेरे वे और भी बड़े सपने और अधिक विश्वास लेकर, और भी अधिक खुशियों के तकाज़े के साथ जगेंगे। वे लोग भी आदमी ही थे, वे भी आराम करने के ख़याल से अपने-अपने घोंसले में लौटकर आये थे।

और ठीक उसी वक्त तीन व्यक्ति तीन अदद हवाई जहाज लिये हिरोशिमा के माथे के ऊपर एक क्षण के लिए ठिठक कर खड़े हो गये।

मेजर चार्ल्स स्विनी एक कुशल पायलेट था। कहाँ अमेरिका के किसी स्थान का एक व्यक्ति और कहाँ किसी दूसरे देश के सिर पर उड़ता हुआ आया! उस देश की मिट्टी पर छोटे-छोटे सपने और बड़े-बड़े मकान नींद की बाँहों में ऊँघ रहे थे। मेजर स्विनी ने एक बार उनकी ओर आँखें फैलायी।

तब अँधेरा भली-भाँति दूर भी नहीं हुआ था। तब कुहरे की नक़ाब से शहर का चेहरा ढँका था। देखो मत, कोई हमारी ओर मत देखो। हम शहीद होने जा रहे हैं। हम यह साबित कर देंगे कि अपने ईसामसीह को तुमने जिस तरह सूली पर चढ़ाकर मार डाला था, आज फिर से ठीक उसी तरह दूसरी बार उनकी हत्या कर डाली। तुम लोगों ने अपने स्कूल-कॉलेजों में जिसे पढ़ा है, उस पुस्तक के शब्दों को आज अपने हाथों से पोंछ डाला। तुम्हीं लोगों ने कहा। जिंदगी-विंदगी बेकार की चीज है। तुम लोग हमारी प्रसन्नता-अप्रसन्नता की खुराक के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हो। खुशी होगी तो हम लोग तुम्हें ज़िंदा रखेंगे और अगर फिर खुशी होगी तो तुम्हें जिब्रह भी कर सकते हैं।

पाप ?

ये सब बातें हमने बाइबिल में छपवायी है, कुरान में लिखा है, गीता में

श्रीकृष्ण के मुंह से कहलाया है। 'पाप' शब्द का मुंह से उच्चारण मत करो। पाप-पुण्य', 'न्याय-अन्याय'—ये शब्द हमारे द्वारा गढ़े गये हैं, हमीं लोगों ने अपने प्रयोजन के निमित्त इन शब्दों को रद्द कर दिया है। आज तुम लोग हम लोगों के निमित्त एटमबम की चोट खाकर प्राण त्यागो। एटमबम से मरने पर किस तरह दीखता है, इसकी हम आज परीक्षा करना चाहते हैं। बहुत दिनों के बाद जब इस हिरोशिमा का इतिहास लिखा जायेगा तब लिखा जायेगा कि तुम लोग शहीद हो। लिखा जायेगा कि शांति के लिए तुमने प्राण दिये थे। शांति के लिए जिस तरह वीयतनाम मे लोगों ने मृत्यु का वरण किया, शांति के लिए जिस तरह बांगला देश के आदमी प्राणों को न्योछावर कर रहे हैं, इतिहास में लिखा रहेगा कि एक दिन हिरोशिमा में तुमने भी उसी तरह प्राणों की बलि दी थी।

ढाई हज़ार वर्ष पूर्व कपिलवस्तु नामक नगर से एक दूसरे युवक ने ठीक इसी तरह रात के अँधेरे की ओट मे छिपकर राजप्रासाद से यात्रा प्रारंभ की थी। वह यात्रा थी प्राणो की खोज की यात्रा। प्राणों की पद-यात्रा। उसका उद्देश्य था, मनुष्य को अमृत पथयात्री के रूप मे तैयार करना। उद्देश्य था, मनुष्य को दुःख-शोक, कष्ट-बुभुक्षा से मुक्त करना। और आज इतने दिनों के बाद अमेरिका से उड़कर आया हुआ एक दूसरा युवक मेजर चार्ल्स डब्लू० स्विनी का उद्देश्य है, मनुष्य की मृत्यु के पथ का निर्देशन। मनुष्य को यह शिक्षा देना कि इतने दिनों तक तुमने जो सीखा है, वह सब गलत है। जो कुछ जाना-सुना है, सब गलत है। ईसामसीह को हमने सूली पर चढ़ाकर जो हत्या की, सुकरात को जो जहर पिलाकर मार डाला, गांधीजी की जो बुलेट से हत्या की, उनसे उन्हें यातना का बोध नहीं हुआ था। बल्कि उनके कारण वे युगों-युगों तक करोड़ों लोगों की निगाह मे शहीद हो गये हैं। यातना एक क्षण ही होती है और ख्याति चिरकालिक होती है। लेकिन नहीं, ऐसी बात नहीं है। हमने पहले जो ग़लतियाँ की हैं अब हम उन ग़लतियों को नहीं दुहरायेंगे। हम तुम्हें शहीद भी नहीं होने देंगे। तुम लोग एड़ी से चोटी का पसीना एक कर खेत-खलिहान में जो मेहनत करते हो, उससे हम लोगों की नैश-निद्रा का

बड़ा ही घनिष्ठ संबंध है। हमने तुम्हें स्वनिर्मित उपनिवेश में व्यस्त करके रखा है ताकि तुम हमारे ऐश-आराम का खयाल रखा करो। तुम लोग नियम का पालन करके काम करते हो तो हमारी मोटरों के पहिए ठीक से चलते हैं। तुम लोग पानी, कीचड़ बारिश मे भीग कर खेती-बारी करते हो तो हमारे राजकोष में विदेशी मुद्राएँ आती है। बरसात के दिनों सारी रात जगकर जब तुम मेढ़कों को भगाते रहते हो तो हम निश्चितता के साथ सो पाते हैं।

बहुत पहले कपिलवस्तु के एक राजपुत्र ने जो कहा था, आज वह बात किसी को भी याद नही है। राज्य, राजत्व और राजकोष त्यागना तो दूर की बात है, किस तरह नये-नये राज्य, राजत्व और राजस्व प्राप्त हो सके उसीका कला-कौशल आयातित करने मे हम सभी व्यस्त है। हम लोगों को एक हज़ार रुपये मूलवेतन की नौकरी मिल जाती है तो सोचते हैं कि हमने दुनिया जीत ली। उसी एक हज़ार रुपये के मूलधन को हम टेरिलिन-टेरीकॉट, घर-गाड़ी के रूप में बढ़ाते रहते हैं ताकि उसके बारे मे चार हज़ार की राशि की धारणा करायी जा सके। उसी की चेष्टा में हम लोग रात-दिन परेशान रहते हैं, अतः हम लोग क्यों ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स जैसी वित्तवान् फ़ैक्टरी बंद करने जायें ?

उस दिन मिस्टर सरकार आये। लेबर-लीडर केदार सरकार। उन्होने भी बार-बार मना किया। उन्होने भी कहा, "फ़ैक्टरी के शेयर आप उनके बीच क्यों बाँटने जा रहे हैं ?"

लोकनाथ बोला, "प्रायश्चित करने के लिए।"

"किस चीज़ का प्रायश्चित ?"

"हिरोशिमा का प्रायश्चित ! दुनिया मे पहला एटमबम गिराकर लाखों आदमियों को मारने का प्रायश्चित किसी-न-किसी को करना ही होगा, मिस्टर सरकार ! आज तक किसी ने वह प्रायश्चित नही किया। बल्कि और भी हज़ारो हिरोशिमा बनाने की सभी कोशिश में लगे हैं।"

केदार सरकार दुनिया मे बहुत दिनों से लेबर-लीडरी कर रहा है। वह अनेक पागल, अनेक चालाक-चुस्त मालिक देख चुका है, पर उसने

ऐसा पागल आदमी कभी. नहीं देखा है। लेकिन मुंह से उसने यह बात नहीं कही। सब सुनकर खामोशी के साथ चला गया। केदार सरकार समझ गया कि यहाँ से उसका दाना-पानी हमेशा के लिए समाप्त हो गया।

लेकिन केदार सरकार जैसे लोगों के लिए सुविधा की बात यही है कि दुनिया के सभी मालिक लोकनाथ जैसे नहीं हैं। सभी राजा के पुत्र सिद्धार्थ नहीं हुआ करते हैं।

चौरंगी की पकौड़ी की दुकान में इतने दिनों के दौरान भीड़ और भी ज्यादा बढ़ गयी। जादूगोपाल को पकौड़ी के लिए शो-केस बनवाना पड़ा है। ग्राहकों के लिए आराम से बैठने का इन्तजाम करना पड़ा है। एक दिन जादूगोपाल की स्थिति में सुधार आयेगा—इसके बारे मे लोकनाथ पहले ही बता चुका था। आज उसकी बात अक्षरशः सही हुई है।

और वह कौन है जिसकी स्थिति मे सुधार नहीं आया है?

वह जो निमाई-शा है, बेलगछिया के पुल के पूरब की सड़क पर उतरते ही बायें बाजू की दीवार से लगी उसकी दुकान थी। वही दुकान इतनी बड़ी हो जायेगी, इसके बारे मे उस दिन किसने सोचा था? लोकनाथ ने उसे सिर्फ़ पचास रुपये दिये थे। उसके बाद निमाई-शा के भाग्य और हाथ के यश ने उसका साथ दिया।

कलकत्ता की सड़कों पर जो लोग ट्राम-बसों से हमेशा घूमते-फिरते रहते हैं, वे सभी छोटे बाबू की तरह पागल नहीं है। और क्योंकि पागल नहीं हैं इसीलिए हो सकता है कि दुनिया मे आदमियो की एक जमात गाड़ी पर चढ़ती है और दूसरी गाड़ियों के नीचे दबकर मरती रहती है।

आमतौर से कम्पनी बन्द होने पर अखबारों और कर्मचारियों की जमात मे रोना-धोना शुरू हो जाता है। आन्दोलन की शुरुआत होती है। लेकिन शुरू में केदार सरकार ने कुछ भी नहीं होने दिया। उसे मोटी रकम मिली। मोटी रकम अवश्य ही सभी को मिली। शुरू में ढेर-सा पैसा पाकर सभी खुश हो गये।

...लेकिन कुछ लोग ऐसे थे जो खुश नहीं हुए। वह जुलूस लेकर आये और वसुमती देवी के मकान के सामने नारे लगाने लगे। उन्होंने चिल्लाना शुरू किया : 'कम्पनी बन्द करके कर्मचारियों की छँटनी नहीं चलेगी, नहीं चलेगी !'

लोकनाथ उस दिन घर पर ही था। खबर मिलते ही सामने निकल कर आया।

"तुम लोग क्या चाहते हो ?" लोकनाथ ने पूछा।

वसुमती देवी मुन्ना को मना करने जा रही थी। वह बोलीं, "अरे मुन्ना, उन लोगों के सामने मत जा, वे लोग तुझे अपमानित करेंगे।"

खुद मालिक को एकबारगी सामने आते देख कर कुछ लोग सकपका गये। लेकिन सामने जो मुख्य-मुख्य व्यक्ति थे, वे पार्टी के आदमी थे। उन्होंने कहा, "आपने कम्पनी बन्द क्यों कर दी ?"

लोकनाथ ने कहा, "वजह यही है कि मैं अब रुपया कमाना नहीं चाहता हूँ।"

"यह सब आप झूठी बात कह रहे हैं। आप हम लोगों की छँटनी करके नया स्टाफ लेना चाहते हैं और नाम बदलकर नयी कम्पनी तैयार करना चाहते हैं।"

"सभी ऐसा ही करते हैं, लेकिन मैं इस तरह का काम नहीं करूँगा। करूँगा तो आपकी निगाह में बात आयेगी ही।"

"लेकिन असल में आपकी इच्छा-अनिच्छा के कारण ही इतने आदमी भूख से तड़पने जा रहे हैं।"

"यही वजह है कि आप लोगों के यूनियन के सेक्रेटरी ने जिसको भी जितना पैसा देने को कहा, मैंने दे दिया...आप लोग अपने सेक्रेटरी केदार सरकार के पास जाइये।"

"नहीं, अब वह हमारी यूनियन में नहीं हैं। आपको ही इसका जवाब देना पड़ेगा, क्योंकि आप ही इसके मैनेजिंग डाइरेक्टर थे।"

"मैं मैनेजिंग डाइरेक्टर था तो जरूर, मगर अब नहीं हूँ। अब मैं एक साधारण आदमी हूँ। मैं अपने इक्यावन प्रतिशत शेयर आप लोगों के बीच बाँट देना चाहता हूँ...।"

"इस तरह की बात सभी मालिक करते हैं, बुर्जुवा लोग यही बातें किया करते हैं।"

"लेकिन मैंने इस घर में जन्म लेकर ऐसा कौन-सा अपराध किया है कि साधारण आदमी तक नहीं बन सकूं ?"

"आपको कम्पनी का काम चालू रखना पड़ेगा ?"

लोकनाथ बोला, "चालू रखने की ज़िम्मेदारी आप लोगों की है। आप लोग कम्पनी को चालू रखें।"

एकाएक पीछे से ज़ोरों से आवाज आयी, 'ज़ोर-ज़ुल्म नहीं चलेगा, नहीं चलेगा...।"

वसुमती देवी अब तक घर के अन्दर थीं। अब डरकर वह बाहर निकल आयी। पूरे जुलूस के सामने चिल्लाकर कहा, 'तुम लोग चुप रहो। जो कहना है, मुझसे कहो।"

सामने जो मुख्य-मुख्य व्यक्ति थे उनमें से एक ने कहा, "हमारी माँगें आपको पूरी करनी है।"

"लेकिन तुम्हारी माँगें क्या हैं, यह तो मैं पहले जान लूँ। पहले मुझे इसकी सूचना दो, तभी न निर्णय किया जायेगा। तुम्हारी माँगें क्या है?"

मुख्य व्यक्तियो में से एक व्यक्ति कागज़ लेता हुआ आया और उसे वसुमती देवी की ओर बढ़ा दिया। उसे हाथ में लेकर वसुमती देवी बोलीं, "मैं इसे पढ़कर कल सूचित करूँगी। तुम्हें कल तीसरे पहर चार बजे के पहले ही इसका जवाब मिल जायेगा।"

जुलुस के अदमी आहिस्ता-आहिस्ता नारे लगाते हुए चले गये। लेकिन वसुमती देवी ने अब देर न की, उसी दिन बैंजू से सब-एकाउंटेंट केदार सरकार को बुलवा भेजा। केदार सरकार जब लोकनाथ के घर पर आया तब शाम बीत चुकी थी और रात का आगमन हो चुका था। बंद कमरे मे दोनों ने बहुत देर तक बातचीत की। उसके बाद केदार सरकार जब कमरे से बाहर आया तब घड़ी रात के नौ बजा रही थी। उसके बाद जो सब खामोश हुए, तो फिर कहीं गड़बड़ नहीं हुई। न कोई जुलूस ही निकला और न कर्मचारियों ने कोई आन्दोलन ही किया।

मैंने पूछा, "आपने सब-कुछ कैसे तय कर डाला ?"

वसुमती देवी बोलीं, "मैंने लिख दिया कि मेरे जितने भी शेयर हैं, उन्हें मैं वर्करों को दे रही हूँ।"

कुछेक क्षणों तक चुप रहने के बाद उन्होंने फिर कहना शुरू किया, "यह सब बहुत पहले की बातें है, बेटा ! तुम्हें जिस उद्देश्य से बुलाया है अब वही बात कहती हूँ। हो सकता है कि मुन्ना तुम्हारी बात मान ले। अब तुम उसे शादी करने को कहो। मुन्ना की इतनी जायदाद मेरे मरने के बाद तहस-नहस हो जायेगी, बेटा ! यों ही सब कुछ तहस-नहस हो चुका है। उस पर अगर मैं चल बसूँ तो इस मकान के लोहे-लक्कड़ भी बाकी नहीं बचेंगे। शायद इसे भी लोगों में बाँट देगा। उसके पहले ही मैं उसे गृहस्थ बनाना चाहती हूँ।"

"लेकिन लड़की देखने में कैसी है ?"

वसुमती देवी बोली, "मेरी एकमात्र नातिन-बहू मेरे घर आयेगी और तुम क्या यह सोचते हो कि बगैर पसंद किये उसे घर ले आऊँगी ? राय-घर की नातिन-बहू जिस-तिसको बनाकर मैं घर ला सकती हूँ ? मुझे क्या अक्ल नहीं है ?"

उसके बाद उन्हें कोई बात अचानक याद आ गयी। वह बोलीं, "जिस लड़की से मुन्ना आजकल मिला-जुला करता है, उसे तुमने तो देखा ही है, बेटा ! उसे मैं नातिन-बहू बना सकती हूँ ?"

"लोकनाथ किस लड़की से मिला-जुला करता है ? मैंने किसी को भी नहीं देखा है ! लड़की से मिला-जुला करता है ?"

वसुमती देवी आश्चर्यचकित हो गयी। "क्यों, तुमने उस लड़की को नहीं देखा है ?"

मैंने कहा, "कहाँ ? देखने की बात दूर रहे, मेरे सुनने में कुछ भी नहीं आया है। लोकनाथ की चाहे और कुछ बदनामी हो सकती है, लेकिन लड़कियों से मिलने-जुलने की बदनामी उसका घोर-से-घोर दुश्मन भी उस पर मढ़ नहीं सकता है।"

"लेकिन बेटा, मैंने अपनी आँखों से देखा है। शायद बहुत दिनों से तुम्हारी उससे मुलाकात नहीं हुई है।"

मैंने कहा, "हाँ, नहीं हुई है। तब हाँ, लोकनाथ अंततः लड़कियों की

गिरफ्त मे फँसेगा, मैंने इसकी कल्पना तक नही की थी।"

"हाँ बेटा, हम लोग उस जमाने मे जिसकी कल्पना तक नही
सकते थे, दुनिया मे आजकल वही सब घटित हो रहा है। वरना तुम
सकते हो कि मेरा मुन्ना कभी रास्ते का चक्कर नहीं काटा करता
हमेशा गाडी से आता-जाता था, किसी बुरे लड़के से नही मिलता-
था। आज वही लडका पकौड़ी की दुकान में बैठकर पकौड़ी खा
कही किसी की चाय की दुकान मे बैठकर मिट्टी की प्याली मे चाय
है। एक आदमी ने बताया, किसी बाजार के रास्ते के मोड़ पर ई
बैठकर बाल कटवा रहा था। उसकी शकल तो तुमने देखी ही है।
से भरा हुआ चेहरा, टूटा हुआ चप्पल, मैला, ढीला-ढाला कुरता !

मैंने कहा, "ठीक है, नानी अम्मा, मैं उससे मिलकर सब कहूँ
मगर समस्या यही है कि उससे मुलाकात कैसे होगी। वह घर में
रहता है ?

वसुमती देवी बोलीं, "घर में उसका कोई ठिकाना नहीं रहता
बेटा। तुम कहीं बाहर उससे नहीं मिल सकते हो ?"

"बाहर उससे कहाँ मुलाकात होगी ? उस पकौड़ी की दुकान में ?
पैरागन सिनेमा के पीछे ?"

'वह तो जादूगोपाल की दुकान है। वहाँ भी जा सकते हो या
गछिया के पुल के नीचे निमाई-शा नामक एक व्यक्ति की दुकान है,
भी मिल सकते हो। खिदिरपुर के मनसातल्ला लेन में भी एक मे
उसका अड्डा रहता है। सुना है, आजकल एक और नया अड्डा हुआ है

'कहाँ ?"

वसुमती देवी ने कहा, "वराहनगर में।"

"दुकान नही, सुना है एक आदमी का मकान है। वहाँ भी
लड़की है।" वसुमती देवी ने आगे कहा।

"लड़की ?"

वसुमती देवी ने कहा, "यही वजह है कि मुझे डर लगता है, बेटा !
उम्र ही बुरी होती है। इसी उम्र मे बहुत-सी लड़कियाँ पीछा करने लग
है। सारा दिन वह इधर-उधर चक्कर काटा करता है, कब क्या हो जा

कौन कह सकता है ! आजकल इतना खून-खराबा हो रहा है कि उसमें चक्कर काटना क्या अच्छा है, बेटा ? तुम्हीं बताओ । यह भी मेरे भाग्य मे बदा था, मैं क्या करूँ ?"

"वहाँ कब जाता है ?" मैंने पूछा ।

वसुमती देवी बोली, "इसका पता ईश्वर भी नहीं बता सकता है... बेंजू ने घूम-घूमकर इन बातों का पता लगाया है...।"

मैं उठकर खड़ा हुआ और बोला, "ठीक है, जैसे भी हो, मैं उसे खोज ही लूँगा !"

और मैं घर के बाहर चला आया ।

धीरे-धीरे सुबह के साढ़े छः बजे । चारों ओर सूर्य की रोशनी और भी धुँधली हो गयी । गंतव्य तक पहुँचने के लिए चारों तरफ और भी रोशनी होनी चाहिए । देखा जा सके, जिन्हें जिबह करने के लिए जा रहा हूँ उनकी जिबह ठीक से हुई है या नहीं । धरती से कितना ऊँचा उठ गया है मेजर स्विनी ! और आगे बढ़ता जाओ मेजर, और थोड़ा आगे बढ़ो...!

"ओ रोशनीवाले, रोशनीवाले !"

म्युनिसिपैलिटी का एक आदमी कंधे पर सीढ़ी लादे आया और एक गैस-पोस्ट के ऊपर चढ़कर दियासलाई से उसने ज्योंही बत्ती जलायी वह स्थान रोशनी से जगमगाने लगा । और उसी क्षण निकट के एकमंजिले घर की खिड़की से एक लड़की की आवाज आयी, "रोशनीवाले, ओ रोशनीवाले !"

रोशनी वाले को म्युनिसिपैलिटी से कितनी तनख्वाह मिलती है, कौन जाने ! उसके बदन पर मैला-फटा कुरता है, छोटे पनहे की धोती । हर रोज तीसरे पहर सड़क-सड़क पर रोशनी जलाना ही उसका काम है ।

लोकनाथ ऐसे वक्त मे कभी इस ओर नहीं आया । यह मुहल्ला बड़ा ही एकांत रहता है । अमेरिका के एक बेस से सीधे निकल पड़ा है । सुबह ही मेजर स्विनी नाश्ता कर चुका है । उसके बाद कंधे पर झोला लटकाकर आसमान की गलियों मे चक्कर काट रहा है । चारों ओर निस्तब्धता रँग

रही है। उसके माथे पर बहुत-सी ज़िम्मेदारियाँ है। तमाम कलकत्ता का उसे चक्कर काटना है। जहाँ जाने का आदेश मिला है, वहाँ जल्दी ही पहुँचना है। अब देर करने से काम नही होगा। जहाँ जितने खुशहाल आदमी हैं उनकी तलाश करनी है। उनसे पूछो : सुख के अधिकारी न रहने के बावजूद वे किस अधिकार के बल परे सुख से रह रहे है? हमें तो आदेश मिल चुका है—स्टैंडिंग ऑर्डर। दुनिया मे कोई सुख से नही रह सकता है। कम-से-कम हम लोग जब तक हैं तब तक किसी को सुख से जीने का अधिकार नहीं है। तुम्हें बताना पड़ेगा कि तुम किस पार्टी के आदमी हो, डेमोक्रेट हो या रिपब्लिकन, लेबर या कंजरवेटिव ! सिर्फ़ आदमी कहने से तुम्हारी कोई स्वीकृति नहीं है।

उसने कहा था, "मैं ईमानदार आदमी हूँ...।"

उनका कहना था, "यह तो तुम्हारी कोई आइडेंटिटी नहीं हुई। तुम्हारी ही तरह सभी कहेंगे कि वे ईमानदार है...।"

"मगर मैंने कोई अन्याय नही किया है। किसी की कोई हानि नही की है।"

"यह कोई बड़ी बात नही है कि किसी ने कभी दूसरे की हानि नहीं की है, क्योंकि किसी की हानि की जरूरत ही नही पड़ी होगी।"

"लेकिन मैं साधारण आदमी हूँ। यही क्या मेरा सबसे बड़ा परिचय नही है?"

"नही।"

"फिर मैं क्या करूँ?"

"तुम्हें किसी-न-किसी पार्टी मे दाखिल होना पड़ेगा। या तो रिपब्लिकन में या डेमोक्रेट में या लिबरल में या कि कंज़रवेटिव मे।"

मेजर स्विनो जब बेस से निकला था तब उसे मात्र उसी आदेश की याद थी। लेकिन जीवन का मात्र जीवन के विधान से न्याय करना क्या अब संभव नही है? फिर ईसामसीह ने सूली पर चढ़कर प्राण क्यों गँवाये थे? सुकरात ने ज़हर पीकर प्राणों का वरण क्यों किया था? क्यों इतने मनुष्य इतने समय से मनुष्यता का ध्यान और उसकी पूजा करते आ रहे हैं? क्यों धरती के कवि ने बार-बार कहा है : 'सबसे बड़ा सत्य मनुष्य है!'

"रोशनीवाले, ओ रोशनीवाले !"

बिहार के छपरा या बरौनी ज़िले से कालिकाप्रसाद एक दिन यहाँ आया था। कालिकाप्रसाद झा। आने पर सबर्बन म्युनिसिपैलिटी में उसे नौकरी मिली थी। काम कम था, तनख्वाह उससे भी कम। काम था, शाम होने पर एक-एक कर सारी बत्तियों को जलाना।

उस शाम भी कालिकाप्रसाद सीढ़ी लिये हुए सिधु-ओस्तागर लेन के एक लैंप-पोस्ट के पास ठिककर खड़ा हुआ। उसके बाद लैंप-पोस्ट की बत्ती के बक्से को खोला और उसे दियासलाई से जलाया। जलाते ही अँधेरी गली का इर्द-गिर्द रोशनी से जगमगाने लगा। उसी क्षण बगल के घर की खिड़की से कोई चिल्ला उठा, "रोशनीवाले, ओ रोशनीवाले !"

कालिकाप्रसाद सीढ़ी लेकर जा रहा था। आवाज़ सुनकर ठिठककर खड़ा हो गया। उसके बाद खिड़की के पास जाकर बोला, "बहन, मैं रोशनीवाला हूँ।"

"आज तुम्हें इतनी देर क्यों हुई, रोशनी वाले ?"

"देर ! देर कहाँ हुई है, बहन ?"

वह लड़की बोली, "वाह जी, मैं देख नहीं पाती हूँ इसीलिए क्या तुम सोचते हो कि मैं कुछ भी अन्दाज़ नही लगा पाती हूँ ?"

कालिकाप्रसाद सामने बढ़ आया और उस लड़की के गालों को थपथपाता हुआ बोला, ' बहन, तुम मुझ पर बिगड़ी हुई हो, ऐसा लगता है।"

"फिर कहो कि कल जल्दी ही आओगे।"

"लेकिन यह नियम नहीं है कि मैं शाम होने के पहले ही बत्ती जला दूँ।"

"मैं तीसरे पहर से ही तुम्हारे लिए खिड़की पर बैठी रहती हूँ।"

कालिकाप्रसाद फिर से उस लड़की के गालों को थपथपाता हुआ बोला, "अच्छा, अब मैं और जल्दी आया करूँगा। अब तुम गुस्सा तो नहीं करोगी ?"

उस लड़की का चेहरा और भी लटक गया। "तुम देर करके आओगे तो मैं गुस्सा क्यों नही करूँ ? देर करने से दफ़्तर मे तुम पर डाँट नहीं पड़ती

है ?"

कालिकाप्रसाद बोला, "दफ़्तर में कोई डाँट-डपट नहीं करता है। तुम डाँटती हो, इसीलिए मैं डर से जल्दी-जल्दी आने की कोशिश करता हूँ।"

"तुम मुझसे बहुत डरा करते हो, रोशनी वाले ?"

"बहुत-बहुत डरता हूँ।"

"और तुम मुझसे प्यार नहीं करते हो ?"

"जरूर; तुम्हे बहुत प्यार करता हूँ।"

"प्यार करते हो ?"

"हाँ; बहुत ज्यादा।"

"तुम्हारे अलावा मुझे कोई प्यार नही करता है, रोशनीवाले !"

"क्यों, तुम्हें तुम्हारी माँ प्यार नही करती हैं ?"

"नहीं।"

"प्यार क्यों नहीं करती हैं ?"

लड़की बोली, "वाहजी, मैं आँखों से देख जो नही पाती हूँ। जो आँख से देख नही पाता है उसे क्या कोई प्यार करता है ? तुम बड़े ही बेवकूफ हो, कुछ भी नहीं समझते।"

कालिकाप्रसाद को देर हो रही थी। तमाम गलियों में उसे औरभी बत्तियाँ जलानी हैं।

वह बोला, "अब मैं चलूँ, बहन ! और भी बहुत-सी बत्तियाँ जलानी हैं।"

लड़की बोली, "कल लेकिन और जल्दी आना। तुम्हारे लिए मैं इन्तज़ार करती रहूँगी।

कालिकाप्रसाद ने सीढ़ी को अपने कंधे पर रखा। उसके बाद फिर से लड़की के गाल को थपथपाकर कहा, "चलूँ, बहन !"

ऐसा हर रोज़ होता है। सिधु ओस्तागर लेन में हर रोज यह नाटक अभिनीत होता है। हर रोज लड़की पुकारती है—रोशनीवाले, ओ रोशनी-वाले !

और हर रोज़ कालिकाप्रसाद आकर उस लड़की का गाल थपथपाता

है और कहता है—मैं आ गया, बहन !

इस कलकत्ता के निकटस्थ एक बस्ती में इसी तरह का एक अजीब नाटक हर रोज मंचित होता था। ऐसे ही समय में मेजर चार्ल्स डब्लू० स्विनी को आदेश मिला : सुबह हवाई जहाज लेकर हिरोशिमा जाओ।

लेकिन ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के कार्तिकराय, उनके दामाद सतोष राय या कि वसुमती देवी ने किसी दिन स्वप्न में भी कल्पना की थी कि इस दुनिया में रोशनी जलाने की ज़िम्मेदारी उनके ही खानदान के एक व्यक्ति पर पड़ेगी !

स्वयं लोकनाथ ने भी कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि एक दिन तमाम कलकत्ता का चक्कर काटता हुआ वह सीधे हिरोशिमा की सीमा में पहुँच जायेगा। अँधेरा तब गहराया नहीं था। चितपुर यार्ड के परले सिरे से जाने पर उत्तर की ओर मुड़ते ही थोड़े-से फासले पर बायीं ओर एक रास्ता है। चलो, बायीं ओर ही चलें। जब उसके लिए सारी सड़कें खुली हुई हैं तब बायें-दाहिने किसी भी ओर जाया जा सकता है। क्योंकि आसमान की कोई बायीं या दाहिनी दिशा नहीं होती है। सामने या पीछे का हिस्सा नहीं है।

एक मोड़ के परले सिरे के पास आते ही देखा, एक तरफ लिखा है : सिधु-ओस्तागर लेन। सिधु-ओस्तागर। अच्छा हुआ कि नाम याद आ गया। कम-से-कम परपरित नाम तो नहीं है। सिधु-ओस्तगार कौन थे, उनके नाम पर रास्ते का नाम क्यों पड़ा, इसे जानने का अब कोई उपाय नहीं है। बगल के घर से चुल्हे का धुआँ आ रहा है। उसके पास ही नोनी ईंटों का एक बौना पाखाना है। गन्दा है ? होने दो ! लोकनाथ को जिस तरह जादूगोपाल की पकौड़ी की दुकान में पहुँचने के लिए चौरंगी जाना है, और उसी तरह निमाई-शा की दुकान मे पहुँचने के लिए बेलगछिया जाना है और उसी तरह खिदिरपुर की मनसातल्ला लेन में भी उसे जाना है। फिर उसी तरह बराहनगर की सिधु-ओस्तागर लेन में भी जाना है। हिरोशिमा क्या यही है ?

"रोशनीवाले, आ रोशनीवाले !"

उस आवाज को सुनते ही लोकनाथ खड़ा हो गया। उसने देखा, एक

आदमी बांस की सीढ़ी कंधे पर लिये आया, लैंप-पोस्ट के आखिरी सिरे तक चढ़कर बक्से को खोला और रोशनी जला दी। और उसी क्षण बगल के एक एकमंजिला मकान की खिड़की से एक छोटी-सी पांच-छह वर्ष की, फ्रॉक पहने लड़की ने पुकारा, "रोशनीवाले, ओ रोशनीवाले!"

लड़की बोली, "तुम इतनी देर करके क्यों आये, रोशनीवाले?"

रोशनीवाला सीढ़ी को कंधे पर रखकर लड़की की ओर बढ़ा। आहिस्ता से खिड़की के भीतर हाथ घुसेड़कर लड़की के गालों को थपथपा दिया और बोला, "मुझ पर तुम गुस्सा हो गयी हो, बहन?"

"गुस्सा नहीं होऊँगी! तुम आज देर करके क्यों आये?"

रोशनीवाला बोला, "तुम किस तरह समझ जाती हो बहन, कि मैं देरी करके आया हूँ? लगता है, तुम घड़ी का शब्द सुन लेती हो?"

लड़की बोली, "वाहजी, तुम रोशनी नहीं जलाते हो तो मुझे सब कुछ अँधेरा-अंधेरा लगता है। मैं देख नहीं पाती हूँ तो तुम क्या यह सोचते हो कि मैं कुछ भी नहीं समझती?"

रोशनीवाला हँस दिया। हँसकर लड़की के गालों को थपथपाया और बोला, "अब मैं चलूं, बहन?"

लड़की बोली, "थोड़ी देर और रुक जाओ न, रोशनीवाले! खड़े-खड़े मुझसे गपशप करो।"

"नहीं बहन, और भी बहुत-से आदमी अँधेरे में हैं, उनके लिए रोशनी जलानी है।"

"अच्छा, तब तुम जाओ रोशनीवाले, मैं तुम्हें रोककर नहीं रखूंगी। कल जरा जल्दी आना।"

रोशनीवाला कंधे पर सीढ़ी रखकर जाने लगा। लोकनाथ उस आदमी के पास जाकर खड़ा हुआ और बोला, "सुनो, भैया!"

कालिकाप्रसाद ने कहा, "मुझे कह रहे हैं, बाबू?"

लोकनाथ ने पूछा, "वह लड़की कौन है, भाई? तुमसे इतनी देर से बतिया रही थी। मैं सुन रहा था।"

"ओह, वह छोटी लड़की, बाबू? अंधी है न, आँखों से कुछ देख नहीं पाती है। लेकिन ज्योंही रोशनी जलाता हूँ, समझ जाती है। हर रोज़ मैं

इसी वक़्त रोशनी जलाने आता करता हूँ और वह खिड़की के किनारे मेरे लिए बैठी रहती है। मैं ज्योंही रोशनी जलाता हूँ, वह समझ जाती है। मुझे 'रोशनीवाला' कहकर पुकारती है : ओ रोशनीवाले...मेरा असली नाम वह नहीं जानती है, इसीलिए रोशनीवाला कहकर पुकारती है।"

लोकनाथ को वह आदमी बड़ा ही अच्छा लगा। चलते-चलते रोशनी वाले के बारे में पूछताछ करने लगा—उसे म्युनिसिपैलिटी से कितनी *तनख्वाह मिलती है ? वह कितने सालों से नौकरी कर रहा है,* उसका देस कहां है, नाम क्या है ? कालिकाप्रसाद एक-एक कर लैंप-पोस्ट पर चढ रहा था। रोशनी जलाकर कंधे पर सीढी रखता हुआ एक के बाद दूसरे लैंप-पोस्ट पर चढ रहा था और बीच-बीच में लोकनाथ से बहुत तरह की बातें किया जा रहा था। कालिकाप्रसाद छपरा जिले से आया है और इतने दिनों से रोशनी जलाता आ रहा है। किसी ने इसके पहले उससे इस तरह के प्रश्न नहीं पूछे हैं। किसी ने उससे इस तरह घुल-मिल कर बातचीत नहीं की है।

अब कालिकाप्रसाद की बारी आयी। उसने पूछा, "आपका देस कहाँ है, बाबू ?"

"देस ? देस तो कलकत्ता है !"

"आप क्या करते है ?—नौकरी ?"

लोकनाथ ने कहा, "नहीं, नौकरी नहीं करता हूँ।"

"फिर देस मे जगह-ज़मीन है ?"

"नहीं।"

"फिर ?"

आदमी बिना नौकरी किये, बिना खेत-खलिहान में काम किये किस तरह रोज़-रोटी चलाता है, यह बात कालिकाप्रसाद के दिमाग में नहीं आयी। वह सिर्फ एक ही काम जानता है, एक ही काम को वह मनोयोग-पूर्वक करता है। वह है रोशनी जलाना और अँधेरे को दूर करना। शाम होने से पहले ही वह अपने बस्ती के घर से कंधे पर सीढ़ी लिये निकलता है। दफ़्तर से दियासलाई लेता है और उसे हिसाब से खर्च करता है। हिसाब करके अगर खर्च न करे और रोशनी न जले तो क्या होगा ? अगर

अँधेरा दूर न हो ? अगर वकुल रोशनी न देख पाये ?

वकुल दिन-भर शाम की उसी टुकड़ी के लिए टकटकी लगाये बैठी रहती है। ठीक उसी तरह जिस तरह जादूगोपाल सवेरे नींद टूटते ही ग्राहकों के लिए टकटकी लगाये बैठा रहता है, निमाई-दा भी सुबह चार बजे जगकर दुकान की टट्टी खोलकर चूल्हे में आग सुलगाता है।

दरअसल सभी प्रतीक्षारत हैं।

सभी 'अंत' देखने के लिए प्रतीक्षारत रहते हैं। आज तो ग्राहक आये पर कल ? आज का हिसाब-किताब तो अच्छा ही रहा। आज के खाने में गणित का लाभांश खासा अच्छा जमा हुआ। लेकिन कल ? आज यह बम तैयार हो रहा है। इतने दिनों के तमाम मनुष्यों के तमाम अध्यवसायों, तमाम खोजों का अंत हो गया है। तीन जहाज जायेंगे, तीन हवाई जहाज। एक अगर बेकार जाता है तो दूसरा है और वह भी बम गिराने में असमर्थ रहे तो तीसरा हवाई जहाज है—बी० 91। लेकिन यह तो हुआ, कल क्या होगा ? कल सुबह 1945 ईसवी का पाँच अगस्त है। महीने का पहला रविवार ! रोशनी वाला आयेगा तो ?

नहीं, इसका कोई ठिकाना नहीं। एक आदमी दुनिया की तमाम रोशनियों को बुझाते जा रहा है और दूसरा रोशनी जलाने जा रहा है। कौन जीतेगा ? या कि हार किसकी होगी ?

कॉन्फ्रेंस-टेबुल पर विश्व के तीन प्रधान नायक बैठे हैं—प्रेसिडेंट ट्रूमैन इस विश्व का नंबर एक नायक है। एक किनारे सर विंस्टन चर्चिल और उसकी बगल में जोसेफ स्तालिन।

और कॉन्फ्रेंस-रूम के बाहर गुप्तचर खड़े हैं। वे सिर्फ आदेश का पालन करेंगे। उन लोगों से अगर कहा जाये—जाओ वियतनाम में जाकर बम बरसा आओ। तो वे फिर यही करेंगे। क्यों बम बरसायें, किन पर बम बरसायेंगे, नियम नहीं है कि वे इसके बारे में पूछताछ करें। वे हुक्म के बंदे के अतिरिक्त कुछ नहीं है। म्युनिसिपैलिटी के कर्मचारी कालिकाप्रसाद की तरह वे हुक्म के बंदे हैं। अंतर सिर्फ एक ही है—वे रोशनियों को गुल कर देंगे और कालिकाप्रसाद रोशनी जलायेगा।

कालिकाप्रसाद जब छोटा था, अपनी माँ की गोद में चढ़कर कलकत्ता

के कालीघाट के मंदिर में आया था। पंडा का नाम था कालीचरण। कालीचरण पंडा का नाम लेते ही उन दिनों तमाम हिंदुस्तान के धर्म-भीरु मनुष्य उसे पहचान लेते थे।

माँ काली के मंदिर के बिलकुल अन्दर, काली माता के चरणों के पास ले जाकर उसकी माँ ने कहा था, "मेरे लड़के को आशीर्वाद दें, पंडाजी!"

पंडाजी के पास इतना वक़्त नहीं था कि एक घंटे तक सभी यजमानों को आशीर्वाद देते रहें। उनके और कितने ही यजमान है, उनके हाथ में ढेर सारे काम है। सभी को छिट-पुट आशीर्वाद देकर ही अपनी रोज़ी-रोटी चलाते है। फिर भी माँ के दबाव से पंडाजी ने कालिकाप्रसाद के मस्तक पर फूल रखकर आशीर्वाद दिया था, "तेरा लड़का सबका मंगल करे!"

उसी माँ काली की दया की भीख के फलस्वरूप ही माँ ने अपने लड़के का नाम रखा था कालिकाप्रसाद। और उसी काली माता की कृपा के कारण कालिकाप्रसाद आज सबका मंगल कर रहा है। कौन जानता है कि वह भला या बुरा काम कर रहा है! लेकिन रोशनी देना तो एक अच्छा काम है। काली माता ने उसे उसी काम में लगाया है।

उस दिन ठीक उसी समय बकुल ने फिर से पुकारा, "रोशनीवाले, ओ रोशनी वाले!"

लोकनाथ खड़ा-खड़ा दूर से यह सब देख रहा था। कालिकाप्रसाद उस दिन भी आया। आकर कंधे से सीढ़ी उतारी और लैंप-पोस्ट पर चढ़ा। दियासलाई जलाकर बत्ती जलायी। उसके बाद सीढ़ी से उतरकर खिड़की के पास गया। जाकर बोला, "आज मैं ठीक समय पर आ गया हूँ, बहन!"

उसके बाद उस दिन भी कालिकाप्रसाद ने ठीक पिछले दिनों की तरह ही बकुल के गालों को थपथपाया और फिर सीढ़ी लिये हुए सिधु-ओस्तागर लेने से जाने लगा।

ऐसा रोज-रोज होता है। इसी तरह हर रोज तीसरा पहर होते-न-होते लोकनाथ चाहे जहाँ भी रहे, सिधु-ओस्तगार लेने जाने के लिए छटपटाने लगता है। जादूगोपाल छोटे बाबू को छोड़ना नहीं चाहता है।

निमाई-शा भी आसानी से छोड़ना नहीं चाहता है।

जादूगोपाल कहता, "ऐसा कौन-सा काम है, छोटे बाबू ? थोड़ी देर और बैठिये न !"

निमाई-शा भी कहता, "आप एक तो देरी करके आये और उस पर जाने की हड़बड़ी लगी है !"

लोकनाथ कंधे का झोला उठाकर कहता, "नही जी, वराहनगर में एक काम है।"

"वराहनगर मे ? वराहनगर में आपका कौन है ?"

"है जी, है। मेरा घर हर जगह है, मैं उसी घर की खोज में मारा-मारा फिरता हूँ...।"

"और मानसतल्ला लेन ? वहाँ नही जाते है ?"

"हाँ, वहाँ भी जाता हूँ। वहाँ की ड्यूटी है सवेरे। वहाँ से बेहला गया, बेहला से टालीगंज और अभी टालीगंज से तुम्हारे पास आ रहा हूँ। तुम्हारे यहाँ से बेलगछिया जा रहा हूँ, उसके बाद बेलगछिया से सिघु-श्रोस्तगार लेन जाऊँगा।"

"वहाँ आपका कौन है, छोटे बाबू ?"

"वहाँ बकुल रहती है।"

"बकुल कौन है, छोटे बाबू ?"

"एक लड़की।"

इतना कहकर लोकनाथ वहाँ रुकता नहीं था। ग्राहकों की भीड़ होने के पहले ही झोले को कंधे पर रखता हुआ चलना शुरू कर देता। घर से निकलते ही गुप्तचरों की जमात उसके सामने बढ़ आती। प्रेसिडेंट ट्रूमैन के आते ही वे उसके सामने जाकर खड़े हो गये। उन्होंने पूछा, "आप एटम बम के बारे में कह रहे थे, हुजूर ?"

"किससे कहूँगा ?"

"ब्रिटिश प्रिमीयर चर्चिल और रूस के स्टालिन से ?"

"मिस्टर चर्चिल से तो पहले ही कह चुका हूँ। वह खुश है। स्टालिन को भी अभी खबर भेजी कि हम लोग जापान पर एटम बम गिराने जा रहे हैं।"

"सुनकर उन्होंने क्या कहा ?"

प्रेसिडेंट ट्रूमैन ने उत्तर दिया, "कहा कुछ नहीं। सिर्फ सुनते रहे।"

कुछ भी नहीं कहा ? लाखों आदमी चुप-चाप मारे जायेंगे, यह सुनकर भी कुछ नहीं कहा ? लेकिन कहेंगे ही क्यों ? जापानी तो दुश्मन है न। उनके जीने-मरने से क्या आता-जाता है !

लेकिन लोकनाथ को लगता, हिरोशिमा में जो लोग मारे गये है, फिर इंगलैंड में जो मारे गये है, उनके बीच कोई अन्तर रहेगा ही क्यो ? उनमे विरोध ही क्यों रहेगा ? फिर एक साल के बाद जो लोग विएतनाम में मारे गये है, ढाका मे मारे गये हैं, वरिशाल, नारायणगज, कलकत्ता, बेलियाघाट, जादवपुर, बेहला में मारे गये है उनके दरमियान भी कोई फासला नही है।

उस दिन भी ठीक समय पर ही लोकनाथ सिधु-ओस्तगार लेन मे आकर उपस्थित हुआ। आस-पास तालाब-पोखर हैं, बीच में तग टूटी-फूटी सड़क। दो-चार-ऐसे मकान जिनकी ईंटें लोनी है और बाहर झाँक रही हैं। उसी जगह एक कोने में वह लैप-पोस्ट खड़ा है। कालिकाप्रसाद समय पर ही आया। कंधे पर वही सीढ़ी और फतूही की जेब में दियासलाई। लोकनाथ को देखते ही छोटा-सा नमस्कार किया और सीढ़ी लगाकर बत्ती जलाने लगा। लेकिन खिड़की पर से आज किसी ने उसे पुकारा नहीं। किसी ने यह भी नही कहा—ओ रोशनीवाले, रोशनीवाले !

कालिकाप्रसाद चलने को हुआ। लोकनाथ ने पुकारा, "कालिकाप्रसाद, आज तो तुम्हे किसी ने पुकारा नहीं।"

तब कालिकाप्रसाद को समय नही था। उसने कहा, "बहनजी को बुखार आ गया है, बाबू ! मैं कल आकर पता लगाऊँगा। आज मेरे पास वक़्त की कमी है।"

वक़्त की कमी रहेगी ही। जिसके सर पर तमाम सड़कों पर रोशनी जलाने की जिम्मेदारी है, उसके पास समय की कमी रहना स्वाभाविक है। आज यद्यपि समय नहीं है, लेकिन कल न होगा तो कुछ पहले ही पहुँचकर वह पता लगायेगा।

लोकनाथ के पास लेकिन समय की कमी नहीं है। यह क्योकि समय

से नही लड़ेगा, इसीलिए समय ने उसके सामने हार स्वीकार कर ली है। और यही वजह है कि वह सभी के साथ आज रास्ते पर निकल पड़ा है। वह कुछ क्षण ठिठककर खड़ा रहा। ऐसा तो कभी नही होता था, इस तरह के होने की सभावना नही थी। उसने फिर से पुकारा, 'कालिका-प्रसाद !"

वीरान गली मे शाम होते-न-होते निर्जनता रेंगने लगी। उसकी आवाज लंबी दौड लगाकर भी कालिकाप्रसाद का पता नही लगा सकी। कालिकाप्रसाद को तब ढेर सारा काम था। उसे और भी बहुत-सी बत्तियाँ जलानी हैं। विशाल पृथ्वी की बकुल जैसी और भी अनेक लड़-कियाँ उसकी प्रतीक्षा मे बैठी हैं।

लोकनाथ एकमंज़िले मकान के सामने जाकर सदर फाटक की जंज़ीर खटखटाने लगा।

"कौन है ?"

अंदर से एक औरत की आवाज आकर लोकनाथ के कानों से टकरायी।

'कृपया एक बार दरवाजा खोल दें। बकुल से मुझे कुछ काम है।"

दरवाज़ा खोलती हुई रानू अजनबी आवाज सुनकर ठिठककर खड़ी हो गयी। अजय ने कहा था कि सदर दरवाजा अगर कोई खटखटाये तो आजकल खोलना उचित नहीं है। समय बड़ा ही बुरा चल रहा है। घर पर जब कोई मर्द न हो तो दरवाज़ा खोलने का अर्थ है मुसीबत बुलाना।

इसी कारण बदन के कपड़े को सभालकर उसने फिर से पूछा, "आप कौन हैं ? कहाँ से आये है ?"

"आप मुझे ठीक-ठीक नहीं पहचान पायेंगी। मैं बकुल को पहचानता हूँ।"

"बकुल को ज्वर आ गया है, वह लेटी हुई है।"

लोकनाथ ने कहा, "मैं उसे जरा देख सकता हूँ ? हर रोज इस वक़्त उसे खिड़की पर देखा करता था। आज देखा नही, इसीलिए आया हूँ।"

अब रानू ने दरवाजा खोल दिया। लोकनाथ के चेहरे पर आँख टिकाये उसके स्वभाव और चरित्र को समझने की कोशिश करने लगी।

लोकनाथ ने विनम्रतापूर्वक कहा, "मैं बहुत ही जरूरतमंद होकर

आया हूँ। इस मकान की खिड़की पर हर रोज़ वकुल बैठी रहती है और ज्योंही सड़क की बत्ती जल उठती है वह 'रोशनीवाले', 'रोशनीवाले' कहकर पुकारती है। मगर आज उसकी पुकार सुनायी नहीं पड़ी।"

"कहा न, कल रात से उसे ज्वर है।"

"किसी डॉक्टर को दिखाया है ?"

"नहीं, डॉक्टर को अब तक सूचना नहीं दी गयी है।"

लोकनाथ ने पूछा, "कितना ज्वर है ?"

रानू बोली, "हमारे घर में थर्मामीटर नहीं है।"

"यह क्या ! आप लोगों के घर में छोटी लड़की है और थर्मामीटर तक नहीं ! ठहरिये, मैं अभी एक थर्मामीटर लेकर आता हूँ।"

और लोकनाथ बाहर निकल आया। रानू स्तब्ध रह गयी। यह कौन है ? यह भला आदमी यहाँ आया ही क्यों ? वकुल इसे पहचानती है ! और दिन अब तक अजय दफ़्तर से लौट आता था। उसके आ जाने पर फिर कोई भय नहीं रह जाता है। लेकिन ओवर-टाइम क्या तुच्छ वस्तु है ? तीन घंटा और ज़्यादा लगने से सात रुपये घर में आते हैं। सात रुपये में एक सप्ताह का राशन मिल जाता है।

लोकनाथ के जाने के बाद रानू ने दरवाज़े को बन्द कर दिया था। एक ही ओर संभालने से तो उसका काम चलेगा नहीं। उधर रसोई चढ़ी हुई है, अन्दर वकुल ज्वर से पीड़ित है, फिर झाड़ू लगाने से शुरू करके कथरी की सिलाई तक का काम उसे अकेले ही करना पड़ता है।

कुछेक क्षणों के बाद दरवाज़े की जंजीर फिर से झनझना उठी।

रानू जल्दी-जल्दी दरवाज़ा खोलने के लिए दौड़ी गयी। शायद भला आदमी थर्मामीटर लेकर आ गया।

"बाप रे, तुम हो ? मैंने सोचा...!"

अजय घर के भीतर पाँव रखता हुआ बोला, "मैं नहीं हूँ तो फिर तुम किसके बारे में सोच रही थी ?"

"मैं सोच रही थी कि वही भलेमानस होंगे।"

"उस भले आदमी का मतलब ? और किसी के आने की बात थी क्या ?"

"हाँ, मैं उन्हें पहचानती नहीं। थोड़ी देर पहले आये थे। कह रहे थे कि वह वकुल को पहचानते हैं। वकुल को ज्वर है, यह सुनते ही थर्मामीटर लाने के लिए चले गये...।"

"थर्मामीटर ? ज्वर देखने के लिए ?"

"हाँ।"

"थर्मामीटर कहाँ से ले आयेंगे ?"

"मालूम नहीं।"

"मगर वह आदमी कौन है ? जाना-पहचाना नहीं, फिर वकुल के लिए थर्मामीटर क्यों ले आयेगा ?"

अजय आज तेईस सालों से कलकत्ता में है। इस तरह की अजीब घटना के बारे में किसी के मुँह से नहीं सुना है। "वकुल उसकी कौन होती है ? या वही हम लोगों का कौन है जो इतनी ममता दिखा रहा है ! इतनी ममता दिखाना तो अच्छी बात नहीं है ! तुम जिसके-तिसके आने पर दरवाजा खोलने गयी ही क्यों ? अगर कोई चोर-डाकू हो ! मैं जब घर में नहीं हूँ, ठीक उसी समय घर आना, यह तो अच्छी बात नहीं है।"

"भला आदमी कह गया है कि वह फिर से आयेगा और थर्मामीटर लेता आयेगा।"

"अब आया ! तुम भी कैसी हो ! चोर-डाकू सबको भला आदमी समझती हो !"...

"इसी तरह किसी दिन कोई तुम्हारी हत्या करके गहना-गुरिया लेकर चंपत हो जायेगा।"

यह बात कहने के बावजूद अजय का सन्देह दूर नहीं हुआ। इस दुनिया में जो अल्पवेतन-भोगी आदमी है, वे अच्छी चीज को भी भय की निगाह से देखते हैं। अनिर्दिष्ट से जो टकरा सकता है, वह भले ही किसी और कोटि का आदमी हो मगर अजय की कोटि का आदमी नहीं होता। अजय उस कोटि का प्राणी है जिसे अगर फुंसी हो जाये तो उसे कैंसर समझकर रात-दिन घबराया रहता है। उस क़िस्म के आदमी का एक अंधी लड़की का पिता होना कितना यातनादायक है, इसका अहसास अजय के अतिरिक्त किसी और को नहीं हो सकता है। वैसे आदमी के घर में एक अजनबी का

आना जैसे गड़बड़ी पैदा कर गया।

"वकुल कैसी है ?" अजय ने पूछा।

"बताया न कि ज्वर है। कल रात से ही बिस्तर पर लेटी हुई है, एक बार भी नहीं उठी।"

बाहर से ठीक उसी वक्त सदर दरवाज़े की जंज़ीर झनझना उठी। रानू ने अजय की ओर देखा और बोली, "वही ! वह भले आदमी शायद आ गये !"

अजय ने दरवाज़ा खोलते ही देखा, सामने दो व्यक्ति खड़े हैं।

लोकनाथ ने कहा, "मैं डॉक्टर साहब को अपने साथ ले आया हूं। वकुल किस कमरे में है ?"

पति-पत्नी दोनों अवाक् रह गये। जैसे आदमी नहीं हैं बल्कि मशीन हैं। मशीन की तरह ही अजय दोनों व्यक्तियों को सोने के कमरे में ले गया।

हिरोशिमा के आकाश में तब भोर का आगमन हुआ था। 1945 ईसवी का पाँच अगस्त। रात के आखिरी पहर में हिरोशिमा के आकाश को लक्ष्य बनाये जो लोग उड़कर गये थे, उनकी घड़ी में तब सुबह के साढ़े सात बजे थे। अब कुछ देर बाद ही दुनिया के तमाम आदमियों की आँखों के सामने की रोशनी सदा के लिए अदृश्य हो जायेगी। दुनिया का पहला अणुबम ! जो बम बहुत बड़ी राशि व्यय करने के बाद तैयार हुआ, उसे गिराने के यत्न में प्रेसिडेंट ट्रूमैन कोई त्रुटि नहीं रहने दे सकता है। खासतौर से तब जबकि चर्चिल और स्टालिन की सहमति प्राप्त हो चुकी है।

प्रात.काल के उदार आकाश के तले मिट्टी के आदमी तब सोकर उठे थे। दैनंदिन परिक्रमा प्रारम्भ करने के पहले सूर्य को प्रणाम करने का काम तुम लोग निवटा लो ! तुममें से हर व्यक्ति नये सूर्य को किरणों से स्नान करके पवित्र हो ले। हिंदू वलि देने के पूर्व बकरे को जिस तरह स्नान कराते है, उसी तरह तुम भी स्नान कर लो। हम तीनो व्यक्ति तुम्हारी वलि चढाने के लिए आये हैं...।

नाम कहने से पहचान में आ जाये, अजय सरकार उस क़िस्म का आदमी नहीं है। और वह जिस लोकेलिटी में रहता है, वह लोकेलिटी भी कोई ख्यातिनामा लोकेलिटी नहीं है।

नामी लोकेलिटी में जो रहते हैं उनकी दुनिया अलग ही क़िस्म की होती है। ईश्वर ही उनकी अच्छाई-बुराई की ज़िम्मेदारी स्वीकार कर लेता है। उन लोगों की देख-रेख करने के लिए म्युनिसिपैलिटी भी उम्दा लैंप-पोस्ट खड़ा करती है, झाड़ू देने वाले भी उनके मुहल्ले की सड़क पर अच्छी तरह से झाड़ू लगाते हैं। अगर थोड़ी-सी भी चूक हो जाती है तो म्युनिसिपल स्टाफ़ को जुर्माना भरना पड़ता है।

लेकिन अजय सरकार उस जमात का नहीं है। एक दिन जैसे हर कोई पैदा होता है, उसी तरह वह भी पैदा हुआ था। उसके बाद जिस तरह सब की शादी होती है, उसकी भी शादी हुई थी और नौकरी? अन्य आदमी जिस तरह हज़ारों आदमियों के पद-पूजन के बाद नौकरी पाते हैं, उसी तरह उसे भी नौकरी मिली थी। उसके बाद सिंधु-ओस्तागर लेन के एक मकान का एक कमरा किराए पर लेकर गृहस्थी चला रहा था।

उसी अजय सरकार के जीवन में इस तरह की अति-नाटकीय घटना घटित होगी, इसके बारे में किसने सोचा था! मुहल्ले का डॉक्टर दूसरे दिन भी आया। इतने दिनों से अजय इस मुहल्ले में है, *किसी दिन उसे* डॉक्टर बुलाने की ज़रूरत नहीं पड़ी थी। डॉक्टर बुलाने का अर्थ ही है नक़द रुपया चुकाना। डॉक्टर पशुपति बिना पैसे किसी की चिकित्सा नहीं कर सकता है।

पशुपति डॉक्टर ने उस दिन साफ़-साफ़ पूछा, "अच्छा वह भले आदमी आप लोगों के कौन है?"

"कौन भले आदमी?"

"वही लोकनाथ बाबू। लोकनाथ राय। मैंने पता लगाया है, वह बहुत ही बड़े आदमी हैं, साहब। ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के कार्तिकराय के नाती!"

अजय भी सुनकर स्तंभित हो गया। *"यह बात है? वह क्या बहुत* बड़े आदमी है?"

"अवश्य ही हैं। इसीलिए तो पूछ रहा हूँ कि मिस्टर राय से आपकी जान-पहचान कैसे हुई ?"

अजय कई दिनों से इस बात को टाले जा रहा था। उसने कहा, "कहने से आपको यकीन न होगा। मुझसे लोकनाथ बाबू की कोई जान-पहचान नहीं थी। उन्होंने वकुल के लिए मुझे एक भी पैसा खर्च नहीं करने दिया। देखिए न—अंगूर, बेदाना, सेब खरीदकर दे गये हैं।"

बिछावन के पास ही फल सजाकर रखे गये थे। पशुपति डॉक्टर ने उस ओर आँख दौड़ाई।

"आपको अपनी फीस मिल रही है न, डॉक्टर साहब ? मैं इसके लिए खुद को बड़ा ही शर्मिन्दा महसूस करता हूँ।"

पशुपति डॉक्टर ने कहा, "नहीं-नहीं, अजयबाबू, आपके लिए शर्मिन्दा होने की कोई बात नही है। मुझे ठीक-ठीक रुपया मिल रहा है। यह देखिए न !"

इतना कहकर उसने जेब से सौ रुपये का एक नोट निकालकर दिखाया और कहा, "यह नोट जोर-जबरन मुझे थमा गये और मुझसे कह गये कि सुबह, दोपहर और शाम—तीन बार वकुल को देख लिया करें।"

पशुपति डॉक्टर रोगी के घर आने के लिए आमतौर से आठ रुपये लिया करते हैं, और वह भी पेशगी। इसी कारण वराहनगर मुहल्ले में पशुपति डॉक्टर की बदनामी फैली हुई है। लोग कहते हैं, पशुपति डॉक्टर नहीं, बल्कि चश्मखोर है।

वही पशुपति डॉक्टर तक यह सब देखकर हैरान हो गये हैं। इस तरह के आदमी भी दुनिया मे हैं ! आत्मीय-स्वजन नही, एक ही मुहल्ले का वाशिन्दा भी नहीं। कहाँ किले के पार किसी स्थान मे रहता है और चक्कर काटता-काटता इस वराहनगर मे आता है ! क्यो आता है ? किस चीज का लालच है ? कभी-कभी मन मे विचार आता है—फिर क्या अजय की पत्नी के कारण आता है ? उसकी पत्नी की उम्र कम है। बदन भी गठा हुआ है।

दो-चार आदमी डिसपेंसरी में बैठे रहते हैं। वे गहरी खोज में तल्लीन रहते हैं। "डॉक्टर साहब, बात कुछ मालूम हुई ?" वे पूछा करते हैं।

पशुपति डॉक्टर को कुछ भी पता नहीं चला है। सचमुच, इस युग में यह एक ऐसा विस्मय है जिसकी तुलना नहीं की जा सकती है। इतने बड़े घर की सन्तान होकर इस घर की एक अंधी लड़की के लिए इतना-इतना रुपया खर्च करना ! इसके पीछे कौन-सा रहस्य हो सकता है, खोज-पड़ताल करने पर भी किसी को कोई पता नहीं चला।

उस दिन भी डॉक्टर आया। कहा, "जीभ देखूँ, जीभ।"

वकुल ने जीभ बाहर निकाली।

टॉर्च की रोशनी मे वकुल के मुंह के अंदरूनी हिस्से को देखा। नही, कही कुछ दोष नही है। स्टेथिस्कोप से छाती की भली-भाँति परीक्षा की। इसके बाद पेशाब, पाखाना और थूक की जाँच करनी है।

अजय सरकार बग़ल में खड़ा था।

उसने पूछा, "कैसा देख रहे हैं, डॉक्टर साहब ?"

पशुपति डॉक्टर स्टेथिस्कोप को सहेजता हुआ बोला, "कही कोई दोष नही है।"

"फिर कल आपको नहीं आना है न ?"

पशुपति डॉक्टर बोला, "आपके मना करने से क्या होगा अजय बाबू, मिस्टर राय नही छोड़ेंगे। आज भी जाने के बाद उन्हे रिपोर्ट देनी है। थोड़ी देर बाद ही मेरे चेंबर मे आयेंगे।"

और डॉक्टर चला गया।

लेकिन मन से शंका दूर नही हुई। रोगी के घर से निकलकर ज्योंही चेंबर में बैठा, लोकनाथ राय अन्य रोगियों के जमघट मे बैठा दीख पड़ा।

लोकनाथ ने कहा, "वकुल कैसी है ?"

पशुपति डॉक्टर ने कहा, "अब पेशेंट को कोई ट्रबुल नही है।"

लोकनाथ का भय तब भी दूर नही हुआ। उसने कहा, "फिर भी आप वकुल को हर रोज देख आया करें।"

इतना कहने के बाद सौ रुपये का एक नोट निकालकर डॉक्टर की ओर बढ़ाया।

"लीजिये।"

पशुपति डॉक्टर ने नोट को लेकर जेब मे रख लिया। हर रोज डॉक्टर

नियमित रूप से वकुल को देख आता है। पहले छाती मे दोष था, सर्दी-खाँसी का प्रभाव था। लोकनाथ ने न केवल डॉक्टर बल्कि नर्स को भी रख दिया है।

अजय ने कहा, "हमारी वकुल के कारण आपका बहुत ही पैसा बरबाद हो रहा है, लोकनाथ बाबू !"

रानू ने भी संकोचपूर्वक कहा था, "हम लोगों के कारण आपका बहुत पैसा बरबाद हो रहा है, लोकनाथ बाबू !"

"आप लोगों के कारण ?"

लोकनाथ मन-ही-मन हँसता है। उन्हें पता नही है कि वह वकुल की चिकित्सा नहीं करा रहा है, चिकित्सा अगर करा रहा है तो अपने-आपकी चिकित्सा करा है। अपनी चिकित्सा के लिए ही उसने इतना पैसा खर्च किया है। जरूरत पड़ने पर वह और भी खर्च करेगा।

जिस दिन वकुल ने भात खाया, उस दिन लोकनाथ फिर वहाँ आया। तब तीसरा पहर होने को था। थोड़ी देर बाद ही शाम उतर आयेगी। थोड़ी देर बाद ही कालिकाप्रसाद आयेगा।

लोकनाथ ने कहा, "भाभीजी, वकुल को फ्रॉक पहना दें। अच्छी तरह बालो में कंघी कर दें। चेहरे पर पाउडर और आँखों मे काजल लगा दें।"

एक ही लड़की है और उस पर अंधी। लोकनाथ के चेहरे पर टिकी रानू की आँखें जिज्ञासा से अश्रुपूर्ण हो उठीं। जैसे वह कहना चाहती है—अब क्यों भैया, किसके लिए सजाऊँ, कौन उसे देखेगा ?

लोकनाथ ने झिड़की दी, "रोइये मत, मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वही कीजिये।"

लोकनाथ ने वकुल के लिए जो फ्रॉक खरीद दिया था, रानू ने उसे ही पहना दिया। आँखों में काजल लगा दिया, बालों मे कंघी कर दी।

वकुल बोली, "मैं अच्छी दिखती हूँ, माँ ?"

माँ के बदले लोकनाथ ने जवाब दिया, "हाँ, तुम बड़ी ही अच्छी दिख रही हो। अब मेरे साथ खिड़की के किनारे चलो।"

और उसे ले जाकर खिड़की पर बिठा दिया। बीमारी के समय वह खिड़की के किनारे नहीं आ पायी थी। पहले माँ हर रोज अपनी लड़की को

सजा-सँवार कर वहाँ बिठा जाती थी और रसोई करने चली जाती थी। रसोई पकाकर, बाल बाँधकर और हाथ-मुँह धोकर फिर लड़की के पास आती थी। माँ ज्यों ही आती वह पूछती थी, "माँ, रोशनीवाला आया था ?"

माँ कहती, "तुम्हारा रोशनीवाला हर रोज आता है।"

लड़की पूछती, "क्यों माँ ?...रोशनीवाला हर रोज क्यों आता है ?"

माँ कहती, "वाह री ! रोशनीवाला न आयेगा तो सारा कुछ अँधेरे से भर जायेगा।"

बात सही है। पाँच साल की छोटी बच्ची है। फिर भी वह समझती है कि अँधेरा बुरी चीज होता है और रोशनी अच्छी चीज !

उसके बाद किसी वक्त अचानक उसकी समझ में आता है कि उसकी आँखों के सामने का स्याहपन धुँधली सफ़ेदी जैसा हो जाता है और उसी क्षण तालियाँ पीटती हुई बोल पड़ती है, "वह रोशनीवाला आ गया, रोशनीवाला।"

उस दिन भी नये कपड़े-लत्ते पहनकर माँ ने अपनी लड़की को खिड़की के किनारे बिठा दिया। थोड़ी देर के बाद बकुल का चेहरा एकाएक ख़ुशियों से दमक उठा।

"रोशनीवाला आया है, रोशनीवाला।"

कालिकाप्रसाद की निगाह उस पर पड़ी। सीढ़ी से उतरकर खिड़की के पास गया।

"बहनजी, बहनजी, तुम अच्छी हो गयीं ?"

कालिकाप्रसाद ने खिड़की के अन्दर हाथ घुसाया और बकुल के गालों को थपथपा दिया। बकुल ने भी कालिकाप्रसाद के चेहरे की ओर हाथ बढ़ाया।

"तुम कल फिर आओगे न, रोशनीवाले ?"

उसके बाद कालिकाप्रसाद के चेहरे को हाथ से सहलाती हुई बोली, "लगता है, तुम्हारी भी दाढ़ी है, रोशनीवाले। जानते हो, मेरे चाचाजी

और भी बहुत-सी जगहों में रोशनी जलाने के लिए जाना है, वकुल जैसी अनेकानेक लड़कियाँ उसके लिए प्रतीक्षा में बैठी हैं। वह वकुल के गालों को थपथपाता हुआ चल दिया।

उस दिन असमय सदर दरवाज़े की जंज़ीर झनझनाते देखकर रानू को अचरज हुआ। ऐसे असमय में कोई भी दरवाजे को नहीं खटखटाता है। सुबह नौकरानी गृहस्थी का काम-धाम करके बहुत पहले ही चली जा चुकी है। लेकिन नौकरानी नहीं, लोकनाथ था।

अंदर जाता हुआ लोकनाथ बोला, "भाभीजी, वकुल को कपड़े-लत्ते पहना दें।"

"क्यों, क्या बात है?"

"वकुल को आज एक डॉक्टर के पास ले जाऊँगा।"

"किस चीज़ का डॉक्टर है? डॉक्टर साहब अभी उस दिन तो देख ही चुके हैं। उन्होंने बताया है, सब ठीक है।"

लोकनाथ बोला, "नहीं, यह वह डॉक्टर नहीं है, आँखों का डॉक्टर है। कलकत्ता के आँखों के सबसे बड़े डॉक्टर के पास वकुल को ले जाऊँगा।"

रानू बोली, "लेकिन आप कैसे ले जाइयेगा?"

"उसके लिए गाड़ी ले आया हूँ।"

गाड़ी! रानू ने खिड़की से बाहर झाँककर देखा। सड़क पर एक विशाल गाड़ी खड़ी है, सामने ड्राइवर बैठा है।

"वह गाड़ी किसकी है?"

"मेरी।"

"आपकी?"

विस्मय से रोमांचित होकर रानू लोकनाथ की ओर अपलक ताकती रही। जैसे उसने ताजमहल देखा हो। यह किस क़िस्म का आदमी है! लेकिन लोकनाथ ने उतना सोचने का अवकाश नहीं दिया। नष्ट करने के लिए उसके पास समय नहीं है। रानू ने वकुल को जल्दी-जल्दी फ्रॉक और जूते पहना दिये। लोकनाथ उसे गोदी में उठाता हुआ गाड़ी में ले गया।

गाड़ी में बैठते ही ड्राइवर ने गाड़ी चलाना शुरू किया। उसके बाद जब गाड़ी सड़क की बाईं दिशा में ओझल हो गयी, रानू कुछ क्षणों तक उसी ओर ताकती रही। मन मे एक प्रकार की आशा जगी। मुन्नी की आँखें अच्छी हो जायेंगी ! मुन्नी दूसरी लड़कियों की तरह आँख से देख पायेगी ! शाम के वक्त अजय ने सब-कुछ सुना।

"उसके बाद ?" उसने पूछा।

रानू बोली "उसके बाद जब बारह बजे, गाड़ी फिर से लौटकर आयी। मैंने लोकनाथ बाबू से पूछा : डॉक्टर ने क्या बताया ? आँखें अच्छी हो जायेंगी ? लोकनाथ बाबू ने कोई जवाब नहीं दिया।"

अजय बोला, "इसके मायने है अच्छी नही होंगी।"

रानु बोली, "शाम के वक्त वह फिर आयेंगे। पूछना कि डॉक्टर ने क्या कहा है।"

ये लोग छोटी-छोटी आशा-आकांक्षा और छोटी-छोटी इच्छा-अभिलाषा में जीने वाले लोग हैं। ये लोग यानी अजय और रानू। दफ्तर की नौकरी मे पाँच रुपये की बढोतरी या बीस रुपये की साड़ी से ही इन्हें स्वर्ग-सुख मिल जाता है। उसी किस्म की छोटी गृहस्थी मे लोकनाथ जैसा एक व्यक्ति उपस्थित हुआ है। उसे समझ सके, उसकी परिधि को जान सके, सिधु-ओस्तगार लेन मे ऐसा एक भी आदमी नहीं हैं।

दूसरे दिन लोकनाथ सचमुच आया। फिर सड़क पर वही विशाल गाड़ी खड़ी थी। वकुल को वह फिर ले जायेगा। इस बार दूसरे डॉक्टर के पास।

"भाभीजी, कपड़े और जूता पहना दें।"

वकुल पिछले दिन कपडे और जूता पहनकर गयी थी। इस तरह घूमना-फिरना उसे कभी मय्यसर नहीं हुआ था। हर बार घूम-फिर कर आते ही वह माँ से बताती है कि वह कितनी दूर गयी थी चाचाजी ने उसे क्या-क्या खाने को दिया था।

लड़की बताती है और माँ-बाप सुनते हैं।

लड़की कहती, "तुम्हे मालूम नहीं है, तुम में से किसी को भी मालूम

नहीं है कि गाड़ी पर चढ़ने से कितना आराम मिलता है। तुम लोगों ने मुझे कभी गाड़ी पर नहीं चढ़ाया था। चाचाजी मुझे कितना लाड़-प्यार करते है! कितना लेमनचूस ख़रीदकर देते हैं!"

अगर मुहल्ले का कोई पूछता है कि तुम्हें सबसे अधिक कौन मानता है मुन्नी, तो मुन्नी कहती है—चाचाजी।

"उसके बाद कौन मानता है?"

"रोशनीवाला।"

वे स्तब्ध हो जाते हैं। बाप रे बाप, यह लड़की क्या कहती है! फिर तुम्हारे माँ-बाप? वे लेमनचूस खरीदकर नहीं देते है?

लोकनाथ कब आकस्मिक ढग से आता है और कब मुन्नी को लिये कहाँ चला जाता है, अजय को कुछ पता नहीं चलता है। उससे कभी मुलाकात भी नहीं होती है। घर आने पर सुनता है—लोकनाथ बाबू आये थे। आकर बकुल को आँखों के डॉक्टर के पास ले गये थे।

अजय पूछता है, "डॉक्टरों का क्या कहना है? अच्छी हो जायेगी? ऑपरेशन करने से ठीक हो जायेगी?"

रानू कहता है, "क्या मालूम, लोकनाथ बाबू ने कुछ बताया ही नहीं।"

"तुम उससे कुछ पूछती नहीं हो?"

"पूछने में डर लगता है। अगर सुनने को मिले कि अब अच्छी नहीं होगी...।"

उस दिन भी लोकनाथ ठीक समय पर सिंधु-ओस्तागर लेन में आकर उपस्थित हुआ। जो लोग लोकनाथ को पहचान गये है, वे कहते हैं, "देखो, वही आदमी आया है।"

चाय की दुकान के अन्दर से लड़कों ने गौर से देखा। सिर पर वही रूखे-सूखे बाल हैं, मुँह पर बिखरी हुई दाढ़ी, कंधे से लटकता एक झोला और पाँवों में चप्पल। उन्हें मालूम है कि यह आदमी जिस दिन सोलह नंबर के मकान की अंधी लड़की को लेकर डॉक्टर के घर जाता है, उस दिन गाड़ी पर चढ़ता है; फिर डॉक्टर को दिखाकर गाड़ी से उस लड़की को उसकी माँ के पास पहुँचाकर चला जाता है। लेकिन अन्य सभी अवसरों पर पैदल

आता है। पैदल आकर सोलह नम्बर के मकान के सामने खड़ा होता है। और जब म्युनिसिपैलिटी का रोशनीवाला आता है तब सोलह नम्बर के मकान की खिड़की से उस मकान की वह छोटी-सी लड़की चिल्ला-चिल्लाकर पुकारती है—रोशनीवाले, ओ रोशनीवाले !

इन घटनाओं को मुहल्ले के लड़के देख चुके हैं। इसलिए उस दिन भी लोकनाथ जब पैदल चलता हुआ आया, लड़कों ने उसकी ओर ध्यान से देखा, पर कहा कुछ भी नहीं। कालिकाप्रसाद ने पहले की तरह ही लैंप-पोस्ट पर चढ़कर बत्ती जलायी। रोशनी जलाने के लिए ही वह सुदूर छपरा जिले से कलकत्ता आया है। रोशनी ज्योंही जली, वकुल भी चिल्ला उठी, "रोशनीवाले, ओ रोशनीवाले !"

कालिकाप्रसाद की दृष्टि लोकनाथ पर भी पड़ चुकी थी। देखकर निकट आया और खड़ा होकर बोला, "मेरी अब नौकरी नहीं रहेगी, हुजूर ! मैं अब रोशनी जला नहीं पाऊँगा।"

"क्यों ? क्या हुआ है ?"

"सभी रोशनी बुझा देते हैं, हुजूर।"

"कब बुझा देते हैं ?"

"अभी मैंने बत्ती जलायी है न ! थोड़ी रात होते ही सभी बत्ती को ढेले का निशाना बनाते हैं। उसके बाद बुझ जाती है।"

उस दिन रविवार था। अजय सरकार ने लोकनाथ को देखकर नमस्ते की।

"आपसे मैं मिल ही नहीं पाया, लोकनाथ बाबू," अजय सरकार ने कहा, "आप अन्यथा न लें। ऑफिस में अभी बजट तैयार किया जा रहा है।"

लोकनाथ बोला, "उसके लिए आप न सोचें। मैं आपके लिए नहीं, वकुल के लिए आता हूँ।"

अजय बोला, "अच्छा, एक बात पूछूं ? वकुल की आँखें सचमुच अच्छी हो जायेंगी ? डॉक्टरों का क्या कहना है ?"

"उन लोगों का कहना है कि हिन्दुस्तान में कोई ठीक नहीं कर पायेगा। कराना हो तो बाहर जाना पड़ेगा, वकुल को बाहर ले जाना पड़ेगा।"

"बाहर ? बाहर का मतलब ?"

लोकनाथ बोला, "बाहर का मतलब या तो अमेरिका, लन्दन या वियेना।"

अजय स्तब्ध रह गया। "आप बकुल को विदेश ले जाइयेगा ?"

जैसे इस बात पर उसे विश्वास नहीं हुआ हो। यह बात किसी से कहे तो उस पर विश्वास नहीं करेगा। मुहल्ले के लोग आश्चर्य में आ जायेंगे जब उन्हें मालूम होगा कि उसकी लड़की विलायत जायेगी। जहाज़ से भी विलायत जाया जा सकता है और हवाई जहाज से भी। यह सुनकर पड़ोसियों को आश्चर्य होगा। हो सकता है, कोई-कोई संदेह करे। डॉक्टर पशुपति सरकार को भी एक दिन सदेह हुआ था और उसने पूछा था, "वह आपके कौन लगते है ?"

सचमुच, लोकनाथ राय अजय सरकार का होता ही कौन है ! कोई न हो तो दूसरे का उपकार नहीं किया जा सकता है क्या ? दुनिया मे स्वार्थ ही सब-कुछ है ? फिर मुहल्ले के सभी आदमी लोकनाथ राय के बारे में सोच-सोचकर अपना दिमाग ख़राब क्यो करते हैं ? उसने मेरा उपकार करके कौन-सा अन्याय किया है !

अजय सरकार बोला, "जानते है लोकनाथ बाबू, आप बकुल की आँख ठीक कराने के लिए उसे विलायत ले जाने की जो कोशिश कर रहे है, इस बात पर कोई विश्वास नही करना चाहता है।"

रानू ने कहा, "सचमुच भैया, पहले आपसे हमारी कोई जान-पहचान नहीं थी, इस पर कोई विश्वास नही करना चाहता है...।"

अजय ने कहा, "जानते हैं, इतने सालों से इस मुहल्ले मे रह रहा हूँ, किसी ने हमारी कोई खोज-खबर तक न ली थी। लेकिन आज आप जब आते हैं सभी आँखें फाड़-फाड़कर देखा करते हैं। रसोई बनाना छोड़कर, काम-काज छोड़कर आपको देखने के लिए दौड़ते हुए रास्ते पर आते है। आपकी गाड़ी देखकर लोगों के मन में ईर्ष्या जगती है। वे कहते हैं— लोकनाथ बाबू जब इतने बड़े आदमी हैं और उनके पास जब इतनी बड़ी गाड़ी है तो फिर वह पैदल क्यों चलते हैं ?"

लोकनाथ इस तरह की बातों को सुनना पसन्द नहीं करता। वह

बोला, "इस तरह का प्रसंग मेरे सामने आप न लायें तो बेहतर रहे। इस तरह की चर्चा करने में मुझे घृणा का बोध होता है, अजयबाबू!"

इतना कहकर लोकनाथ ने बाहर कदम रखा।

लेकिन अचानक एक अप्रत्याशित मौका मिल गया। इस तरह का मौका चराचर जीवन में नहीं आता है। लोकनाथ ने कहा, "अब विलायत नहीं जाना पड़ेगा, अजय बाबू! सुनने में आता है कि वियेना से कलकत्ता एक डॉक्टर आये हैं।"

"कलकत्ता में आये हैं?"

लोकनाथ बोला, "सुनने में यही आया है। अब तक मैं उनसे मिला नहीं हूँ। सुना है, एक धनी मारवाड़ी की आँखों का ऑपरेशन करने आये हैं। मैंने सोचा कि आज एक बार वहाँ जाऊँ।"

और लोकनाथ चल दिया।

वसुमती देवी की बातें मुझे याद थीं। अपने जीवन में वह बहुत-कुछ देख चुकी है। बहुत भोग चुकी हैं। सौभाग्य के शिखर पर चढ़कर बरसों तक उस उच्च शिखर पर आसीन रह चुकी हैं। दामाद की मृत्यु के बाद जब तक लोकनाथ बालिग़ नहीं हुआ तब तक फैक्टरी के मैनेजिंग डाइरेक्टर रह चुकी है। हिन्दुस्तान के जितने नामी-गिरामी आदमी हैं, सभी उनके घर पर आ चुके है। कौन नहीं आया है? महात्मा गांधी, सी० आर० दास से लेकर नेताजी सुभाष तक वसुमती देवी के काफी निकट रह चुके है। वसुमती देवी ने स्वयं अपने हाथ से परोसकर खिलाया है। कांग्रेस-फ़ंड में लाखों रुपये चंदा दिया है। उसी वसुमती देवी को जीवन के अंतिम काल में अपनी नाती के कारण अतिशय मानसिक कष्ट का उप-भोग करना पड़ता है। पति के हाथों द्वारा तैयार फ़ैक्टरी को नाती ने छोड़ दिया। एकमात्र संतान लड़की ही थी। वह कम उम्र में चल बसी। दामाद योग्य पुरुष था। उस पर भी उसे पूरा भरोसा था। वह भी आँखों के सामने विदा हो गया। बाक़ी रह गया एकमात्र नाती। सोचा था, नाती शादी-ब्याह करेगा, गृहस्थी बसायेगा। फिर उन लोगों को लेकर

वह नये सिरे से जीवन जियेंगी ।

दफ्तर के काम के कारण हर रोज निकलना नही हो पाता था । लेकिन उस दिन थोड़ा वक्त मिल जाने के कारण दफ्तर जाने के पहले सीधे लोकनाथ के घर गया। सोचा, लोकनाथ घर से सवेरे-सवेरे निकल जाता है, मैं निकलने से पहले ही उसे पकड़ूँगा । उसकी नानी अम्मा की बातें उससे कहूँगा । शादी के बारे मे कहूँगा । विवाह करना कोई अन्याय नही है, यही उसको समझाऊँगा ।

लेकिन उसके घर के सामने जाने पर मैं हैरान रह गया ।

देखा, उसके घर के सामने सैकड़ों आदमी चहल-क़दमी कर रहे हैं और चार-पाँच गाड़ियाँ खड़ी हैं ।

"बात क्या है ?" एक आदमी से मैंने पूछा, "यह इतनी भीड़ क्यों है ? क्या हुआ ?"

ड्राइवरनुमा एक व्यक्ति खड़ा था ।

"मेमसाहब बीमार हैं ?" उसने कहा ।

"मेमसाहब ? मेमसाहब कौन ?"

मेमसाहब कौन हैं, इस घर मे कौन-सी मेमसाहब हैं, यह बात मेरी समझ में न आयी। लोकनाथ के पुराने नौकर गिरधारी से मुलाकात हुई । वह बड़ा ही थका-थका-सा दीख रहा था । वह तब रो रहा था । मुझ पर नज़र पड़ते ही उसकी रुलाई का वेग बढ गया ।

"क्या हुआ, गिरधारी ?" मैंने पूछा, "कौन बीमार है ?"

गिरधारी रोता-रोता बोला, "गृहस्वामिनी ।"

"गृहस्वामिनी को अचानक क्या हुआ ?"

गिरधारी ने जो बताया उसका अर्थ यही है कि रात दो बजे गृहस्वामिनी एकाएक बेहोश हो गयी । उसके बाद उनकी चेतना नहीं लौटी है । अभी डॉक्टर आकर देख रहे है... पता नही क्या होगा...?

उसी समय देखा, दो-चार डॉक्टर वसुमती देवी के कमरे से बाहर निकल रहे हैं । उसके साथ लोकनाथ है । मुझे देखते ही लोकनाथ ने आँखों के इशारे से बताया कि वह आ रहा है ।

वसुमती देवी को एक साथ चार-पाँच डॉक्टर देख रहे थे । उनमें से

दो-चार व्यक्ति चले गये। बाकी रह गये और दो-तीन व्यक्ति। डॉक्टरों को गाड़ी तक पहुँचाकर लोकनाथ मेरे पास लौट आया।

उसने पूछा, "कैसे हो ?"

मैंने कहा, "तुम्हारे पास ही आया हूँ।"

"मेरे पास ? मैंने क्या किया है ?"

तब सारी बातें समझा कर कहने की स्थिति नहीं थी। और वसुमती देवी, जिनकी बात पर ही मैं लोकनाथ के पास आया था, स्वयं मृत्यु-शय्या पर पड़ी हुई थीं। मेरी बातों पर ही जिनका भला-बुरा निर्भर करता है, वही जब नहीं देख पा रही है, तो फिर लोकनाथ को वह बात कहने से फायदा ही क्या है ?

"तुम्हारी नानी अम्मा आंतरिक इच्छा थी कि तुम शादी कर लो।"

लोकनाथ ने कहा, जिनकी इच्छा के बारे में तुमने बताया, वह आज जिन्दा रहेगी या नहीं, संदेहपूर्ण है।"

"डॉक्टरों ने क्या बताया ?"

"क्या कहेंगे ! वे कोई जादू तो कर नहीं सकते हैं। डॉक्टरों को सिर्फ मारने की विद्या ही आती है, बचाने की विद्या वे नहीं जानते।"

"छि: छि: ! यह तुम क्या कह रहे हो ? ऐसा कहना अन्याय है।"

लोकनाथ ने इसके प्रत्युत्तर में कुछ भी नहीं कहा। इतने दिनों के बाद मुलाकात हुई है। हालांकि लोकनाथ की तमाम दैनंदिन खबरें किसी-न किसी माध्यम से मेरे कानों में आकर पहुँच जाती है। जिस लोकनाथ के संदर्भ में इतनी बातें, इतनी कहानियाँ सुनता आ रहा हूँ, आज उसकी ओर मैंने गौर से देखा।

मैंने कहा, 'शायद तुम्हें रोके हुए हूँ ?"

लोकनाथ ने कहा, 'तुम मुझे शादी करने की बाबत कहने आये हो, मगर मैं शादी कैसे करूँ ?"

मैंने कहा, 'बात तो ठीक है, नानी अम्मा की यह हालत है ! ऐसे मे उन बातों पर सोचा नहीं जा सकता है।"

"नहीं।"

लोकनाथ ने जैसे एकाएक बहुत कठोर होकर कहा, "नहीं बात,

ऐसी नहीं है। नानी अम्मा बीमार हैं, इससे मैं विचलित नहीं हुआ हूँ। नानी अम्मा मर जायेंगी तो सोचूँगा कि नानी अम्मा कभी थीं ही नहीं। मेरे माँ-बाप मर चुके हैं, इससे क्या कोई हानि हुई है ? बल्कि बहुत-कुछ फ़ायदा ही हुआ है। नानी अम्मा गुज़र जायेंगी तो मुझे फ़ायदा ही होगा।"

मैं चौंक पड़ा। लोकनाथ यह सब क्या कह रहा है !

लोकनाथ को मेरे मन की बातों की आहट लग गयी। वह बोला, "दुनिया में सच सुनना कोई पसन्द नहीं करता है। यहाँ जिसने भी सच्ची बातें बताने की कोशिश की है, सभी ने उसकी ही हत्या कर डाली है। सभी की यह धारणा है कि सच्ची बातें सिर्फ़ किताबों में ही लिखी हुई रहें, सिर्फ़ स्कूल-कॉलिजों में लड़के-लड़कियाँ ही इसे पढ़ा करें।"

उसके बाद एकाएक जैसे उसे याद हो आया कि नानी अम्मा की मृत्यु अभी तक नहीं हुई है। मेरी ओर देखता हुआ बोला, "चलूँ, बाद में तुमसे किसी दिन मिलूँगा।"

मैंने एकाएक उससे कहा, "सरजू नाम की किसी लड़की की नौकरी देने के लिए तुमने विकास को पत्र लिखा था ?"

याद करने में लोकनाथ को जैसे थोड़ी-सी तकलीफ का अहसास हुआ जैसे वह बहुत ही पुरानी घटना हो।

"नाम याद नहीं है," लोकनाथ ने कहा, "तब हाँ, इतना याद है कि एक लड़की को नौकरी दिलाने के लिए जादूगोपाल ने मुझे पकड़ा था। मैंने शायद उसके लिए विकास को पत्र लिखा था। विकास ने उसे नौकरी दी थी ?"

"हाँ, दी थी। लेकिन तुम उसे पत्र नहीं देते तो अच्छा रहता।"

"क्यों ?"

"वह तुम्हें बाद में बताऊँगा। अभी वह सब कहकर तुम्हारा मन खराब नहीं करना चाहता हूँ।"

"क्या कहा ?"

जाते-जाते लोकनाथ तत्काल मुड़कर खड़ा हो गया। "क्या कहा तुमने ?" उसने कहा, "मेरा मन खराब हो जायेगा ? मन खराब करने के लिए बाकी बच ही क्या गया है ? तुम्हारी सरजू या तुम्हारा विकास, यह

बता सकता है ?...या कि महात्मा गांधी, मोतीलाल नेहरू, सी० आर० दास, रामकृष्ण परमहंसदेव, स्वामी विवेकानंद बता सकते हैं ? उन सबों की तसवीरें हमारे ड्राइंग-रूम की दीवार पर टँगी थीं—यह तुम्हें मालूम है ? सभी तसवीरों को तोड़-फोड़कर मैंने चूर-चूर कर डाला है। जानते हो, क्यों किया ? वे सब झूठी बातें कह गये हैं।"

कहते-कहते लोकनाथ के चेहरे का रंग कुछ और ही हो गया। दोनों आँखें जलने लगीं, आँखें और दोनों कान आरक्त हो गये। वह कहने लगा, "सरजू मेरी क्या हानि कर लेगी ?...कितनी हानि कर लेंगी सरजू जैसी लड़कियाँ ? मैंने उससे कहा था—अगर मैं तुम्हें नौकरी दिलाता हूँ तो तुम्हारा सर्वनाश हो जायेगा। जादूगोपाल और निमाई-दा से भी यही बातें कही थीं। मैं जिस किसी का उपकार करने गया, उनका केवल सर्वनाश ही हुआ है। केदार सरकार नाम का एक आदमी हम लोगों की फ़र्म में सब-एकाउटेंट था। उसका भला करने के ख़याल से मैंने उसे चौदह हज़ार रुपये दिये थे। सोचा था, हो सकता है कि यह आदमी फिर रिश्वत न ले। रुपया लेने से वह ज़िन्दा रहेगा। लेकिन उस दिन देखा, नौकरी खोकर वह और भी बड़ा आदमी हो गया है, और एक विशाल गाड़ी ख़रीदी है।"

मैं पहचान गया। "उस लेबर-लीडर केदार सरकार के बारे में कह रहे हो न," मैंने कहा, "वह तो अब हमारे दफ़्तर की लेबर-यूनियन का प्रेसिडेंट है।"

"फिर तुम उसे पहचानते ही हो। अपने ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के स्टाफ़ के लोगों को शान्त रखने के नाते हम उसे दो हज़ार रुपये हर महीने देते थे। यही वजह है कि हम लोगों की फर्म में कभी हड़ताल नहीं हुई। मेरे पिताजी ने ही केदार सरकार की यह बरबादी की थी। केदार सरकार को मेरे पिताजी ने ही रिश्वतख़ोर बनाया था !"

मैं बोला, 'अब केदार सरकार ही सरजू का बॉस है।"

'अयँ !"

"हाँ, सरजू की तनख्वाह अब पन्द्रह सौ रुपये मासिक है। अब उसने सिंथि में एक चार-मंज़िला फ़्लैट बनवाया है। हर महीने उसे तेरह सौ रुपये मकान का किराया मिलता है। बूढ़े माँ-बाप को दमदम की उस बस्ती से

लाकर प्लेट में रखा है।"

लोकनाथ ने क़हक़हा लगाया। उसकी हँसी की आवाज़ पागलों की हँसी जैसी थी। "फिर सचमुच मेरी बात चरितार्थ हुई," वह बोला, "सचमुच उस लड़की का सर्वनाश हो गया! जादूगोपाल को यह मालूम है?"

मैंने कहा, "पता नहीं। जादूगोपाल को मालूम है या नहीं, कह नहीं सकता।"

लोकनाथ बोला, "तुम जादूगोपाल को पहचानते हो न? वैरागन सिनेमा को पीछे वाली पकौड़ी की दुकान का मालिक है। उससे जाकर कह देना, मेरी भविष्य-वाणी अक्षरशः सही उतरी है।"

अकस्मात् गृहस्वामिनी की नौकरानी की चीख सुनायी पड़ी। जैसे वह किसी निर्णीत आतंक से रो पड़ी हो। गिरधारी हाँफता हुआ लोकनाथ के पास आकर खड़ा हो गया। बात बताने में जैसे उसकी ज़बान बन्द हो गयी हो।

लोकनाथ उसके चेहरे की ओर देखता हुआ बोला, "क्या हुआ गिरधारी, गृहस्वामिनी चल बसीं?"

इस बात के उत्तर में लोकनाथ के सामने ही गिरधारी के हृदय का आवेग फूट पड़ा।

लोकनाथ ने कहा, "चलूँ भाई, चारों ओर की दुःख की खबरों के बीच गिरधारी ने एक अच्छी खबर दी। चलूँ, अब श्मशान जाने का इन्तज़ाम करना पड़ेगा। चलूँ।"

मुझसे विदा लेकर लोकनाथ वसुमती देवी के सोने के कमरे की ओर चला गया।

,

कार्त्तिक राय के मकान में यह चौथी मृत्यु थी। वह घर जैसे अतीत की तमाम मौतों का बोझ ढोते-ढोते थककर चूर हो गया था। यही वजह है कि इस बार वसुमती देवी की मृत्यु पर ज़रा भी नहीं रोया।

स्तब्ध विस्मय में डूबा चुपचाप एक ही स्थान पर स्थाणु की तरह

खड़ा-खड़ा निश्वास लेने लगा।

कैसे क्या तो हो गया! 1939 ईसवी के एक सितम्बर से खासी लड़ाई चल रही थी। दुनिया के आदमी कुछ और ही उम्मीद करते हैं और घटित होता है कुछ और ही। एक-एक जमात इस देश से उस देश मे जाकर बम गिरा आती थी। उस देश में साइरन बजता था, लोग ट्रेंच के नीचे, वाइफॉल-वाल की ओट मे छिप जाते थे। फिर जब 'ऑल-क्लीयर' का सिग्नल बजता, सभी बाहर निकल पड़ते थे।

हिरोशिमा के ऊपर भी उस दिन सुबह साढ़े सात बजे उसी तरह के तीन वायुयान दीख पड़े। साइरन बज उठा। नही, वह कुछ नही है। थोड़ी देर बाद ही खतरा दूर होने का भोंपू बज उठा। घड़ी मे तब सात बजकर इकत्तीस मिनट हुए थे।

तीन अदद वायुयान उड़कर उसी ओर जा रहे हैं। पॉल टिबेट्स रेडियो-टेबुल पर जाकर बैठा। मिलिट्री कोड मे खबरों का आदान-प्रदान हुआ। पीछे एक और वायुयान है जिस पर मेजर स्विनी है और बगल मे *नंबर बी० 91।*

सात बजकर पचास मिनट।

रेडियो से आदेश माँगना पड़ा। 'पैसेफ़िक से ऊपर उत्तर-पश्चिम की ओर अभी जा रहे हैं। हम तीन व्यक्ति हैं। मौसम बड़ा सुहावना है। नीचे सब कुछ साफ़-साफ देख रहा हूं...सूचना भेजो, अब हम किधर जायें?'

उत्तर—हिरोशिमा!

घडी मे तब सुबह के सात बजकर इक्यावन मिनट हो रहे थे।

दो महीने। दो महीने से वे लोग इन्तजार कर रहे है कि जापान पर एटम बम गिराया जाये या नही। उसे सोचने के लिए दो महीने का वक्त दिया गया है। लेकिन इस बार युनाइटेड स्टेट्स के कर्त्ता-धर्त्ता विधाता ने आदेश दिया है—बम गिराया जायेगा।

कलकत्ता शहर में भी तब दिन आते थे और चले जाते थे। रात आती थी और चली जाती थी। तब साउथ-ईस्ट एशिया के कमांडर का हेड-क्वार्टर कलकत्ता था। हिरोशिमा में जब आठ बजकर सोलह मिनट हुए, ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के मैनेजिंग डाइरेक्टर संतोष राय के घर में उस

अशुभ मुहूर्त मे एक बच्चे ने जन्म-ग्रहण किया।

एक ओर दुनिया के इतिहास मे जब भीषण-से-भीषण घटना घटित हो चुकी थी, दुनिया के एक दूसरे कोने में तब साउथ-ईस्ट एशिया के कमांड के हेड-क्वार्टर मे नये सिरे से एक-दूसरे काले पहाड़ ने जन्म लिया। हाँ, काला पहाड़ ही है ! काला पहाड़ न होता तो इतने दिनों की कम्पनी, इतने लाभ की कम्पनी के शेयरों को स्टाफ के बीच बाँट क्यो देता ! काला पहाड़ न होता तो इतने बड़े वंश की संतान होकर जादूगोपाल की पकौड़ी की गंदी दुकान मे क्यों बैठता ? मानसतल्ला के एक मेस में जाकर वक़्त क्यों गुजारता ? या कि बेलगछिया के निमाई-शा की चाय की दुकान की गंदी लकड़ी की बेंच पर बैठकर अड्डाबाजी क्यों करता ?

सिथि के चारमंजिले फ्लैट के दो बूढ़ा-बूढ़ी भी यही कहा करते हैं।

"इससे तो हम पहले ही अच्छे थे जी, जब सरजू को नौकरी न मिली थी।"

जब लोकनाथ ने सरजू की नौकरी नहीं लगा दी थी तब सिथि का यह मकान तैयार नही हुआ था। तब वे लोग दमदम कैन्टोनमेन्ट की बस्ती मे वास करते थे। तब उन्हे भरपेट खाना नसीब नहीं होता था। लोग-बाग कहते—विपिन बाबू की लड़की ही एक दिन बाप को बरबाद कर डालेगी।

लड़की तब सवेरे-सवेरे बासी मुंह पान चबाती हुई ट्रेन पकड़कर धंधे की तलाश मे कलकत्ता चली जाती थी और रात ढलने पर वापस आती थी।

विपिन बाबू लड़की को अपने निकट बुलाकर पूछते, "इतनी रात क्यों हुई, बिटिया ?"

सरजू कहती, "नौकरी के लिए कोशिश कर रही हूँ, बाबूजी !"

"नौकरी की कोशिश की जाये तो जल्दी नही लौटा जा सकता है ?"

सरजू कहती, "सभी की खुशामद करते-करते ही समय बीत जाता है। दफ्तरों के दरबान अन्दर जाने नहीं देते हैं।"

'किसी ने कोई उम्मीद दी है ?"

"हाँ बाबूजी, उम्मीद है। जादूगोपाल नाम का एक आदमी है।

वह भी हम लोगों के फरीदपुर का रहनेवाला है। उसने कहा है कि कोई-न-कोई बन्दोबस्त कर देगा। कहा है, एक बहुत बड़े आदमी से जान-पहचान करा देगा।"

"बहुत बड़े आदमी का मतलब ?"

"मतलब यह कि वह एक चिट्ठी लिख दे तो नौकरी मिल जाये।"

"फिर उस भले आदमी से तुम मिल चुकी हो ?"

"मिलूँ तो कैसे मिलूँ. उनसे भेंट होना ही मुश्किल है। दिन-भर वह कलकत्ता की सड़कों पर चहल-कदमी करते रहते हैं। उन्हीं से मिलने के लिए ही उस पकौड़ी की दुकान में बैठी रहती हूँ, हालांकि सुनने में आया है कि हम लोग सभवत: एक साथ ही कॉलेज में पढ़े हैं।"

विपिन बाबू बोले, "यह बात है! फिर चिंता की कोई बात नहीं है।"

लेकिन उसके बाद एक दिन लड़की ने आकर बताया, "उस भले आदमी ने चिट्ठी लिखकर दी है, बाबूजी!"

विपिन बाबू बोले, "किसके नाम से चिट्ठी दी है ? चिट्ठी में क्या है ?"

सरजू बोली, "अपने एक मित्र के नाम से दी है। उसका नाम है विकास सरकार। वह भी नौकरी दे सकते है।"

उसके बाद एक दिन सरजू को नौकरी भी मिल गयी। विपिन बाबू की पत्नी ने मुहल्ले के शीतला के मन्दिर मे जाकर प्रसाद चढ़ाया। उसकी लड़की को नौकरी मिली है, यह खबर भी चारों तरफ फैल गयी। सरजू की देखा-देखी मुहल्ले की सभी लड़कियो ने कलकत्ता की दौड़-धूप शुरू कर दी। सरजू के बदन पर कीमती साड़ी-ब्लाउज आने लगे, कलाई में घड़ी, पैरों में कभी इस रंग के तो कभी उस रंग के चप्पल। एक दिन वह उस सीमा का भी अतिक्रमण कर गयी। आखिर में ट्रेन से आना-जाना बन्द हो गया। किसी-किसी रात विपिन बाबू के टीन के मकान के सामने विशाल गाड़ी आकर खड़ी होती थी। उसी गाड़ी से सजी-सँवरी सरजू उतरती थी। बूढ़े आदमी कहते—'तब सरजू के बदन से शराब की बू आती है!'

विपिन बाबू की नाक में भी एकाध दिन वह बू पहुँचती थी। विपिन

बाबू की पत्नी की नाक में भी ।

माँ कहती, "मुन्नी, तेरे बदन से होमियोपैथी दवा की गंध क्यों निकलती है ?"

"नहीं माँ ! मेरे बदन से तो इत्र की खुशबू आती है। मैंने इत्र लगाया है ।"

उसके बाद उसकी लड़की बैग में रुपया भी लाने लगी । एक दिन पचास, फिर किसी दिन सौ और फिर किसी दिन तीस । "दफ्तर में तुम लोगों को क्या हर रोज तनख्वाह मिलती है ?"

माँ-बाप को कैसा-कैसा तो आश्चर्यजनक लगा ! लेकिन इसके संदर्भ में लड़की से कुछ कहने की इच्छा नही हुई । चाहे जो भी हो, घर में पैसा तो आता है ।

इसी तरह चल रहा था ।

एक दिन एकाएक लड़की ने घर आकर कहा, "माँ, मैंने जमीन खरीदी है ।"

"जमीन खरीदी है—इसका मतलब ?"

"मकान बनाने के लिए जमीन । उसी जमीन पर हम मकान बनवायेंगे ।"

विपिन बाबू ने तम्बाकू पीते-पीते हुक्के को मुँह से हटाया । लड़की की बात सुनकर उनका सिर चकराने लगा था ।

"घर बनवाओगी, इसका पैसा कौन देगा ?" उन्होने पूछा ।

सरजू बोली, "क्यों, पैसा मैं दूंगी ।"

"मकान बनवाने में कितना पैसा लगेगा, मालूम है ?"

सरजू बोली, "चार मंजिला मकान रहेगा, अट्ठाईस कमरे, आठ फ्लैट । डेढ़ लाख रुपये से कम नहीं लगेगा ।"

डेढ़ लाख रुपया ! सर्वनाश की ओर कदम बढ़ रहे हैं !

लेकिन इससे सरजू ने हार नहीं मानी । सचमुच मकान एक दिन बनकर तैयार हो गया। शुभ तिथि और शुभ क्षण देखकर एक दिन गृह-प्रवेश हुआ । विपिन बाबू और उनकी पत्नी उस मकान मे आ गये । मकान देखकर वे अवाक् हो उठे । कहाँ उनका वह फ़रीदपुर का मकान, कहाँ वह

दमदम की बस्ती और कहाँ यह सिथि का चार-मंजिला फ्लैटनुमा मकान !

लेकिन सरजू तब उड़ती हुई संभवतः आसमान की आखिरी हद तक पहुँच चुकी थी । एक दिन काफी रात ढलने के बाद जब वह वापस आयी, तब वह लड़खड़ा रही थी । गाड़ी के ड्राइवर ने उसे कसकर पकड़ा और फ़्लैट मे पहुँचा दिया।

विपिन बाबू लड़की को देखकर हतप्रभ हो गये। बहुत देर की प्रतीक्षा के बाद लड़की जब आयी तब वह ऐसी स्थिति मे थी जिसके बारे मे उन्होंने कल्पना तक न की थी।

सरजू माँ-बाप की ओर देखती हुई रोने लगी।

माँ ने लड़की को छाती से लगा लिया । "तेरी क्या हालत हो गयी, बेटी ? ऐसी हालत तेरी किसने की ? क्यों तूने इस तरह अपनी बरबादी की ?"

तब सरजू को इन बातों का जवाब देने का न वक्त था और न उसमें ताकत ही थी।

विपिन बाबू बोले, "एक काम करो, तुम उसका सिर नीचे झुकाकर बेसिन पर रखो, मैं उसके सिर पर पानी डालता हूँ...सुना है, सिर पर पानी डालने से नशा दूर हो जाता है।"

यही किया गया। विपिन बाबू बारह बजे रात में बालटी में पानी भर-भरकर लड़की के सिर पर उँडेलने लगे। फिर सरजू को थोड़ा आराम महसूस हुआ।

यह सब बहुत पहले की घटना है। कुछ उस किस्म की घटना की तरह जो शुरू में जैसी होती है आखिर में भी वैसी ही। उसके बाद बहुत-सी रातें ऐसी गुजरी है जब कितने ही लोगों के ड्राइवर सरजू को बाँहों में थामकर उतार गये हैं और उसके सिर पर बालटी-पर-बालटी पानी डालना पड़ा है। अब विपिन बाबू और पत्नी इसके अभ्यस्त हो चुके हैं। अभ्यस्त हो चुकने का कारण है चार मंज़िला मकान और बारिश में छत से पानी का न टपकना। और भी कारण हैं—विपिन बाबू में अपनी इच्छानुसार बाजार से मांस-मछली, दही-रबड़ी खरीदने की सामर्थ्य का होना। यह भी क्या कम है ! और कम नहीं है इसीलिए विपिन बाबू छाता लिये छाती

तानकर रास्ते पर निकलते है। सोलह रुपये किलो की दर की एक पूरी हिलसा मछली हाथ में झुलाते हुए रिक्शे पर घर लौटते हैं। पचीस रुपये जोड़े दाम के जूते पहनकर इठलाते हुए सड़क पर पैदल चलते है और फिर कभी-कभी पत्नी को साथ लिये टैक्सी पर बैठकर सिनेमा देख आते हैं।

लेकिन उस दिन अचानक थाने से एक आदमी आया।

"विपिन बाबू घर पर हैं—विपिनचंद्र सिकदार ?"

विपिन बाबू बाहर निकले और बोले, "मैं ही हूँ। मेरा नाम विपिन-चंद्र सिकदार है। आपको क्या काम है ?"

"मैं थाने से आ रहा हूँ। थाने के बड़े बाबू ने मुझे भेजा है। बड़े बाबू का हुक्म है कि आप अभी तुरन्त उनसे थाने मे मिलें।"

विपिन बाबू की छाती धड़कने लगी। "थाने में क्यों जाऊँ ? मैंने क्या किया है ?"

"वह मुझे मालूम नही, आपको अभी तुरन्त चलना होगा।"

विकास सरकार ने कई दिन बाद ही मुझे टेलिफ़ोन किया। सोचा, हो सकता है कि लोकनाथ की खबर बताये। उसने सोचा है कि लोकनाथ की नानी अम्मा वसुमती देवी की मृत्यु के समाचार से मैं अवगत नहीं हूँ।

विकास की आवाज सुनते ही मैं बोला, "वसुमती देवी का देहावसान हो गया है, यह मुझे मालूम है।

विकास को आश्चर्य हुआ। उसने कहा, "तुम्हें कैसे मालूम हुआ ? अभी तक अखबारों में यह समाचार छपा तक नही है।"

मैंने उसे सारी बातों का ब्योरा दिया। विकास ने कहा, "मगर एक दूसरी खबर निकली है। डॉक्टर बेयर्ड, आँखों के डॉक्टर कलकत्ता आये हैं। यह खबर देखी है ?"

विकास की बात पर मैंने अखबार खोलकर देखा। बहुत खोजने के बाद वह खबर मिली। पिछले पन्ने के एक कोने मे वह खबर छपी थी—'डॉक्टर बेयर्ड नामक एक विख्यात आँखों के सर्जन एक नामी मारवाड़ी की आँखों का ऑपरेशन करने हिन्दुस्तान आये हैं। वह उस व्यक्ति का

ऑपरेशन करने के बाद कलकत्ता से स्वदेश लौट रहे थे, लेकिन ऑटो इंजीनियरिंग वर्क्स के भूतपूर्व मैनेजिंग डाइरेक्टर लोकनाथ राय ने अपनी लड़की की आँखों का ऑपरेशन कराने के लिए उन्हें कलकत्ता में दो दिनों तक रुकने के लिए राजी कर लिया है।'

खबर छोटी थी। यह खबर कोई पढ़े, समाचार-पत्र का संपादक शायद यह नहीं चाहता था। उस समाचार में जो गलत तथ्य था उसके संशोधन के महत्त्व पर समाचार-संपादक ने ध्यान नहीं दिया था। लगा, इसमें जरूर ही कोई-न-कोई गड़बड़ है।

विकास बोला, "लोकनाथ के लड़की कब हुई? उसकी तो शादी भी नहीं हुई है!"

बात सोचने योग्य थी। इसके बारे में किससे बातचीत की जाये! वसुमती देवी की मृत्यु के बाद किसी खबर का मैंने पता नहीं लगाया था। और खबर का पता लगाऊँ तो किससे? लोकनाथ घर पर थोड़े ही रहता है! घर पर रहने वाला जीव वह नहीं है। कहाँ पैरागन सिनेमा के पीछे किसी जादूगोपाल की पकौड़ों की एक दुकान है। वहाँ जाने में भी घृणा का अहसास होता है। कितनी गंदी दुकान है! या फिर जाना होगा मानसतल्ला लेन के किसी मेस में या फिर बेलगछिया।

सोचते-सोचते एकाएक याद हो आया।

मैंने पूछा, "तुमने जिस लड़की को नौकरी दिला दी थी वह लड़की कहाँ है? मिस सिकदार या कुछ ऐसा ही नाम है। उससे पूछ कर देखो न! हो सकता है कि उसे मालूम हो।"

विकास बोला, "अरे वह सरजू? उसने तो बहुत पहले ही नौकरी छोड़ दी है...।"

"यह क्या! आज के बाजार में नौकरी छोड़ दी? क्यों? खर्च नहीं चल रहा था?"

विकास बोला, "नहीं-नहीं, हम लोग तो उसे छः सौ रुपये वेतन देते थे।"

"छः सौ रुपये? छः सौ देते थे? इतना रुपया क्यों देते थे?"

'वह भई, पसन्द-नापसन्द की बात है। हमलोगों का प्राइवेट सेक्टर है,

जिस तरह तनख्वाह में बढ़ोतरी करता है, कम भी उसी अनुपात में कर देता है। इसके बारे में आला कमान की निगाह में बात नही लायी जा सकती है।"

"साधारण आदमी की चिट्ठी पर ही एकबारगी छः सौ रुपया तनख्वाह?"

"अरे, पहले-पहल ही क्या छः सौ मिलना शुरू हुआ। एक सौ दस से स्टार्ट हुआ था। मगर पक्की लड़की है, हमलोगों की आंखो में धूल झोंककर आसमान मे पहुँच गयी। धूल झोंककर एक डाइरेक्टर के फंदे में फँसी। तभी से उन्नति और पतन की शुरुआत हुई।"

"इसका मतलब?"

"उसका वहाँ भी निबाह नही हुआ। लेबर-लीडर केदार सरकार को पहचानते हो न, वह हमलोगों के दफ्तर की यूनियन का भी प्रेसिडेंट है। सरजू सिकदार डाइरेक्टर को छोड़कर उसके कंधे पर सवार हुई। उसके बाद इंडिया के टॉप 'कामधेनुओं' से मिलना-जुलना शुरू हुआ। सुना है, अब वह एक चार-मंजिले मकान की मालकिन है।"

"यह सब कैसे हुआ?"

विकास सरकार ने कहा, "जिस तरह हमलोगों का हुआ, उसी तरह।"

मैंने कहा, "मगर चार-मंजिला तो दूर की बात है, एक-मंजिला मकान तो बना ही नहीं पाया हूँ।"

"हम नही बना पाये है, इसका कारण है हमलोग दुर्भाग्यवश पुरुष होकर पैदा हुए हैं। इस युग मे हम लड़की बनकर पैदा हुए होते तो हमलोगों का भी उस तरह का चार-मंजिला, पाँच-मंजिला मकान बन जाता...।"

और विकास ने एक कहकहा लगाया। उसके बाद बोला, "ठीक है, बाद में फिर बातें होंगी।"

मैंने कहा, "अगर संभव हो तो लोकनाथ की लड़की की आंखो के ऑपरेशन के बारे मे एक बार पता लगाना...।"

यह बात मैंने विकास से कही जरूर, लेकिन अखबार पढने के बाद मेरी चिन्ता की कोई सीमा नहीं रही। यह क्योंकर हुआ? अगर हुआ होता तो नानी अम्मा वसुमती देवी को क्या मालूम नही होता? किसी-न-किसी से हम भी सुन चुके होते। लोकनाथ को हम छात्र-जीवन से ही देखते आ रहे

हैं। जीवन के प्रारंभिक काल में वह हम लोगों से हिलता-मिलता नहीं था। कारण था, उसके बनिस्बत हमारी आर्थिक स्थिति अत्यन्त तुच्छ थी। बाद में वह हम लोगो से इसलिए नही मिलता कि हम लोग बड़े आदमी हो गये थे। दरअसल बड़े आदमी हम किस परिप्रेक्ष्य में हो गये थे, हमारी समझ मे नही आ रहा था। घटनाक्रम से हम बहुत खुशामद और कोशिश-पैरवी करने के बाद टेरेलिन-टेरिकॉट पहनकर, हाथ में सिगरेट का टिन लिये, *गाड़ी पर चढ़कर उच्चवर्गीय व्यक्तियों के रूप में घूमते-फिरते* हैं। बाहर हमें अपनी नौकरी की ख्याति और टीमटाम बनाये रखनी पड़ती है और इसीलिए हम धनी-मानी समझे जाते है। लेकिन हमें मालूम है कि हमलोग क्या हैं। अपने मुवक्किलों के पैसे से हम शराब पीते हैं और बदले मे हम उन्हें कुछ ठेके दिला देते हैं और यही वजह है कि बगैर खर्च किये हम आधुनिक होने का गौरव अर्जित करते है। इसीलिए *लोकनाथ जैसे व्यक्ति की निगाह में भी हम वर्जनीय हैं। यही कारण है* कि जब हम दफ्तर की गाड़ी पर चढकर सबको निचले तबके का समझते थे, पार्टी के पैसे से चौरंगी और पार्क स्ट्रीट के शीत-ताप-नियंत्रित बार में बैठकर शराब पीते-पीते टालीगंज, बेहला और बेलियाघाट की बातें बिलकुल भूल जाते थे, लोकनाथ तब हमें घटिया आदमी समझता था और टालीगंज, बेलगछिया, बेलियाघाट की सड़कों पर चहलकदमी करता *हुआ वहाँ के लोगों से एकाकार होने की कोशिश करता था।*

बाद में सुनने को मिला कि बेयर्ड ने भी वकुल को देखकर पहले पूछा, "यह लड़की तुम्हारी कौन होती है ?"

लोकनाथ ने कहा, "मान लीजिये, मेरी लड़की है। या कि मेरी लड़की से भी उसका स्थान ऊँचा है।"

"इसका मतलब ? लड़की से भी इसका स्थान ऊँचा है—इसके मायने ?"

लोकनाथ ने स्वीकार किया, "नही डॉक्टर, मैं खुद अनमैरिड हूँ, मेरे लड़की कैसे होगी ?"

"फिर यह कौन है ? इसका फादर कौन है ?"

लोकनाथ ने कहा, "इसका फ़ादर है। उसका नाम है अजय सरकार।"

"उससे तुम्हारा क्या रिलेशन है ?"

"नो रिलेशनशिप। कोई अपनापा नहीं है।"

डॉक्टर बेयर्ड अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के डॉक्टर है। आँखों के ऑपरेशन के लिए उन्हें सारी दुनिया का चक्कर लगाना पड़ता है। उनकी गति-विधि दुनिया के हर स्थान में है। पहले वह लोकनाथ से मिलने के लिए तैयार ही नहीं हुए। होटल के रिसेप्शनिस्ट ने जब फोन किया तो वह बोले, "मुझे वक्त नहीं है, मैं अभी इंडिया से चला जाऊँगा।"

लेकिन लोकनाथ निराश नहीं हुआ।

उसने सूचना दी, "मैं आपका सिर्फ पाँच मिनट समय लूँगा...।"

अंततः साहब राजी हुए और बोले, "ऑलराइट, कम टु माई रूम।"

कमरे मे जाने के बाद साहब ने जब सुना तो बोले, "यह कौन है ? दिस गर्ल ?"

लोकनाथ ने कहा, "मान लीजिए कोई नहीं है। उसका भी अपना कोई नहीं है। मैं इसका कोई नहीं हूँ। दुनिया में हर आदमी का हर कोई अपना नहीं होता है।"

साहब झुँझला उठे। "वैल, इतनी बातों का जवाब देने का मेरे पास वक्त नहीं है, मैं अभी इंडिया छोड़कर चला जाऊँगा। मेरा प्लेन चार घंटे के बाद एयरपोर्ट से रवाना होगा।"

लोकनाथ ने साहब के सामने हाथ जोड़ते हुए कहा, "दया करके इस लड़की की आँखों का आप ऑपरेशन कर दें। इसके लिए मैं जिन्दगी-भर आपका ग्रेटफुल रहूँगा।"

डॉक्टर बेयर्ड बोला, "मेरे पास वक़्त नहीं है।"

"आप वक़्त निकालें ! इस ब्लाइंड गर्ल के लिए आप थोड़ा वक़्त निकालें !" "लेकिन सारे वर्ल्ड के ब्लाइंड पर्सन्स मेरे लिए वेट कर रहे हैं। मैं यहाँ से नैरोबी जाऊँगा। वहाँ ऑपरेशन करने के बाद लेबनान फिर वहाँ से हागकाग। उसके बाद टोकियो। टोकियो में तीन दिन ठहरना है।"

साहब को दूर-दूर का चक्कर लगाना है। उनके ढेरों कार्यक्रम है। दुनिया के तमाम लोगों को रोशनी की जरूरत है। सभी रोशनी की माँग कर रहे हैं। हम सब रोशनी का इन्तजार कर रहे हैं। हमें रोशनी दो।

गाड़ी तो वे सोचते हैं कि उनके पास आँखे है। लेकिन आँख रहने से ही देखना क्या आसान है, डॉक्टर? उन लोगों के लिए रुपया-पैसा ही आँख है, रुपया-पैसा ही उनकी दृष्टि है, उनका दर्शन है। लेकिन वे जान नहीं पाते हैं कि वे अंधे है! वे क्योंकि अंधे हैं, इसलिए वे समझ नही पाते हैं कि वे जो देख रहे है वह संपूर्ण देखना नही है, आंशिक रूप मे देखना है। अंश को देखकर वे पूर्ण को देखने का भान करते है। इसीलिए उनका सब देखना ग़लत देखना है। मैं वैसी दृष्टि चाहता हूँ, जिसे पा लेने के बाद मैं वह दृश्य भी देख पाऊँगा जो दृष्टि के परे हैं...।"

डॉक्टर बेयर्ड ने अब लोकनाथ की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा।

"एकाएक यह सब बात सुनकर तुम्हारे मन मे कैसे आया? ऐसा तो होता नही।" डॉक्टर ने पूछा।

लोकनाथ बोला, "डॉक्टर, एक किताब पढ़ने के बाद मन में यह आया।"

"किताब?...कौन-सी किताब?"

"हिरोशिमा पर बम गिराने के संदर्भ मे एक किताब है। पब्लिशरों ने उस किताब को आउट ऑफ प्रिंट कर दिया है। अब वह छप नहीं रही है, छपेगी भी नही।"

"क्यों, अब क्यो नही छप रही है?"

लोकनाथ बोला, "मालूम नही। फिर भी लगता है, भय के कारण।"

"भय किस बात का?"

"भय यही कि उस पुस्तक को पढ़कर आज की जेनरेशन को पता चल जायेगा कि दुनिया के आदमी की आँखों से रोशनी अदृश्य करने के ज़िम्मेदार कौन है। ट्रूमैन, चर्चिल और स्टालिन को वे घृणा की दृष्टि से देखेंगे।"

डॉक्टर बेयर्ड ने कोई उत्तर नही दिया। एक अजीब नौजवान के सामने बैठकर जैसे नयी पीढ़ी की बेचैनी को थोड़ा-बहुत समझा।

"ठीक है," डॉक्टर बोले, "मैं अभी तुरन्त अपना जाना कैंसल कर देता हूँ लेकिन मेरा चार्ज तुम दे पाओगे? मेरी फीस थ्री थाउज़ेन्ड डालर्स है।"

लोकनाथ बोला, "दूंगा। आप जो चाहेंगे वही दूंगा।"

"ठीक है, आज ही व्यवस्था किये देता हूँ। तुम पेशेंट को अपने साथ लेकर पी० जी० हास्पिटल के डॉक्टर सिन्हा के पास चले जाओ। मैं टेलिफोन कर देता हूँ। हि विल अरेंज एवरी थिंग।"

"थैंक्यू, डॉक्टर!"

और लोकनाथ उठकर चल दिया।

सिंथि थाने के ओ० सी० को मेज़ पर रखे टेलिफोन की घंटी घनघना उठी।

"हैलो! ओ० सी० स्पीकिंग।"

लाल बाज़ार पुलिस-हेड क्वार्टर्स का टेलिफ़ोन था। बहुत ही ज़रूरी।

"यस सर!"

"मिस सिकदार आपके लॉक-अप में बंद है?"

आई० जी० की आवाज़ थी।

"हाँ, सर! मिस सिकदार मेरे ही थाने में बन्द है, सर!"

"उसे अभी तुरन्त रिहा कर दें, तुरन्त।"

"वेरी गुड, सर! ऑल राइट, सर!"

इतना कहते ही एक बात उसे याद हो आयी।

"सर, मैंने उसके फ़ादर को अभी तुरन्त ड्यूटी को भेजकर स्टेटमेंट लेने के लिए बुला भेजा है। वह आयेंगे तो उनसे क्या कहूँ?"

"बुलाकर अच्छा ही किया है। उनकी लड़की को उन्हीं के हाथों सुपुर्द कर दीजिये। एक टैक्सी बुलवा लीजियेगा जिससे किसी को इज़्ज़त में बट्टा न लगे। ध्यान रखियेगा।"

इस तरफ़ सिंथि थाने के ओ० सी० ने रिसीवर रख दिया। रख तो दिया ज़रूर, लेकिन नौकरी से उसे घृणा-सी हो गयी। अन्तर्राष्ट्रीय स्मगलिंग पकड़ने के कारण जहाँ उसे पारितोषिक मिलना चाहिए वहाँ उसे अपमान का घूँट पीना पड़ेगा। पुलिस-अफ़सर के लिए इससे बढ़कर लज्जा की बात और क्या हो सकती है! छिः छिः! ओ० सी० को अपने-आप से लज्जा का बोध हुआ। स्टाफ़ को मुँह दिखाने में भी लज्जा का अनुभव

हुआ। उसने एस० आई० बैनर्जी को बुलाकर कहा, "बैनर्जी, लॉक अप खोलकर मुजरिम को रिहा कर दीजिये।"

"क्यों ?" एस० आई० बैनर्जी चिहुँक उठा।

"आई० जी० का ऑर्डर है। अभी टेलिफोन आया था।"

"और मुजरिम के बाप को स्टेटमेंट लेने के लिए जो बुलाया गया था ?"

"आदर-सम्मान से बिठाकर संदेश-रसगुल्ला, पान-सिगरेट से उनकी खातिर करने का हुक्म मिला !"

"आप क्या कह रहे है, सर ?"

"और क्या कहूँ ! देख रहा हूँ, अब नौकरी छोड़कर हिमालय चला जाना पड़ेगा। इसके बाद जब वैगन-ब्रेकर नही पकड़े जायेंगे तो हेड-क्वार्टर्स से लंबा और कड़ा नोट आयेगा।"

एस० आई० बैनर्जी ने इस मामले को छः महीने तक जाल बिछाने के बाद पकड़ा था। वह धम से कुरसी पर बैठ गया। "इससे तो बेहतर था कि हम लोग शचीदास की तरह रिश्वत लेते। इतने दिनों में बालीगंज मे दो मकान बनवा लिये होते। यह तो देख रहा हूँ कि बदनामी भी हुई और ऊपर से डाँट-डपट। लेकिन ऐसा क्यों हुआ, सर ? आई० जी० ने तो कभी ऐसा नही किया था...।"

ओ० सी० बोला, "अरे, आई० जी० करें तो क्या करें ! इसके पीछे आई० जी० का बाप जो है।"

"आई० जी० का बाप !"

"हाँ, होम-मिनिस्टर ने खुद आई० जी० को टेलिफोन किया है। जाइये, मुजरिम को रिहा कर दीजिये।"

उसी समय हेड-कॉन्स्टेबल के साथ विपिन सिकदार थाने मे आये। भय के कारण उसका चेहरा बुझा-बुझा-सा था, जैसे बकरे को बलिवेदी पर चढाने के लिए काली-मन्दिर मे लाया गया हो। वह समझ नहीं पा रहे थे कि उन्होने कौन-सा अपराध किया है।

वे ज्योंही थाने के अन्दर आये, थाने का अफ़सर उठकर खड़ा हो गया।

"बैठिये, बैठिये, मिस्टर सिकदार !"

विपिन सिकदार को घनघोर आश्चर्य ने अभिभूत कर लिया । मैंने ऐसा कौन-सा पुण्य किया कि पुलिस मेरा इतना सम्मान कर रही है !

वह कुरसी पर बैठ गये । लेकिन बैठने पर भी उन्हें चैन न मिला । "मुझे आपने बुलाया था ?"

ओ० सी० ने कहा, "आपकी लड़की मिस सिकदार को पकड़कर हमारी हिफाजत में रखा गया है । उन्हें आपको हैंड ओवर कर दूंगा ।"

"मेरी लड़की को ?...सरजू को ? क्यों ? वह यहाँ कैसे आयी ?"

ओ० सी० ने कहा, "बहुत लंबी-चौड़ी बात है, विपिन बाबू ! आपको अपनी लड़की से ही सब पता चलेगा । एंटि-सोशल लोगों की एक जमात उसे जान से मार डालती, अगर हम उसका उद्धार कर अपनी हिफ़ाजत में ने ले आये होते ।"

"इसका मतलब ?"

तब तक सरजू सिकदार रेशमी साड़ी, गहने और धूप के चश्मे से जगमगाती अपने बाप के सामने आकर उपस्थित हुई ।

"अब तक टैक्सी नहीं बुलवायी ?"

उधर दिल्ली, कलकत्ता और बंबई में ट्रंक-काल चल रहा है । कोई किसी एक से बात करना चाहता है, कोई किसी दूसरे से । सब-के-सब अर्जेन्ट कॉल हैं । एक्सप्रेस अभी देना पड़ेगा । वेरी-वेरी अर्जेन्ट । 'येस' सिथि लॉक-अप । नो, मिनिस्ट्री फॉल करा दूंगा । इमिडियेटली रिलीज़ करना पड़ेगा । मगर व्हाई, क्यों हमारे आदमी को ऐरेस्ट किया गया ? मैं अभी तुरन्त मिल में स्ट्राइक करा दूंगा । इससे मेरी कोई हानि नहीं होगी, हानि इण्डिया की होगी । इण्डिया गवर्नमेंट का फ़ॉरेन एक्सचेंज नष्ट होगा । नो, नो, मैं अभी रिलीज़ चाहता हूँ । अन-कंडिशनल रिलीज़ । इसके पहले क्या आप लोगों ने कितने ही गोल्ड-स्मगलरों को रिलीज़ नहीं किया है ? फिर सी० बी० आई० बड़ा है या इण्डिया को होम मिनिस्ट्री ? मुझे मालूम है कि किनका-किनका पैसा स्विस बैंक में जमा है । सिर्फ़ मुझे ही नहीं, होम मिनिस्ट्री को भी मालूम है । जिन-जिनको फ़ॉरेन-ट्रेड लाइसेंस दिया गया है उनमें से हरेक ने स्विस बैंक में पैसा रखा है । उस जमात में

एक सौ सड़सठ इंनडस्ट्रियलिस्ट है । उनमे से किसी को भी सी० बी० आई० नही पकड़ती है...।

एकाएक चारों तरफ़ लाल वत्ती जलते ही सब-कुछ शात हो गया ।

डॉक्टर वेयर्ड ऑपरेशन-थिएटर मे ऐप्रन पहनकर घुसे हैं । कलकत्ता मे यह उनका दूसरा ऑपरेशन है । अखबारो मे यह समाचार पहले ही छप चुका है । अनेकों देखने आये है । बहुत-से आदमी सिर्फ़ डॉक्टर का चेहरा ही देखने आये है । अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति का मनुष्य है । जिस देश से तीन व्यक्ति हिरोशिमा की ओर बम गिराने निकले थे, उसी देश का एक व्यक्ति ऑपरेशन-थिएटर में घुसा है । उनके साथ कई नर्स है ।

केदार सरकार उस समय भी ट्रंक-काल से बातचीत किये जा रहा है, "आपको तो मालूम ही है, हम लोग अगर हड़ताल का आह्वान करें तो किसी में भी यह सामर्थ्य नहीं कि हड़ताल रोक दे ।"

दिल्ली की ट्रंक-लाइन से तब बड़े ही धीमे स्वर में आवाज़ आ रही थी, "नही-नहीं, कृपया ऐसा न करायें, मिस्टर सरकार !"

केदार सरकार ने कहा, "लेकिन बिना कराये उपाय ही क्या है ? आप लोग बिना कहे-सुने हम लोगों की पार्टी के आदमी को ऐरेस्ट करेंगे तो हम हड़ताल के अतिरिक्त क्या कर सकते हैं ?"

"लेकिन हड़ताल करने से किसको फायदा होगा ? इससे तो साधारण गरीब आदमी की ही हानि होगी ।"

"देखिए, गरीब आदमी के लाभ-हानि की बातें हम आपके मुंह से नहीं सुनना चाहते हैं । आप लोगों को इस तरह की बातें करना शोभा भी नही देता ।"

"खैर, जो हो, मैंने वेस्ट बंगाल के होम-सेक्रेट्री को ऑर्डर दे दिया है।"

"क्या ऑर्डर दिया है ?"

"आप पता लगायेंगे तो मालूम हो जायेगा । मिस सिकदार को इमिडियेटली रिहा कर देने को कहा है । फिर हड़ताल के बारे में आपने क्या डिसिज़न लिया ?"

केदार सरकार बोल उठा, "देखिए, मिस सिकदार से बिना मिले हम इस विषय में कोई डिसिजन नहीं ले सकते हैं...।"

इतना कहकर उसने टेलीफ़ोन का रिसीवर रख दिया।

उसी क्षण लालबत्ती बुझ गयी। ऑपरेशन थियेटर का सदर दरवाज़ा खुलते ही डॉक्टर बेयर्ड बाहर निकल आये। अब हर कोई रोशनी देख पायेगा। अब किसी के लिए भय की बात नहीं है। डॉक्टर बेयर्ड ने एप्रन खोलकर स्वाभाविक पोशाक पहन ली। उसके बाद अस्पताल के पोर्टिको में गाड़ी आकर ज्यों ही खड़ी हुई, जाकर गाड़ी में बैठ गये।

"होटल!" डॉक्टर ने कहा।

आटो इंजीनियरिंग वर्क्स के मालिक का इतने दिनों का पुराना मकान है। उस ज़माने में कात्तिकराय ने बड़े शौक से यह मकान बनवाया था। साहबी कंपनी के ठेकेदारों से मकान तैयार करवाया था। वसुमती देवी स्वयं आकर देख-रेख करती थीं।

उसके बाद इसी मकान में कात्तिक राय की मृत्यु हुई। सिर्फ़ कात्तिक राय की नहीं बल्कि एक-एक कर कई व्यक्तियों की मृत्यु हुई। यहीं विलायत से संतोष राय की लाश लाकर रखी गयी थी और उसके बाद लोकनाथ की माँ चल बसी। कात्तिक राय की एकमात्र संतान। और सबसे आखिरी मृत्यु थी वसुमती देवी की। लेकिन यहाँ क्या केवल चार व्यक्तियों की मृत्यु हुई है? और भी कितने ही महापुरुषों की यहाँ मृत्यु हुई है। यहीं ईसामसीह, बुद्धदेव, महात्मा गांधी, सुकरात, रामकृष्ण परमहंसदेव, मोतीलाल नेहरू, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सुभाषचंद बोस की मृत्यु हुई थी। सभी के सिर पर जूते मारकर लोकनाथ ने पैरों से रौंद डाला है। उन्हें तोड़-फोड़कर चूर-चूर कर दिया है, तहस-नहस कर दिया है।

आज उसी मकान की शक्ल कुछ और ही तरह की हो गयी है। बाहर *की दीवारों का पलस्तर जगह-जगह उखड़ गया है।* पहले साल में दो बार मरम्मत करायी जाती थी। वसुमती देवी के ज़माने से ही यह सब बंद हो *गया है।* जो आदमी घर को गिरवी रखने के लिए तैयार हुआ था, उसने घूम-फिर कर सब-कुछ देखा। लगा, उसे बहुत ही पसंद आया।

वह एक व्यवसायी आदमी है। सिनेमा से संबद्ध है। हिंदी फिल्म मँगाकर दिखाता है। लेकिन जो लाभ होता है उसे सिनेमा में नहीं लगाता है। उसका ज्यादातर हिस्सा लोहा और इस्पात के शेयरों में लगाता है। वह फटका भी खेला करता है। फिर छोटी-मोटी अचल संपत्ति अगर सस्ते में मिल जाती है तो उसे मँहगे ब्याज पर गिरवी रख लेता है।

उसने कहा, "मेटिरियल सब फ़र्स्ट क्लास हैं।"

लोकनाथ ने कहा, "मैं यह सब नहीं पहचानता हूँ कि कौन-सा फ़र्स्ट क्लास मेटिरियल है और कौन-सा थर्ड क्लास। मुझे रुपये की निहायत ज़रूरत है, इसलिए आपके पास गिरवी रख रहा हूँ। बैंक से मिलने वाला नहीं है।"

"आपको एकाएक रुपये की क्या ज़रूरत आ पड़ी?"

"एकाएक ही ज़रूरत आ पड़ी है। सो भी आज रात तक ही चाहिए... रात दस बजे तक।"

"यह क्या? फटका खेलना है क्या? हम लोगों को इसी तरह बीच-बीच में रुपये की ज़रूरत पडती है तब हमें हुंडी पर दस प्रतिशत ब्याज पर रुपया लेना पड़ता है।"

लोकनाथ बोला, "आप जो भी ब्याज माँगियेगा, दूँगा। मुझे अभी तुरंत रुपये की ज़रूरत है...।"

"लेकिन एक बात। मेरे पास कुछ दो नंबर के रुपये हैं।"

लोकनाथ समझा नहीं। उसने पूछा, "दो नंबर का मतलब?"

"दो नंबर माने काला धन।"

लोकनाथ बोला, "मैं काला-गोरा नहीं समझता हूँ। मुझे अभी रुपया चाहिए। जितना भी ब्याज लगे, ले लीजियेगा...।"

वही बात पक्की हुई। दस्तावेज उसके पास ही थी। वह सब लेकर सीधे पार्टी के ऑफ़िस मे जाना पड़ा। हिंदी फिल्म का व्यवसाय है। सिनेमा हाउस है। सामने दस्तावेज तैयार हुई। उस आदमी ने कहा, "हम लोगो के कारोबार मे जो नियम चालू है, उसी नियम को रख रहा हूँ। यह देखिए, आपको तोस हज़ार दे रहा हूँ, लेकिन लिखा हुआ है चालीस...!"

लोकनाथ स्टंप पर हस्ताक्षर करता हुआ बोला, "आप जो चाहें लिखें

मुझे कोई आपत्ति नहीं है ।"

दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करके और रुपया गिनकर लोकनाथ उठकर खड़ा हुआ। उसने अपना कर्तव्य किया है। इससे ज्यादा वह कुछ नहीं चाहता है। तब सारा कलकत्ता शहर जुलूसों से काँप रहा था। सभी को सब कुछ चाहिए। हरेक को माँगें पूरी करनी हैं। सभी को अपने-अपने आवेदन प्रस्तुत करने हैं। अन्यथा अनंतकाल तक क्रांति चलती रहेगी। इसके अतिरिक्त माँग पूरी करने से ही क्रांति थम जायेगी, ऐसी बात नहीं है। यह क्रांति अब चली है तो अनादि, अनंत, अनागत काल तक चलती रहेगी। अभी काम स्थगित रहे, अभी प्रोडक्शन रहे, अभी ट्राम, ट्रेन, वायुयान सभी रुके रहें। वह सब न होगा बाद में किसी दिन चालू होंगे। लेकिन अभी क्रांति चले। बोलो—'क्रांति अमर हो। हम लोगों की जान भले ही चली जाये, लेकिन क्रांति अमर रहे। इन्क़लाब : ज़िन्दाबाद।'

डॉक्टर वेयर्ड उस वक़्त बैठे-बैठे लोकनाथ का इन्तज़ार कर रहे थे।

उन्होंने रुपये लिये और उन्हें गिनकर देखा। उसके बाद उन्हें पोर्टफ़ोलियो के अन्दर रखा और लोकनाथ की तरफ एक कार्ड बढ़ा दिया।

"हियर इज माई एड्रेस—इसी पते पर सूचना देना कि रोगी की तबीयत कैसी है।"

लोकनाथ उठकर खड़ा हुआ और हाथ मिलाया। तब उसके पास खड़े रहने का वक़्त नहीं था। उसे बहुत दूर जाना है, चौरंगी से उत्तर कलकत्ता पार करके सबर्बन म्युनिसिपैलिटी के सिधु-ओस्तगार लेन। वहाँ छपरे ज़िले का कालिकाप्रसाद हर रोज की तरह सीढ़ी लेता हुआ आयेगा और रोशनी जला देगा। बगल के एक-मंज़िले मकान की खिड़की पर बैठी एक लड़की रास्ते की ओर ताकती हुई आनंद से बेबस हो जायेगी। 'रोशनी वाले...ओ रोशनीवाले!' कहकर वह पुकारेगी।

लेकिन उस दिन बकुल की आँखों पर पट्टी बँधी थी। डॉक्टर सिन्हा निर्धारित दिन पर आकर पट्टी खोल जायेगा। अजय और रानू उसी दिन की प्रतीक्षा बेकरारी के साथ कर रहे हैं।

लड़की कहती है, "माँ, मेरी आँख नहीं खोलोगी ?'

रानू कहती है, "और दो दिन धीरज रखो। डॉक्टर साहब आकर

तुम्हारी आँखों की पट्टी खोल जायेंगे ।"

"पट्टी खोलने से मैं सब-कुछ देख पाऊँगी ?"

"हाँ, सब-कुछ देख पाओगी ।"

"तुम्हें देख पाऊँगी ?"

"हाँ ।"

"बाबूजी को ?"

"हाँ, बाबूजी को भी देख पाओगी ।"

"चाचाजी को ?"

"हाँ ।"

"सब, सब-कुछ देख पाऊँगी ?"

हाँ, जिस दिन दुनिया से हिंसा दूर हो जायेगी, जिस दिन से एक दूसरे को प्यार करने लगेगा, एक दूसरे के दुःख से विचलित हो उठेगा, किसी के प्रति किसी के मन मे आक्रोश नही रहेगा, कोई किसी को नहीं ठगेगा, उस दिन तुम सभी को देख पाओगी । तुम्हारी दृष्टि उस दिन निर्मल होगी, अपना पथ तुम स्वयं ही देख लोगी । तब तुम्हें पकड़कर बिठाना नहीं होगा ।

'माँ, आज रोशनी वाला आया था ?"

"हाँ, वह तो हर रोज आता है ।"

"मेरे बारे में पूछताछ की थी ?"

"हाँ, मैंने उससे कहा है कि तुम्हारी 'बहन जी' की आँखों का ऑपरेशन हुआ है । जिस दिन उसकी पट्टी खुलेगी उन दिन उसे फिर खिड़की पर बिठा जाऊँगी। उस दिन वह तुमको देखते ही फिर से पुकारने लगेगी—रोशनीवाले, ओ रोशनीवाले !"

उसके बाद रात और अधिक गहरा गयी । अकस्मात् सिधु-ओस्तागर लेन और-और रातों की तरह शोर-गुल से भर उठा । बम फटने लगे। कालिका-प्रसाद ने इतने कष्ट से जितनी रोशनियाँ जलायी थी वे फटाफट बुझ गयीं । और तमाम सिधु-ओस्तागर लेन, तमाम वराहनगर, तमाम कलकत्ता,

तमाम हिंदुस्तान, तमाम दुनिया अँधियारे में डूब गये। एक ही क्षण में तमाम आदमी अंधे हो गये।

उसी क्षण हिरोशिमा के सर पर तीन हवाई जहाजों ने मँडराते हुए बम बरसाये—क्लिक...क्लिक.. क्लिक...!

ट्रूमैन तब डिनर खा रहा था। वाशिंगटन में तब रात के आठ बजे थे।

अचानक कैप्टेन फ्रैंकलिन एच० ग्राहम ने आकर सैल्यूट किया।

"सर, मैसेज !"

खाते-खाते ही प्रेसिडेंट ने आँखें उठायीं। "मैसेज क्या है ?"

कैप्टेन ने उस संवाद को सामने रख दिया। प्रेसिडेंट पढ़ने लगा—"हिरोशिमा पर 5 अगस्त को शाम सात बजकर पन्द्रह मिनट पर बम गिरा दिया गया। 'वाशिंगटन-टाइम' की प्रथम सूचनाओं के अनुसार सफलता के संकेत मिलते हैं।"

सिधु-ओस्तागर लेन की खिड़की बंद थी। कमरे के अंदर माँ की छाती में मुँह छिपाए तब उसकी लड़की थर-थर काँप रही थी।

"माँ, मुझे बड़ा ही डर लग रहा है, माँ?"

माँ ने ढाढ़स बँधाया, "छि:, डर की क्या बात है ! यह तो बम की आवाज़ हो रही है। मुहल्ले के बदमाश लड़के बम पटक रहे हैं। कल जब डॉक्टर साहब तुम्हारी आँखों पर की पट्टी उतार देंगे तो तुम्हें डर नहीं लगेगा। तब तुम फिर रोशनी देख पाओगी।"

"वह रोशनीवाला फिर आयेगा, माँ ?"

"हाँ, जरूर ही आयेगा।"

प्रेसिडेंट ट्रूमैन डिनर खाते-खाते एकाएक बोल उठा—यह संसार के इतिहास मे महानतम घटना है।

दुनिया के इतिहास मे इससे बड़ी घटना इसके पहले कभी घटित नही हुई है।

ठीक उसी समय षष्ठीतल्ला रोड पर तब दो दलो मे बमबाजी चल रही थी। उसी सड़क पर जाते हुए लोकनाथ के सिर पर एक बम का टुकड़ा आकर लगा। लगते ही लोकनाथ तत्काल सड़क पर गिर पड़ा। उसके मुँह

से सिर्फ एक ही शब्द निकला, "उफ़ !"

लेकिन अमेरिका के प्रेसिडेंट से भी बड़ा एक प्रेसिडेंट तब तक दूसरी ही दुनिया मे एक दूसरे ही दृश्य की भूमिका निभा रहे थे। वहाँ जमीन *नही है, मृत्यु भी नही है, पुण्य भी नहीं है, शाति नही है, अशाति भी नही है।*

"प्रभो !"

अकस्मात् नै. शब्द के सागर मे जैसे एक छोटा-सा बुदबुदा जगा।

कुछ लोग निकट आकर खडे होते हैं। लोकनाथ गौर से चारों तरफ ताकता है। वह कहाँ आ गया है ! जीवन के परे भी क्या जीवन का अस्तित्व है ! बुद्धि के अगोचर में भी बोध है ! फिर यह कौन-सी दुनिया है ? इतने दिनो तमाम साहित्य का मथन करने के बाद वह ज्ञान के अन्तःस्थल में पहुँच चुका है, ऐसा उसने सोचा था। सोचा था, वह कल्याण करने के लिए पृथ्वी पर आया है। एक दिन कार्त्तिक राय ने *जिस काम की शुरुआत करने के बाद सोचा था कि वह मनुष्य का कल्याण* कर रहे है, लोकनाथ ने उसी काम को छोड़कर सोचा कि उसने उनसे भी महान् कल्याण किया है। सोचा था, उसने मनुष्य को बंधन से मुक्त किया है। संसार का हर व्यक्ति जब बंधन में ही मुक्ति की तलाश कर रहा था, तब वह बंधनहीनता मे ही मुक्ति की तलाश कर रहा था। इसलिए उसने सारी उपलब्धियों को अनुपलब्धियाँ समझकर उनका परित्याग कर दिया और परित्राण की कामना की। उसने सोचा, आराम मे ही असम्मान है, इसीलिए कीचड़, गंदगी और धूल से बचकर चलने के बजाय वह सत्य और धर्म से बचकर चलने लगा। इसीलिए वह सड़कों पर चक्कर काटता हुआ उनकी खोज कर रहा था जो प्रवंचित हैं, जो *परित्यक्त हैं, जो पराजित हैं। उन्ही प्रवचितों, परित्यक्तो और परा-*जितो मे ही अपनी सत्ता का आभास पाने के कारण भागीदार बनकर वह उनके सुख, दुख, कष्ट और यातना को जीना चाहता था। इसीलिए दूसरो के दुख को अपना दुख समझकर उनके आरोग्य के लिए उसने अपना सर्वस्व दाव पर लगा दिया था। इसीलिए तो उसने ढाई हज़ार वर्ष पहले के एक व्यक्ति की तरह ही आवृत्ति की थी—

इहासने शुष्यतु मे शरीरं।
त्वक् अस्थि मांसं प्रलयञ्च यातु ।।
अप्राप्य बोधिम् बहु कल्प दुर्लभा ।
नैवासनात् कायमतः चलिष्ये ।।

'मैं इस आसन पर बैठ रहा हूँ। जब तक मुझे बोधि प्राप्त नहीं हो जाती है, जब तक मुझे कोई शांति नहीं मिलेगी, तब तक मैं कुछ दूसरी कामना नहीं करूँगा। तब तक मेरी साधना समाप्त नहीं होगी।'

"प्रभो! इसे पष्ठीतल्ला रोड से उठा ले आया हूँ। वहाँ दो दलों में मार-पीट चल रही थी। यह उन लोगों को रोकने गया था, संघर्ष शांत करने गया था।"

सर्वशक्तिमान ने सारी बातें सुनी। एक व्यक्ति ने मुजरिम की वंश-तालिका का आद्योपांत पढ़कर सुनाया—"यह वर्धिष्णु वंश की संतान है, सुशिक्षित है। यह दूसरे-दूसरे आदमियों की भलाई करने के बहाने अपने-आपको छल रहा था।"

सर्वशक्तिमान ने पूछा, "और क्या अपराध किया है?"

"और प्रभो, इस मुजरिम के घर की दीवार पर जितने भी महापुरुषों की तसवीरें थीं, सबको इसने फ़र्श पर पटककर अपने पैरों के जूते से रौंद डाला था और उन्हें चूर-चूर कर डाला था।"

अब सर्वशक्तिमान गरज उठे, "क्यों?"

लोकनाथ बोला, "इसलिए चूर-चूर कर दिया था कि वे झूठ बोल गये थे।"

"यह क्या! मैंने उन महापुरुषों को अपनी महिमा प्रचारित करने के लिए भेजा था। और तुमने मेरे द्वारा भेजे गये संतों पर पदाघात किया?"

"हाँ, मैंने किया था? मैं स्वीकार करता हूँ कि मैंने किया था।"

"क्यों किया था? मैंने बुद्धदेव को भेजा था। ईसामसीह को भेजा था, सुकरात को भेजा था, मुहम्मद को भेजा था। मेरे द्वारा भेजे गये संतो पर तुमने विश्वास नहीं किया? तुम उन्हें मिथ्याभाषी कहते हो?"

"हाँ, कहता हूँ। इसलिए कि आपने जिस तरह बुद्धदेव, ईसामसीह,

मुहम्मद, सुकरात को भेजा था, उसी तरह तीन शैतानों को भी क्यों भेजा ?"

"तीन शैतानो को ? वे कौन-कौन हैं ?"

"ट्रूमैन, चर्चिल, स्टालिन। आपके द्वारा भेजे गये सतों को उन्होंने ही पहले अपमानित किया। उन लोगों का जो कुछ महत्त्व था, इन लोगो ने उस पर अलकतरे की कूची फेर दी। मैंने सिर्फ़ उनकी तसवीरों को जूते से मारा है, लेकिन आपके द्वारा भेजे गये शैतानों ने उन महापुरुषो का घनघोर अपमान किया है। यह बात आपको मालूम है ?"

"यह सब तुम क्या बक रहे हो ?"

"आप हिरोशिमा जाकर देख आयें कि आपके द्वारा भेजे गये शैतानों ने वहाँ क्या किया है। हिरोशिमा मे साधारण गृहस्थ रहते थे। वे सिर्फ दो जून दो मुट्ठी अन्न खाकर शाति से जीवन जीना चाहते थे। उन लोगों पर इन शैतानों ने कितना अत्याचार किया है, यह आप अपनी आँखों से जब तक न देखेंगे तब तक आपको विश्वास नहीं होगा। मुझे भी विश्वास नहीं होता, लेकिन उस अत्याचार का सही-सही ब्योरा उन्ही लोगों के मुल्क में रहने वाले आदमी लिख गये हैं। दरअसल उन लोगों ने आपको ही ब्लैकमेल किया है। मैंने उस किताब को पढ़ा है...।"

सर्वशक्तिमान की आँखों से क्रोध की चिनगारियाँ छूटने लगीं।

अत्याचार ! असम्मान ! अपमान ! ब्लैकमेल ! इन शब्दों का समूह जैसे चारों ओर प्रतिध्वनित होने लगा। लोकनाथ को लगा, दुनिया की तमाम घटनाएँ उसकी आँखों के सामने फिर से तैर रही हैं। वह फिर से कहने लगा, "और आपने क्या यही सोचा है कि हिरोशिमा में ही इसका प्रारंभ और अंत दोनों हैं ? चेकोस्लोवाकिया में भी क्या यही ब्लैकमेल नहीं हुआ है ? वीएतनाम मे भी इस ब्लैकमेल की पुनरावृत्ति नही हुई है ? और वह जो हम लोगों के पड़ोस मे बाँगलादेश है, वहाँ भी आपके शैतानों ने आपका नाम लेकर आपको ब्लैकमेल नही किया है ? मैंने क्या उन लोगो से अधिक अपराध किया है कि आप मुझे दंड देने के लिए यहाँ ले आये है ? इस हिरोशिमा की घटना को ही देखकर जनरल आइज़नहावर ने कहा था—परमाणु बम का यह विस्फोट इतना भयानक और विनाशकारी है कि

संभवतया भविष्य में युद्ध असंभव हो जायेगा। शायद यह ब्लैकमेल करके संसार को शांति की ओर धकेल देगा।

"लेकिन उस हिरोशिमा के बाद उस घटना की पुनरावृत्ति चेकोस्लोवाकिया में क्यों हुई? क्यों वही घटना पड़ोस के देश बांगलादेश में घटित हो रही है? आप इसकी कैफियत दें।"

सर्वशक्तिमान क्रोध से कांपने लगे।

लोकनाथ फिर भी चुप नहीं हुआ। उसी आवाज़ में वह फिर से कहने लगा, "और मैंने? मैंने क्या किया है, इसका भी जवाब देता हूँ। आपने कुछ लोगों को गुलाम बनाकर धरती पर भेजा था। उनमें से कुछ को क्लर्क बनाकर, कुछ को टाइपिस्ट बनाकर और कुछ को पियन बनाकर भेजा था। उनमें से किसी को अस्सी रुपये, किसी को डेढ सौ, किसी को ढाई सौ और किसी को तीन सौ मिलते थे। हो सकता है कि उन्हीं पैसों से वे जिन्दगी गुजार देते। मैंने उन लोगों को मालिक बना दिया है। अब बताइये! अपनी कंपनी के इक्यावन प्रतिशत शेयर मैंने कर्मचारियों को बांट दिये है। अब वे ही लोग उस कंपनी के मालिक हैं। इसके लिए मैं आपसे कोई वाह वाही नहीं चाहता हूँ। और आपने जिस विज्ञान की सृष्टि की है, वह आदमी की भलाई के लिए है या उसका सर्वनाश करने के लिए? मैं एक अंधी लड़की को रोशनी देना चाहता था। अपने विशाल घर को सस्ते में बेचकर मैंने उस पैसे से उस लड़की का एक विदेशी डॉक्टर से ऑपरेशन कराया था। लेकिन उसकी आंखें कहां अच्छी हुई? वह पहले से ज्यादा अंधी हो गयी। पहले उसकी आंखें धुंधली रोशनी देख लेती थी, अब वह भी नहीं देख पाती हैं। अब भी वह अपने रोशनीवाले की प्रतीक्षा में खिड़की के किनारे बैठी रहती है। रोशनीवाला आता है मगर उसे अब इसका पता क्यों नहीं चलता है? वह और भी ज्यादा अंधी क्यों हो गयी? यह भी क्या मेरा ही अपराध है? आपके द्वारा भेजे गये शैतानों ने जो पाप किये है उसका दंड मैं भोगूं और भोगें मेरे जैसे तमाम साधारण आदमी? आपका यही विधान है? आपका यही न्याय है? इसी का नाम क्या 'डिवाइन जस्टिस' है?"

अब सर्वशक्तिमान अपने-आपको ज़ब्त करके नहीं रख सके। एका-

एक रोष और क्षोभ से तीव्र गर्जन करने लगे । इस गर्जन से संपूर्ण ब्रह्माण्ड थर-थर कांपने लगा ।

"चुप रहो !"

लोकनाथ भी गरज उठा, "चुप क्यों रहूँ ? मैंने क्या किया है जो मैं चुप रहूँ ? मेरा क्या अपराध है ?"

सर्वशक्तिमान ने कहा, "अच्छा क्या है और बुरा क्या है, इसका विचार इतिहास करेगा । मैंने संत और शैतान दोनों को भेजा है ।"

लोकनाथ ने उन्हें टोकते हुए कहा, ' मैं यह सब बुर्जुवा तकरीरें नहीं सुनना चाहता...।"

"तुम्हें सुनना होगा।"

'नहीं, मैं नहीं सुनूंगा।"

"सुनो !"

चारों ओर से कई व्यक्तियों ने आकर लोकनाथ को कसकर पकड़ लिया । अब उसमें हिलने-डुलने तक की ताकत नहीं रह गयी थी ।

"तुम्हारा सबसे बड़ा दोष यही है कि तुमने आस्था खो दी है ।"

"आस्था ?...आस्था किस पर ?"

"अपने माता-पिता, अपने अतीत, अपने वर्तमान, अपने भविष्य, अपने देश, अपनी जाति, अपने समाज, अपनी संस्कृति पर...।"

"आस्था अगर खो दी है तो इसके लिए क्या मैं जिम्मेदार हूँ ?"

"हाँ, तुम्हीं हो । मेरी यह विशाल विश्वसृष्टि है, मैंने अपने हाथों से इसकी विशाल पांडुलिपि तैयार की है, इसके अंतिम पृष्ठ पर मैंने सारा विधान लिख दिया है । इसको देखने के पहले तुम मेरे प्रति न्याय करने वाले कौन होते हो ?"

उसके बाद वायुमण्डल में एकाएक आंधी चलने लगी । उस आंधी से संपूर्ण इहलोक-परलोक कांप उठे । सर्वशक्तिमान चिल्ला उठे, "जाओ, दूर जाओ !"

तब भी ट्रेन के हावड़ा स्टेशन पहुँचने में देर थी । मन में बड़ी ही अशांति

मँडराने लगी। आखिरी पन्ना नहीं मिला। आखिरी पन्ना मिल जाता तो ठीक-ठीक जानकारी प्राप्त हो जाती। लेकिन ठीक-ठीक खबर ही किससे पूछूँ ?

गाड़ी से आते-जाते मैंने बहुत बार देखा था, लोकनाथ कभी बड़े रास्ते से होकर, कभी गली से होकर कंधे पर झोला लटकाये चल रहा है। बहुत बार उसे ज़बरदस्ती गाड़ी पर बिठाया था। बहुत बार वह बैठने के लिए तैयार नहीं हुआ था। कहता था, "धुत, मैं पैदल ही चला जाऊँगा।"

इसी तरह पैदल चलता हुआ वह कभी खिदिरपुर के मानसतल्ला-लेन के एक मेस में जाता था। वहाँ वह रेलवे के साधारण किरानियों से हिलता-मिलता था। फिर वह कभी जादूगोपाल की पकौड़ी की दुकान में जाता था। फिर कभी-कभी बेलगछिया के निमाई-शा की चाय की दुकान में। और फिर कभी-कभी बराहनगर के सिधु-ओस्तागर लेन के एक-मंज़िले मकान में। उससे मैंने बहुत बार कहा था—आज के ज़माने में इस तरह सड़कों पर अकेले चहल-क़दमी करना ठीक नहीं है। लेकिन वह किसी की बात माने तब न ! न केवल मैंने बल्कि विकास ने भी उससे बहुत बार कहा था। और न केवल हमने ही मना किया था बल्कि उसकी नानी अम्मा ने भी उससे कहा था।

एकाएक कोन्नार में गाड़ी आकर रुकी।

हम लोग कई मुसाफ़िर इधर-उधर ताकने लगे। एक आदमी गाड़ी से उतरकर बाहर गया और किसी से पूछा, "बात क्या है, जनाब ?"

उसे जो खबर मिली, अन्दर आकर उसने हमें बताया।

हमने पूछा, "कुछ पता चला ?"

उस भले आदमी ने कहा, "सर्वनाश हो गया है, जनाब ! बाली स्टेशन में फ़ायरिंग हो रही है। मिलिटेरी ने आकर बीसेक आदमियों को मार डाला है।"

हमने पूछा, 'क्या हुआ था ?"

उस भले आदमी ने बताया, "पता नहीं, क्या हुआ था। और होगा ही क्या साहब, कलकत्ता में हर रोज जो हुआ करता है, वही हुआ है। हमले...!"

"फिर गाड़ी कब जायेगी ?"

वह भला आदमी हँसता हुआ बोला, "इसके बारे में सिर्फ़ ईश्वर ही बता सकता है—वही ईश्वर जो हम लोगों के सिर के ऊपर रहता है...।"

अब हम क्या करें ? हम सभी चिंता में डुबकियाँ लगाने लगे। लेकिन मेरे मन में आया, ट्रेन अगर न चले तो हानि ही क्या है ? आज अगर ट्रेन कोन्नार में ही रुकी रहे तो हानि ही क्या है ? यह क्या ज़रूरी है कि हर चीज़ का अंत हो ही ! पथ का अंत कहाँ होता है ? इसका भी अंत नहीं है कि अंतिम बात कौन कहे। जीवन का ही क्या अंत है ? मृत्यु का भी तो कोई अंत नहीं है। जिस तरह जीवन के बाद इहजीवन है और उसके बाद महाजीवन, उसी तरह थीसिस के बाद एन्टिथीसिस है, एन्टिथीसिस के बाद सिनथीसिस। यह तो साइकल है, सर्कल है, वृत्त है। वृत्त का भी तो कोई अंत नहीं होता है। क्यों मैं व्यर्थ ही आखिरी पन्ने के लिए शोरगुल मचाये हुआ हूँ ! मंदिर में देवता के दर्शन करने के लिए अवश्य ही पहली सीढ़ी के बाद एक-एक कर बाकी सीढ़ियों को तय कर अंतिम सीढ़ी पर पहुँचना पड़ता है। लेकिन कला के देवता के विषय में यह नियम लागू नहीं है। कहा जा सकता है कि उसके कोई नियम-क़ानून नहीं है। तुम बीच रास्ते से आरंभ कर सकते हो और फिर अंत से भी आरंभ कर सकते हो। समाचार-पत्रों के लिए आखिरी पन्ना जितना सत्य है, जीवन की कला के लिए आखिरी पन्ना उतना ही असत्य है। कला का देवता कहता है—आरंभ के पहले भी जिस तरह आरंभ का अस्तित्व है, उसी तरह अंत के परे भी अंत है। यानी आरंभ आरंभ नहीं है, अंत भी अंत नहीं है—मात्र बीच का यह जीवन एक महान् कला-कृति है। यह बात मैंने अपनी एक कहानी में भी लिखी है और हम लोगों का यह लोकनाथ भी उसी तरह का जीवन-कलाकार है।

आज इतने दिनों के बाद यही सोच रहा हूँ—वह लोकनाथ कहाँ गया ! वह लोकनाथ राय, जिस लोकनाथ के साथ हम एक ही क्लास में पढ़े हैं ! और जादूगोपाल ? वह जादूगोपाल अब पहले का जादू-गोपाल नहीं है। वह पकौड़ी की दुकान भी अब पहले की पकौड़ी की

दुकान नहीं। उस दुकान के अंदर अब ठर्रा बिकता है। अंदर जाकर लोग ठर्रा पी सकें, इसके लिए जगह तैयार कर दी गयी है। और मान-सतल्ला लेन का मेस? वहां बाबू लोग घुड़दौड़ के घोड़ों के बारे में ग्यारह-बारह बजे रात तक रिसर्च करते हैं। और निमाई-दा? निमाई-दा ने दुकान को और भी बढ़ा-चढ़ा लिया है। कहीं से लड़के-लड़कियों के जोड़े उसके अन्दर आते हैं और सामने के परदों को खींच देते हैं। और सिथि में? काफी रात ढल चुकने के बाद सरजू एक विशाल गाड़ी से सिथि आती है और लड़खड़ाते क़दमों से नीचे उतरती है। सरजू यानी सरजू सिकदार। घर के अंदर आते ही बाप अपनी लड़की के सिर पर बालटी-पर-बालटी पानी डालते हैं ताकि उसका नशा दूर हो जाये।

ये सब घटनाएँ हर रोज घटित होती है।

लेकिन सबसे मर्मवेधी घटना सिधु-ओस्तगार लेन के एक-मंजिले मकान की खिड़की पर घटित होती है। वहां हर रोज की तरह छपरा ज़िले का कालिकाप्रसाद झा सीढ़ी लगाकर लैंप-पोस्ट पर चढ़ता है। दियासलाई से बत्ती जलाते ही वह स्थान रोशनी से जगमगाने लगता है। लेकिन खिड़की पर बैठी वकुल को कुछ भी पता नहीं चलता है। उसकी आंखों में अब-सब कुछ धुंधला है, सब अंधेरा ही अंधेरा। वह हर शाम खिड़की पर उसी तरह बैठी रहती है। पहले की तरह ही रोशनीवाले का इंतज़ार करती है। पहले की तरह ही उसकी मां उसे वहां बिठा जाती है। लेकिन रोशनीवाला कब आता है और कब वह रोशनी जला-कर चला जाता है, उसकी आहट उसे नहीं मिलती है। उसकी आंखों में पहले जो थोड़ी-सी रोशनी थी, आधुनिक यंत्र-सभ्यता उसे भी छीनकर ले गयी है। उसकी आंखों से रोशनी के अंतिम बिंदु तक को पोंछकर उसे जैसे निष्प्राण बना दिया है। लेकिन उसकी रोशनी की प्यास उससे कोई छीन नहीं पाया है। इसीलिए वकुल अपनी मां से केवल इतना ही पूछती रहती है, "रोशनीवाला क्यों नहीं आया, मां? रोशनीवाला कब आयेगा?"

• •